दिसंबर, 2022
ISSN-2457-0494

उच्चतम न्यायालय
निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

प्रधान संपादक

श्री कमला कान्त

संपादक

श्री अविनाश शुक्ला
श्री असलम खान
श्री पुण्डरीक शर्मा

उप-संपादक

श्री महीपाल सिंह
श्री जसवन्त सिंह
श्री जाहन्वी शेखर शर्मा
श्री अमर्त्य हेम विप्र पाण्डेय

ISSN-2457-0494

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 195/-

वार्षिक : ₹ 2,100/-

© 2022 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0494

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

दिसंबर, 2022 अंक - 12

प्रधान संपादक
कमला कान्त

संपादक
अविनाश शुक्ला

[2022] 4 उम. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
Online selling of law Patrikas/Books is available on
Website → https://bharatkosh.gov.in/product/product

विक्रय कार्यालय : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001. दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका प्रतिमाह आपके अवलोकनार्थ उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित प्रतिवेद्य निर्णय, जो न्यायाधीशों, अधिवक्ताओं, विधि छात्रों और अकादमीशियनों के लिए महत्वपूर्ण होते हैं, का प्रकाशन करता है । आप लोगों से प्राप्त सुझावों के आधार पर हमको अपनी पत्रिका की गुणवत्ता सुधारने और अपने कार्य को और अधिक निखारने की शक्ति प्राप्त होती है । कृपया अपने अमूल्य सुझावों से हमें अवगत कराते रहें और हमारा मार्गदर्शन करते रहें ।

इस अंक के माध्यम से आपके अवलोकनार्थ माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **भारतीय स्टेट बैंक** बनाम **अरविन्द्र इलेक्ट्रॉनिक्स प्राइवेट लिमिटेड** [2022] 4 उम. नि. प. 319 वाले मामले में तारीख 4 नवंबर, 2022 को पारित महत्वपूर्ण निर्णय प्रस्तुत किया जा रहा है । इस मामले में बैंक द्वारा उधार लेने वाले/प्रत्यर्थी को नकद उधार की रकम प्रदान किया जाना मंजूर किया गया था । प्रत्यर्थी द्वारा उधार की रकम का संदाय न किए जाने पर बैंक द्वारा प्रत्यर्थी के खाते को अपालन आस्ति (एनपीए) के रूप में वर्गीकृत कर दिया गया । तत्पश्चात् बैंक ने एकबारगी निपटान योजना (ओटीएस) की घोषणा की । प्रत्यर्थी ने एकबारगी निपटान योजना के अंतर्गत अधिशेष रकम का संदाय स्वीकार करते हुए इस योजना के अंतर्गत भागत: रकम का संदाय किया और शेष रकम का संदाय एकबारगी निपटान योजना में विनिर्दिष्ट अवधि के भीतर नहीं किया और शेष रकम के संदाय के लिए और अधिक समय की मांग की । बैंक ने अधिक समय प्रदान करने के लिए प्रस्तुत किए गए आवेदन को नामंजूर कर दिया । प्रत्यर्थी ने बैंक द्वारा अधिक समय प्रदान न किए जाने के निर्णय से व्यथित होकर उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिका फाइल की । उच्च न्यायालय ने शेष रकम के संदाय के लिए प्रत्यर्थी को अतिरिक्त समय प्रदान कर दिया, जिससे व्यथित होकर बैंक ने उच्चतम न्यायालय के समक्ष रिट याचिका फाइल की । उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि ऐसे मामलों, जिनमें उधार लेने वाले द्वारा किसी बैंक/वित्तीय

संस्थान द्वारा मंजूर एकबारगी निपटान योजना (ओटीएस स्कीम) में विनिर्दिष्ट समयावधि के भीतर संपूर्ण रकम का संदाय न किया हो, तो ऐसे मामले में वह शेष रकम के संदाय के लिए अधिकारपूर्वक समय विस्तार का दावा नहीं कर सकता और ऐसा केवल तभी किया जा सकता है, जब उधार लेने वाले और बैंक के मध्य इस बाबत पारस्परिक सहमति बन गई हो । इस प्रकार उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया कि उच्च न्यायालय द्वारा अनुच्छेद 226 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए एकबारगी निपटान योजना (ओटीएस स्कीम) के अंतर्गत अतिरिक्त समय प्रदान किए जाने को न्यायोचित नहीं ठहराया जा सकता ।

इस अंक में पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 को भी ज्ञानार्थ प्रकाशित किया जा रहा है । इस संपूर्ण अंक का परिशीलन करने के पश्चात् आपकी बहुमूल्य प्रतिक्रियाएं ईप्सित हैं ।

अविनाश शुक्ला
संपादक

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

दिसंबर, 2022

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
कालीचरण और अन्य **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य	428
टी. पी. गोपालकृष्णन् **बनाम** केरल राज्य	391
प्रमोद सिंह किराड़ **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य और एक अन्य	335
भारतीय स्टेट बैंक **बनाम** अरविन्द्र इलेक्ट्रॉनिक्स प्रा. लि.	319
राजाराम **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य और अन्य	454
सुखपाल सिंह खैरा **बनाम** पंजाब राज्य	344

संसद् के अधिनियम

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ 1 - 18

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2)

– धारा 213 और धारा 313 – अभियुक्तों के विरुद्ध विरचित आरोप में अपराध कारित करने की रीति का उल्लेख न किया जाना और उनकी परीक्षा करने के दौरान अपराध में आलिप्त करने वाली सभी परिस्थितियों को न बताया जाना – प्रभाव – जहां अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप में यह अभिकथन किया गया हो कि मृतक की मृत्यु अभियुक्तों में से एक अभियुक्त द्वारा पिस्तौल से चलाई गई गोलियों के कारण हुई थी जबकि अभियुक्तों के विरुद्ध अभिलेख पर साक्ष्य और मृतक की मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट में उल्लेख किया गया हो कि मृतक की मृत्यु धारदार आयुधों से कारित क्षतियों के कारण हुई थी और अभियुक्तों की धारा 313 के अधीन परीक्षा के दौरान उन्हें मृतक की मृत्यु गोलियों से पहुंची क्षतियों के कारण होना बताया गया हो, वहां विरचित आरोप न केवल भ्रामक होने अपितु अभियुक्तों के विरुद्ध साक्ष्य में प्रकट होने वाली महत्वपूर्ण परिस्थितियों को उन्हें न बताने से उन पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने और उचित रूप से अपनी प्रतिरक्षा करने का अवसर न मिलने के कारण उनकी दोषसिद्धि को कायम रखना न्यायोचित नहीं होगा ।

कालीचरण और अन्य बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** 428

– धारा 319 – अपराध के दोषी प्रतीत होने वाले अन्य व्यक्तियों के विरुद्ध कार्यवाही करने की शक्ति – अतिरिक्त अभियुक्त को समन करने का प्रक्रम – जहां पहले से विचारण किए जा रहे अन्य अभियुक्तों के विरुद्ध

पृष्ठ संख्या

दोषसिद्धि का निर्णय सुनाया गया हो, वहां धारा 319 के अधीन शक्ति का प्रयोग दंडादेश का आदेश सुनाए जाने से पूर्व और दोषमुक्ति की दशा में इस शक्ति का प्रयोग दोषमुक्ति का आदेश सुनाए जाने से पूर्व किया जाना चाहिए किंतु दोषसिद्धि की दशा में यदि दंडादेश का निर्णय उसी दिन पारित किया गया है तो इसकी परीक्षा प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर की जानी होगी और यदि ऐसा समन आदेश दोषमुक्ति के आदेश के पश्चात् या दोषसिद्धि की दशा में दंडादेश अधिरोपित करने के पश्चात् किया जाता है तो वह संधार्य नहीं होगा ।

सुखपाल सिंह खैरा बनाम **पंजाब राज्य** 344

– धारा 319 – अपराध के दोषी प्रतीत होने वाले अन्य व्यक्तियों के विरुद्ध कार्यवाही करने की शक्ति – जहां किसी अपराध के फरार अभियुक्तों के विरुद्ध विचारण को विभाजित (द्विविभाजित) किया गया हो और बाद में उनकी उपस्थिति सुनिश्चित करने के पश्चात् कार्यवाही चल रही हो/लंबित हो, तो वहां विचारण न्यायालय को अतिरिक्त अभियुक्तों को समन करने की शक्ति तब है जब द्विविभाजित किए गए विचारण में अभिलिखित किए गए साक्ष्य से समन किए जाने वाले अभियुक्तों की अपराध में अंतर्ग्रस्तता इंगित होती हो, किंतु यदि ऐसी शक्ति का प्रयोग मुख्य विचारण के समाप्त होने से पूर्व न किया गया हो तो मुख्य विचारण में अभिलिखित किए गए साक्ष्य के आधार पर ऐसा समन आदेश नहीं किया जा सकता ।

सुखपाल सिंह खैरा बनाम **पंजाब राज्य** 344

पृष्ठ संख्या

संविधान, 1950

– अनुच्छेद 20(2) [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 300] – दोहरे संकट के विरुद्ध संरक्षण – अपीलार्थी-अभियुक्त द्वारा कृषि अधिकारी के रूप में कार्य करते हुए धन का दुर्विनियोजन किया जाना – अपीलार्थी को अभियोजित किया जाना और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(1)(ग) के साथ पठित धारा 13(2) तथा दंड संहिता की धारा 409 के अधीन दोषसिद्ध तथा दंडादिष्ट किया जाना – बाद में की गई पुन: लेखापरीक्षा के आधार पर अपीलार्थी को उसी अवधि और उन्हीं तथ्यों के आधार पर पुन: अभियोजित किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना तथा उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किया जाना – संधार्यता – अभिलेख पर के तथ्यों से यह पाए जाने पर कि अपीलार्थी-अभियुक्त द्वारा किए गए अपराध के लिए उसके विरुद्ध पूर्ववर्ती मामलों में लगाए गए आरोप और वर्तमान मामलों में लगाए गए आरोप उसी अपराध और उसी अवधि और उन्हीं तथ्यों से संबंधित हैं, तो दोहरे संकट के सिद्धांत को लागू करते हुए वर्तमान मामलों में निचले न्यायालयों द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट करते हुए पारित किए गए निर्णयों को कायम नहीं रखा जा सकता और यदि वर्तमान मामलों के अपराधों को भिन्न अपराध मान भी लिया जाए तो भी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा300(2) के अधीन राज्य सरकार की पूर्व सम्मति अभिप्राप्त करने में असफल रहने के कारण वर्तमान विचारण अविधिपूर्ण था ।

टी. पी. गोपालकृष्णन् बनाम **केरल राज्य** 391

पृष्ठ संख्या

– अनुच्छेद 226 – रिट याचिका – बैंक द्वारा प्रत्यर्थी को नकद उधार मंजूर किया जाना – उधार का संदाय न करने पर बैंक द्वारा उधार लेने वाले के लेखा को अपालन आस्ति (एनपीए) के रूप में वर्गीकृत किया जाना – बैंक द्वारा एकबारगी निपटान स्कीम (ओटीएस स्कीम) लाया जाना – बैंक द्वारा उधार लेने वाले-प्रत्यर्थी को ओटीएस स्कीम की प्रस्थापना किया जाना जिसे प्रत्यर्थी द्वारा स्वीकार करते हुए भागत: संदाय किया जाना – प्रत्यर्थी-उधार लेने वाले द्वारा शेष रकम का ओटीएस स्कीम में विनिर्दिष्ट अवधि में संदाय न किया जाना और समय-विस्तार के लिए निवेदन किया जाना – बैंक द्वारा समय-विस्तार के लिए निवेदन को नामंजूर किया जाना – उधार लेने वाले द्वारा उच्च न्यायालय में रिट याचिका फाइल किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा उधार लेने वाले को अतिशेष रकम का संदाय करने के लिए अतिरिक्त समय-विस्तार प्रदान किया जाना – संधार्यता – जहां उधार लेने वाले द्वारा किसी बैंक/वित्तीय संस्थान द्वारा मंजूर ओटीएस स्कीम में विनिर्दिष्ट समय के भीतर ओटीएस के अधीन स्थिर की गई रकम का संदाय न किया गया हो, वहां वह अतिशेष रकम का संदाय करने के लिए अधिकार के रूप मे समय-विस्तार का दावा नहीं कर सकता और ऐसा केवल पारस्परिक सहमति के आधार पर किया जा सकता है, इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा अनुच्छेद 226 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए ओटीएस स्कीम से असंबद्ध अतिरिक्त समय-विस्तार प्रदान करना न्यायोचित नहीं कहा जा सकता ।

भारतीय स्टेट बैंक बनाम **अरविन्द्र इलेक्ट्रॉनिक्स प्रा. लि.** 319

पृष्ठ संख्या

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1)

– धारा 32 [सपठित भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 498क] – मृत्युकालिक कथन – विपदग्रस्त-मृतका को जली हुई हालत में उसके पति (अपीलार्थी) द्वारा अस्पताल लाया जाना – मृतका द्वारा अपनी मृत्यु से पूर्व दो मृत्युकालिक कथन किया जाना – तहसीलदार द्वारा अभिलिखित किए गए पहले कथन में अपने पति को अभियुक्त के रूप में नामित न किया जाना किंतु पुलिस अधिकारी द्वारा अभिलिखित किए गए दूसरे मृत्युकालिक कथन में अन्य अभियुक्तों के साथ पति को भी नामित किया जाना – पति-अपीलार्थी को अन्य अभियुक्तों के साथ धारा 498क के अधीन दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – अपील में उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि की अभिपुष्टि किया जाना किंतु मृतका के दूसरे मृत्युकालिक कथन को त्यक्त किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा मृतका के दूसरे मृत्युकालिक कथन को त्यक्त कर दिए जाने और अपीलार्थी की दोषसिद्धि को संधार्य रखने लिए कोई अन्य सामग्री न होने के कारण उसकी दोषसिद्धि को कायम नहीं रखा जा सकता ।

राजाराम बनाम **मध्य प्रदेश राज्य और अन्य** 454

सेवा विधि

– अपीलार्थी द्वारा पुलिस कांस्टेबल के पद के लिए आवेदन किया जाना – उसके द्वारा सत्यापन प्ररूप में पूर्व में भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध के लिए विचारण किए जाने और बाद में दोषमुक्त किए

पृष्ठ संख्या

जाने का प्रकटीकरण किया जाना – नियोजक द्वारा उसकी अभ्यर्थिता को नामंजूर किया जाना – उच्च न्यायालय के समक्ष फाइल की गई रिट याचिका में एकल न्यायाधीश द्वारा उसकी अभ्यर्थिता के रद्दकरण को अपास्त किया जाना और पचास प्रतिशत पिछले वेतन के साथ सभी पारिणामिक फायदों सहित नियुक्त किए जाने का निदेश दिया जाना – उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा राज्य की रिट अपील को मंजूर किया जाना और एकल न्यायाधीश के निर्णय को अपास्त किया जाना – उच्चतम न्यायालय में अपील – अभ्यर्थी-अपीलार्थी द्वारा सत्यापन प्ररूप में कोई तात्विक तथ्य न छिपाए जाने और वर्ष 2001 में हुए वैवाहिक विवाद की परिणति पति-पत्नी के बीच न्यायालय के बाहर हुए समझौते के कारण वर्ष 2006 में दोषमुक्ति में हो जाने पर बहुत बाद में वर्ष 2013/2014 में अपीलार्थी को नियुक्ति से इनकार करना मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए न्यायोचित नहीं कहा जा सकता, तथापि, काम नहीं तो वेतन नहीं के सिद्धांत के आधार पर अपीलार्थी वास्तविक नियुक्ति की तारीख से सभी फायदों का हकदार होगा ।

प्रमोद सिंह किराड़ बनाम **मध्य प्रदेश राज्य और एक अन्य** 335

तुलनात्मक सारणी

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

[2022] 4 उम. नि. प.

अक्तूबर-दिसंबर, 2022

क्र. सं.	**निर्णय का नाम व तारीख**	**उम. नि. प.**		**ए. आई. आर. (एस. सी.)**		**एस. सी. सी.**	
1	2	3		4		5	
1.	कंचन कुमार **बनाम** बिहार राज्य (14 सितंबर, 2022)	[2022] 4	1	2022	4288	(2022) 9	577
2.	ललनकुमार सिंह और अन्य **बनाम** महाराष्ट्र राज्य (11 अक्तूबर, 2022)		19		5151	–	–
3.	मरिनो एंटो ब्रुनो और एक अन्य **बनाम** पुलिस निरीक्षक (12 अक्तूबर, 2022)		44		4994	–	–
4.	राज्य मार्फत पुलिस निरीक्षक **बनाम** लाली **उर्फ** मणिकंदन और एक अन्य, इत्यादि (14 अक्तूबर, 2022)		76		–	–	–

1	2	3			4			5		
5.	गुरमेल सिंह और एक अन्य **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य (17 अक्तूबर, 2022)	[2022]	4	90	2022		5258	(2022)	10	684
6.	झारखंड राज्य **बनाम** शैलेन्द्र कुमार राय उर्फ पांडव राय (31 अक्तूबर, 2022)			114			5393		–	–
7.	सुब्रमण्य **बनाम** कर्नाटक राज्य (13 अक्तूबर, 2022)			153			5110		–	–
8.	एस. कलीस्वर्ण **बनाम** राज्य मार्फत पुलिस निरीक्षक, पोल्लाची टाउन ईस्ट पुलिस स्टेशन, जिला कोयम्बटूर, तमिलनाडु (3 नवंबर, 2022)			237			5535		–	–
9.	राहुल **बनाम** दिल्ली राज्य, गृह मंत्रालय और एक अन्य (7 नवंबर, 2022)			256			5661		–	–
10.	भूरी बाई **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य (11 नवंबर, 2022)			307			–		–	–
11.	भारतीय स्टेट बैंक **बनाम** अरविन्द्र इलेक्ट्रॉनिक्स प्रा. लि. (4 नवंबर, 2022)			319			–	(2023)	1	540

1	2	3			4	5	
12.	प्रमोद सिंह किराड़ **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य और एक अन्य (2 दिसंबर, 2022)	[2022] 4	335	2023	–	(2023) 1	423
13.	सुखपाल सिंह खैरा **बनाम** पंजाब राज्य (5 दिसंबर, 2022)		344		1	1	289
14.	टी. पी. गोपालकृष्णन् **बनाम** केरल राज्य (8 दिसंबर, 2022)		391		–	(2022) 14	323
15.	कालीचरण और अन्य **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य (14 दिसंबर, 2022)		428		63	(2023) 2	583
16.	राजाराम **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य और अन्य (16 दिसंबर, 2022)		454		–	–	–

[2022] 4 उम. नि. प. 319

भारतीय स्टेट बैंक

बनाम

अरविन्द्र इलेक्ट्रॉनिक्स प्रा. लि.

[2022 की सिविल अपील सं. 6954]

4 नवंबर, 2022

न्यायमूर्ति एम. आर. शाह और न्यायमूर्ति कृष्ण मुरारी

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 – रिट याचिका – बैंक द्वारा प्रत्यर्थी को नकद उधार मंजूर किया जाना – उधार का संदाय न करने पर बैंक द्वारा उधार लेने वाले के लेखा को अपालन आस्ति (एनपीए) के रूप में वर्गीकृत किया जाना – बैंक द्वारा एकबारगी निपटान स्कीम (ओटीएस स्कीम) लाया जाना – बैंक द्वारा उधार लेने वाले प्रत्यर्थी को ओटीएस स्कीम की प्रस्थापना किया जाना जिसे प्रत्यर्थी द्वारा स्वीकार करते हुए भागत: संदाय किया जाना – प्रत्यर्थी-उधार लेने वाले द्वारा शेष रकम का ओटीएस स्कीम में विनिर्दिष्ट अवधि में संदाय न किया जाना और समय-विस्तार के लिए निवेदन किया जाना – बैंक द्वारा समय-विस्तार के लिए निवेदन को नामंजूर किया जाना – उधार लेने वाले द्वारा उच्च न्यायालय में रिट याचिका फाइल किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा उधार लेने वाले को अतिशेष रकम का संदाय करने के लिए अतिरिक्त समय-विस्तार प्रदान किया जाना – संधार्यता – जहां उधार लेने वाले द्वारा किसी बैंक/वित्तीय संस्थान द्वारा मंजूर ओटीएस स्कीम में विनिर्दिष्ट समय के भीतर ओटीएस के अधीन स्थिर की गई रकम का संदाय न किया गया हो, वहां वह अतिशेष रकम का संदाय करने के लिए अधिकार के रूप में समय-विस्तार का दावा नहीं कर सकता और ऐसा केवल पारस्परिक सहमति के आधार पर किया जा सकता है, इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा अनुच्छेद 226 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए ओटीएस स्कीम से असंबद्ध अतिरिक्त समय-विस्तार प्रदान करना न्यायोचित नहीं कहा जा सकता ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि भारतीय स्टेट बैंक द्वारा प्रत्यर्थी-अरविन्द्र इलेक्ट्रॉनिक्स प्रा. लि. (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'उधार लेने वाला' कहा गया है) के पक्ष में वर्ष 2012 में एक नकद उधार मंजूर किया गया था । वर्ष 2015 में उधार लेने वाले के लेखा को अपालन आस्ति (एनपीए) के रूप में वर्गीकृत किया गया था । बैंक तारीख 1 सितंबर, 2017 को एकबारगी निपटान स्कीम (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'ओटीएस स्कीम' कहा गया है) लेकर आया । ओटीएस स्कीम में विनिर्दिष्ट रूप से उपबंध किया गया था कि ओटीएस स्कीम के अधीन स्थिर किए गए अनुसार मंजूरी की तारीख से छह माह के भीतर संदाय करना होगा, अन्यथा वह निष्फल हो जाएगी । बैंक ने उधार लेने वाले को ओटीएस के लिए ओटीएस प्रस्थापना भेजी । उधार लेने वाले ने ओटीएस प्रस्थापना स्वीकार की और कतिपय रकम का संदाय किया । मंजूर की गई ओटीएस के अधीन उधार लेने वाले के लिए तारीख 21 दिसंबर, 2017 तक ओटीएस रकम का 25 प्रतिशत जमा करना और अतिशेष रकम को पत्र की तारीख से ब्याज सहित तारीख 21 मई, 2018 तक जमा किया जाना अपेक्षित था । उधार लेने वाले को यह भी सूचित किया गया था कि ओटीएस के अधीन अनुबंधित समय के भीतर पूर्वोक्त रकम का संदाय न करने पर ओटीएस निष्फल हो जाएगा । उधार लेने वाले ने अतिशेष रकम का प्रतिसंदाय करने के लिए 8 से 9 माह के समय-विस्तार के लिए निवेदन किया । बैंक ने 9 माह के समय-विस्तार के निवेदन को अस्वीकार कर दिया और उधार लेने वाले को तारीख 21 मई, 2018 तक अतिशेष रकम का संदाय करने का निदेश दिया । उधार लेने वाले ने व्यथित होकर बकाया रकम का संदाय करने के लिए 8 से 9 माह के समय-विस्तार के लिए उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिका फाइल की । उसके पश्चात् बैंक द्वारा कई ओटीएस स्कीम चलाई गईं और उधार लेने वाले को इनकी प्रस्थापना की गई किंतु उधार लेने वाले द्वारा इन स्कीमों को नहीं चुना गया । उच्च न्यायालय द्वारा उधार लेने वाले को अतिरिक्त छह सप्ताह का समय प्रदान किया गया । ओटीएस स्कीम के अधीन अतिशेष रकम का संदाय करने के लिए उधार लेने वाले को छह सप्ताह का अतिरिक्त समय प्रदान करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए निर्णय और आदेश से

व्यथित और असंतुष्ट होकर बैंक द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – तारीख 21 नवंबर, 2017 के मंजूरी पत्र में विनिर्दिष्ट रूप से यह उपबंधित था कि संपूर्ण संदाय तारीख 21 मई, 2018 तक किया जाए । किस्तों में संदाय करने की अनुसूची का भी उल्लेख किया गया था । यह एक स्वीकृति स्थिति है कि उधार लेने वाले ने मंजूर ओटीएस स्कीम के अधीन शोध्य और संदेय रकम का मंजूरी पत्र में वर्णित तारीख को या उससे पूर्व संदाय नहीं किया था । नौ माह के समय-विस्तार के लिए उधार लेने वाले के निवेदन को बहुत पहले तारीख 16 मई, 2018 को नामंजूर कर दिया गया था और उधार लेने वाले को तारीख 21 मई, 2018 तक 2.52 करोड़ रुपए का संदाय करने का निदेश दिया गया था किंतु उधार लेने वाला संदाय करने में असफल रहा । इस प्रक्रम पर, यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान बैंक द्वारा कुल मिलाकर तीन विभिन्न ओटीएस स्कीम चलाई गई थीं और बैंक ने प्रत्यर्थी-उधार लेने वाले को ओटीएस स्कीम के अधीन बकाया रकम का निपटान करने की प्रस्थापना की थी । तथापि, उधार लेने वाले ने किसी स्कीम को नहीं चुना । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा तारीख 10 मार्च, 2022 से छह सप्ताह का अतिरिक्त समय प्रदान किया था जो यहां तक कि उधार लेने वाले द्वारा वर्ष 2018 में निवेदन किए गए समय से भी परे था । जैसा कि ऊपर पहले ही मत व्यक्त किया गया है, आठ से नौ माह की अवधि की ईप्सा वर्ष 2018 में की गई थी और आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा उधार लेने वाले को मई, 2022 तक का समय मिल गया था । अन्यथा भी, जैसा कि बैंक की ओर से ठीक ही दलील दी गई है, ओटीएस स्कीम के अधीन संदाय को पुन:निर्धारित करने के लिए बैंक को निदेश देना संविदा का उपांतरण करने की कोटि में आएगा जो भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 62 के अधीन पारस्परिक सम्मति से किया जाता है । आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा ओटीएस स्कीम के अधीन संदाय को पुन:निर्धारित करना और समय-विस्तार प्रदान करना संविदा को पुन: लिखने की कोटि में आएगा जो भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए अनुज्ञेय नहीं है । यह उल्लेख किया

जाना आवश्यक है कि ओटीएस स्कीम के अधीन, जो मूल रूप से वर्ष 2017 में मंजूर की गई थी, उधार लेने वाले से 13,99,89,273.99/- रुपए बकाया के विरुद्ध 10,53,75,069.74/- रुपए का संदाय करने की अपेक्षा की गई थी । अत: मूल रूप से मंजूर ओटीएस स्कीम के अधीन उधार लेने वाले को लगभग 3 करोड़ की पर्याप्त राहत मिल रही थी । बैंक ने ओटीएस स्कीम की प्रस्थापना को तारीख 21 नवंबर, 2017 के पत्र में वर्णित निबंधनों और शर्तों पर सहमति और स्वीकृति दी थी । तारीख 21 नवंबर, 2017 के मंजूरी पत्र में खंड (iv) में विनिर्दिष्ट रूप से उल्लेख किया गया था कि ओटीएस स्कीम के अधीन संपूर्ण संदाय तारीख 21 मई, 2018 तक किया जाना है अन्यथा ओटीएस निष्फल हो जाएगा । अत: उधार लेने वाले मंजूर ओटीएस स्कीम के अनुसार संदाय करने के लिए आबद्ध थे । इसलिए उच्च न्यायालय को भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए मंजूर ओटीएस स्कीम से असंबद्ध अतिरिक्त समय-विस्तार नहीं करना चाहिए था । जहां तक उधार लेने की ओर से दी गई इन दलीलों का संबंध है कि कुछ अन्य उधार लेने वालों के मामलों में समय-विस्तार किया गया था, वे न तो यहां हैं और न वहां थे । बैंक पारस्परिक रूप से समय-विस्तार करने के लिए सहमत हो सकता है जो कि भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 62 के अधीन अनुज्ञेय है । उधार लेने वाला अधिकार के रूप में यह दावा नहीं कर सकता था कि यद्यपि उसने मंजूर ओटीएस स्कीम के अनुसार संदाय नहीं किया था तो भी उसे अधिकार के रूप में अतिरिक्त समय-विस्तार प्रदान किया जाए । दावाकृत कोई नकारात्मक विभेद नहीं हो सकता है । उधार लेने वाले को अधिकार के रूप में समय-विस्तार का दावा करने के लिए अपने पक्ष में किसी अधिकार को सिद्ध करना चाहिए । (पैरा 6.6, 6.7 और 7)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2021]	2021 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1255 :	
	बिजनौर अर्बन को-आपरेटिव बैंक लि.,	3.1, 3.5,
	बिजनौर और अन्य बनाम **मीणाल**	4.7, 6.2,
	अग्रवाल और अन्य ;	6.3, 6.4

[2020] 2020 एस. सी. सी. ऑनलाइन
पंजाब और हरियाणा 4387 :
अनु भल्ला और एक अन्य बनाम 4.4, 4.5,
जिला मजिस्ट्रेट, पठानकोट और एक अन्य ; 4.9

[2009] (2009) 8 एस. सी. सी. 257 :
सरदार एसोसिएट्स बनाम **पंजाब एंड सिंध बैंक और अन्य** । 3.5, 4.5, 4.9, 6.4, 6.5

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2022 की सिविल अपील सं. 6954.

2018 की सिविल रिट याचिका सं. 12953 में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 10 मार्च, 2022 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री संजय कपूर, (सुश्री) मेघा कर्णवाल, अर्जुन भाटिया और (सुश्री) अक्षता जोशी

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री डी. पी. सिंह, (सुश्री) सोनम गुप्ता, बाहुली शर्मा और तरणजीत सिंह

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एम. आर. शाह ने दिया ।

न्या. शाह – भारतीय स्टेट बैंक ने यह अपील 2018 की सिविल रिट याचिका सं. 12953 में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ द्वारा तारीख 10 मार्च, 2022 को पारित किए गए उस आक्षेपित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर फाइल की है, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए मूल रिट याची को तारीख 21 सितंबर, 2017 के एकबारगी निपटान (ओटीएस) के मंजूरी पत्र के अनुसार अतिशेष रकम (2.02 करोड़ रुपए ब्याज सहित) का संदाय करने के लिए अतिरिक्त छह सप्ताह का समय प्रदान किया था ।

2. इस अपील के तथ्य संक्षेप में निम्नलिखित हैं :

2.1 भारतीय स्टेट बैंक (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'बैंक' कहा गया है) ने प्रत्यर्थी-अरविन्द्र इलेक्ट्रॉनिक्स प्रा. लि. (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'उधार लेने वाला' कहा गया है) के पक्ष में वर्ष 2012 में एक नकद उधार मंजूर किया था । वर्ष 2015 में उधार लेने वाले के लेखा को अपालन आस्ति (एनपीए) के रूप में वर्गीकृत किया गया था । बैंक तारीख 1 सितंबर, 2017 को एकबारगी निपटान स्कीम (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'ओटीएस स्कीम' कहा गया है) लेकर आया । ओटीएस स्कीम में विनिर्दिष्ट रूप से ओटीएस स्कीम के अधीन स्थिर किए गए अनुसार मंजूरी की तारीख से छह माह के भीतर संदाय करने का उपबंध किया गया था, अन्यथा वह निष्फल हो जाएगी । बैंक ने उधार लेने वाले को ओटीएस के लिए ओटीएस प्रस्थापना भेजी और तारीख 31 मार्च, 2017 को खाते में 13,99,89,273.99/- रुपए बकाया था । ओटीएस स्कीम के अधीन संदेय रकम 10,53,75,069.74/- रुपए थी । उधार लेने वाले ने ओटीएस प्रस्थापना स्वीकार की और तारीख 31 अक्तूबर, 2017 को बैंक में 1.40 करोड़ रुपए की रकम जमा की ।

2.2 बैंक ने ओटीएस को मंजूरी दी और 1.40 करोड़ रुपए की प्राप्ति की पुष्टि की । मंजूर की गई ओटीएस के अधीन उधार लेने वाले के लिए तारीख 21 दिसंबर, 2017 तक ओटीएस रकम का 25 प्रतिशत जमा करना और अतिशेष रकम को पत्र की तारीख से ब्याज सहित तारीख 21 मई, 2018 तक जमा किया जाना अपेक्षित था । उधार लेने वाले को यह भी सूचित किया गया था कि ओटीएस के अधीन अनुबंधित समय के भीतर पूर्वोक्त रकम का संदाय न करने पर, ओटीएस निष्फल हो जाएगा । उधार लेने वाले ने तारीख 31 दिसंबर, 2017/21 मई, 2018 को 4,51,45,000/- रुपए की रकम जमा की । उधार लेने वाले ने तारीख 21 मई, 2018 को 3.50 करोड़ रुपए का संदाय करने के लिए सहमति/प्रतिबद्धता व्यक्त की और 2.50 करोड़ रुपए की अतिशेष रकम का प्रतिसंदाय करने के लिए 8 से 9 माह के समय-विस्तार के लिए अनुरोध किया । बैंक ने 9 माह के समय-विस्तार के अनुरोध को अस्वीकार कर दिया और उधार लेने वाले को तारीख 21 मई, 2018 तक 2.52 करोड़ रुपए का संदाय करने का निदेश दिया । उधार लेने वाले ने

व्यथित होकर उच्च न्यायालय के समक्ष तारीख 21 मई, 2018 से परे 2.52 करोड़ रुपए की बकाया रकम का संदाय करने के लिए 8 से 9 माह के समय-विस्तार के लिए रिट याचिका फाइल की ।

2.3 उसके पश्चात् बैंक ने 9,48,39,614/- रुपए की बकाया रकम के निपटान के लिए 4,48,79,711/- रुपए की रकम देने के लिए एक अन्य ओटीएस स्कीम चालू की । तथापि, उधार लेने वाले ने उक्त स्कीम को नहीं चुना । उसके पश्चात् बैंक द्वारा वर्ष 2019 में एक अन्य ओटीएस स्कीम चालू की गई और बैंक ने उधार लेने वाले को 5,98,39,614/- रुपए की बकाया रकम के विरुद्ध 4,11,13,953/- रुपए की रकम का संदाय करके लेखा का निपटान करने की प्रस्थापना की । उधार लेने वाले ने पुन: इस स्कीम को नहीं चुना । यहां तक कि एक अन्य ओटीएस स्कीम भी चालू की गई थी जिसकी उधार लेने वाले को प्रस्थापना की गई थी और उधार लेने वाले ने इस स्कीम को नहीं चुना । बैंक ने तारीख 24 फरवरी, 2021 की संसूचना द्वारा 2.05 करोड़ रुपए की ओटीएस प्रस्थापना को नामंजूर कर दिया क्योंकि बैंक के अनुसार उधार लेने वाले द्वारा शोध्य रकम 23.54 करोड़ रुपए थी । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा उधार लेने वाले द्वारा की गई 2.05 करोड़ रुपए की प्रस्थापना को नामंजूर करते हुए तारीख 24 फरवरी, 2021 की संसूचना को अपास्त कर दिया और उधार लेने वाले को तारीख 21 सितंबर, 2017 के ओटीएस मंजूरी पत्र के अनुसार 2.02 करोड़ रुपए का ब्याज सहित संदाय करने के लिए उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए आक्षेपित निर्णय और आदेश की तारीख से अतिरिक्त छह सप्ताह का समय प्रदान किया । ओटीएस स्कीम के अधीन अतिशेष रकम का संदाय करने के लिए उधार लेने वाले को छह सप्ताह का अतिरिक्त समय प्रदान करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए आक्षेपित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर बैंक ने यह अपील फाइल की है ।

3. बैंक की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री संजय कपूर ने जोरदार रूप से यह दलील दी कि उच्च न्यायालय ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए

उधार लेने वाले को ओटीएस के अधीन शोध्य और संदेय अतिशेष रकम जो वर्ष 2017 में शोध्य और संदेय थी, का संदाय करने के लिए अतिरिक्त छह सप्ताह का समय प्रदान करके बहुत ही गंभीर गलती की है ।

3.1 बैंक की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री कपूर ने **बिजनौर अर्बन को-आपरेटिव बैंक लि., बिजनौर और अन्य** बनाम **मीणाल अग्रवाल और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब लेते हुए यह दलील दी कि जैसा कि इस न्यायालय द्वारा मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया है, ओटीएस स्कीम के फायदे का अधिकार के रूप में दावा नहीं किया जा सकता और सदैव स्कीम में वर्णित पात्रता मानदंड को पूरा करने के अध्यधीन होगी । यह दलील दी गई कि वर्तमान मामले में उधार लेने वाले के लिए ओटीएस के निबंधनों और शर्तों को पूरा करना अपेक्षित था और ओटीएस के मंजूरी पत्र में वर्णित अनुसूची के अनुसार संदाय करना अपेक्षित था । यह दलील दी गई कि मंजूर की गई ओटीएस स्कीम के अनुसार संदाय करने में किसी विचलन से तारीख 21 नवंबर, 2017 के मंजूरी पत्र के अनुसार ओटीएस मंजूरी निष्फल हो जाएगी । यह दलील दी गई कि इसलिए उच्च न्यायालय को भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए मंजूर की गई स्कीम और/या तारीख 21 नवंबर, 2017 के मंजूरी पत्र से असंबद्ध और वह भी भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए कोई अतिरिक्त समय प्रदान नहीं करना चाहिए था ।

3.2 बैंक की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री कपूर द्वारा यह दलील दी गई कि माननीय उच्च न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन ओटीएस के अधीन संदाय के कार्यक्रम में परिवर्तन करने का निदेश नहीं दे सकता क्योंकि यह संविदा का उपांतरण करने की कोटि में आएगा जो भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 62 के अधीन पारस्परिक सम्मति द्वारा किया जा सकता है ।

---

[1] 2021 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1255.

3.3 यह दलील दी गई कि माननीय उच्च न्यायालय को इस बात का मूल्यांकन करना चाहिए था कि ओटीएस में कोई लोक तत्व अंतर्वलित नहीं है और ओटीएस अविभेदकारी और अवैवेकिक है/थी और सभी उधार लेने वालों को समान रूप से लागू होगी ।

3.4 यह दलील दी गई कि माननीय उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा संविदा को पुन: लिखा है जो अनुज्ञेय नहीं है और वह भी भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए ।

3.5 बैंक की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा यह भी दलील दी गई कि यद्यपि **बिजनौर अर्बन को-आपरेटिव बैंक लि.** (उपर्युक्त) वाले मामले में के विनिश्चय का उच्च न्यायालय के समक्ष उल्लेख किया गया था, तो भी उच्च न्यायालय ने उक्त आबद्धकारी विनिश्चय का यह मत व्यक्त करते हुए अनुसरण नहीं किया कि **सरदार एसोसिएट्स** बनाम **पंजाब एंड सिंध बैंक और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय का पूर्ववर्ती विनिश्चय अधिक विस्तृत और सही है । यह दलील दी गई कि इस तथ्य के अतिरिक्त कि **सरदार एसोसिएट्स** (उपर्युक्त) वाले मामले में अंतर्वलित विवाद्यक पूर्णतया भिन्न था, **बिजनौर अर्बन को-आपरेटिव बैंक लि.** (उपर्युक्त) वाले मामले में का विनिश्चय पश्चात्वर्ती और इसी मुद्दे पर है, इसलिए उच्च न्यायालय पर आबद्धकर था और उच्च न्यायालय को इसका अनुसरण करना चाहिए था । उपरोक्त दलीलें देते हुए और **बिजनौर अर्बन को-आपरेटिव बैंक लि.** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब लेने के उपरांत इस अपील को मंजूर करने और उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए निर्णय और आदेश को अपास्त करने का निवेदन किया गया ।

4. प्रत्यर्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अधिवक्ता श्री डी. पी. सिंह द्वारा इस अपील का जोरदार रूप से विरोध किया गया ।

4.1 उधार लेने वाले की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अधिवक्ता ने यह दलील दी कि अपीलार्थी एक राज्य होने के कारण

---

[1] (2009) 8 एस. सी. सी. 257.

ऋजु, पारदर्शी और अविभेदकारी रीति में कार्य करने के लिए कर्तब्यबद्ध है और बैंक का कोई मनमाना कार्य उच्च न्यायालय की रिट अधिकारिता के अधीन आता है ।

4.2 यह दलील दी गई कि वर्तमान मामले में बैंक ने समय-विस्तार के लिए प्रत्यर्थी के अनुरोध को अन्य उधार लेने वालों को ओटीएस के समय-विस्तार का फायदा देते हुए मनमाने रूप से और उचित कारण और स्पष्टीकरण के बिना नामंजूर किया था ।

4.3 यह दलील दी गई कि बैंक के अनुसार इनकार इसलिए किया गया था क्योंकि ओटीएस अवैवेकिक और अविभेदकारी है । तथापि, साथ ही साथ बैंक अन्य ऐसे उधार लेने वालों को समय-विस्तार प्रदान कर रहा है जो प्रत्यर्थी के समान स्थिति में हैं । अत: यह दलील दी गई कि बैंक द्वारा एक जैसी स्थिति में के उधार लेने वालों के साथ विभेदी व्यवहार कुछ और नहीं अपितु एक मनमाना कार्य है और इसलिए माननीय उच्च न्यायालय ने उधार लेने वाले को ओटीएस स्कीम के अधीन अतिशेष रकम का संदाय करने के लिए अतिरिक्त छह सप्ताह का समय गलत रूप से प्रदान नहीं किया है ।

4.4 यह दलील दी गई कि यहां तक कि बैंक की यह कार्रवाई भारतीय रिजर्व बैंक के मार्गदर्शक सिद्धांतों की आत्मा के प्रतिकूल है । यह दलील दी गई कि बैंक ने किसी नीति के अधीन या किसी ओटीएस स्कीम के अधीन कोई पात्रता मानदंड निर्धारित नहीं किया है जिसके अधीन वह समय-विस्तार प्रदान कर सकता है या नहीं कर सकता है । यह दलील दी गई कि यह भारतीय रिजर्व बैंक के मार्गदर्शक सिद्धांतों की आत्मा के प्रतिकूल है, विशेष रूप से चूंकि एक अनुसूचित बैंक ने पहले ही ऐसी प्रकृति का मानदंड निर्धारित किया है जिस पर **अनु भल्ला और एक अन्य** बनाम **जिला मजिस्ट्रेट, पठानकोट और एक अन्य**[1] वाले मामले में उच्च न्यायालय द्वारा भी विचार किया गया था, यह वह निर्णय है जिसका उच्च न्यायालय द्वारा अवलंब लिया गया है । यह दलील दी गई कि इस प्रकार किसी मानदंड के अभाव में और बैंक द्वारा

---

[1] 2020 एस. सी. सी. ऑनलाइन पंजाब और हरियाणा 4387.

मनमाने रूप से नामंजूर करने के कारण माननीय उच्च न्यायालय ने समय-विस्तार के लिए प्रत्यर्थी-उधार लेने वाले के निवेदन को ठीक ही मंजूर किया है ।

4.5 प्रत्यर्थी-उधार लेने वाले की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अधिवक्ता द्वारा **अनु भल्ला** (उपर्युक्त) वाले मामले में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के विनिश्चय और **सरदार एसोसिएट्स** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब लेने के उपरांत जोरदार रूप से यह दलील दी गई कि उच्च न्यायालय को ओटीएस के अधीन समयावधि का भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन विस्तार करने की शक्ति है ।

4.6 प्रत्यर्थी-उधार लेने वाले की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अधिवक्ता द्वारा यह दलील दी गई कि अन्यथा भी विभिन्न उच्च न्यायालयों द्वारा यह सतत् दृष्टिकोण अपनाया गया है कि उच्च न्यायालय बैंकों द्वारा की गई कार्रवाइयों की न्यायसम्मतता पर विचार कर सकता है ।

4.7 प्रत्यर्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अधिवक्ता द्वारा यह भी दलील दी गई कि उच्च न्यायालय ने ठीक ही यह मत व्यक्त किया था कि **बिजनौर अर्बन को-आपरेटिव बैंक लि.** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस माननीय न्यायालय का विनिश्चय प्रभेदनीय है चूंकि यह ओटीएस प्रदान करने के विवाद्यक से संबंधित है न कि तब समय का विस्तार करने के संबंध में जब एक बार पहले ही ओटीएस प्रदान की गई है और पक्षकारों द्वारा इस पर कार्रवाई की गई है ।

4.8 प्रत्यर्थी-उधार लेने वाले की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अधिवक्ता ने यह दलील दी कि साम्या प्रत्यर्थी के पक्ष में है । उपरोक्त के समर्थन में यह दलील दी गई कि (i) प्रत्यर्थी ने अपने आवासीय स्थापन को बेचकर अनुबंधित समय के भीतर ओटीएस रकम का 80 प्रतिशत अर्थात् 8,01,45,000/- रुपए का संदाय कर दिया था ; (ii) उपरोक्त के अतिरिक्त, अपीलार्थी-बैंक को 3.50 करोड़ रुपए का स्पष्ट लंबित बंधक धारणाधिकार है ; (iii) प्रत्यर्थी-उधार लेने वाले ने वाणिज्यिक स्थापन में अपने 31 प्रतिशत हिस्से को बेचा था और 3.50

करोड़ रुपए अग्रिम का प्रयोग अपीलार्थी-बैंक को ओटीएस रकम का प्रतिसंदाय करने के लिए किया था ; (iv) शेष रकम अन्य संपत्ति बेचकर आनी थी और इसलिए इसी एकमात्र आधार पर समय-विस्तार की ईप्सा की गई थी और यह बात बैंक के पदधारियों की जानकारी में थी ; (v) प्रत्यर्थी-उधार लेने वाला एक एमएसएमई है और ऐसा अपेक्षित विधिक तानाबाना नहीं है जो व्यतिकारी पक्षकारों से अपने शोध्यों को पुन: प्राप्त करने के लिए सारफेसी अधिनियम जैसा असरदार/प्रभावी हो ।

4.9 यह दलील दी गई कि प्रत्यर्थी ने ब्याज सहित संपूर्ण रकम का संदाय किया था और आगे के युक्तियुक्त ब्याज का इस माननीय न्यायालय या बैंक को, जो वह अधिरोपित करना उचित समझे, संदाय करने के लिए तैयार है जिससे अपीलार्थी-बैंक और प्रत्यर्थी-उधार लेने वाले दोनों के बीच संतुलन बन जाएगा । उपरोक्त दलीलें देने और **सरदार एसोसिएट्स** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय और **अनु भल्ला** (उपर्युक्त) वाले मामले में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के विनिश्चय तथा कुछ उच्च न्यायालय के विनिश्चयों का अवलंब लेने के उपरांत इस अपील को खारिज करने का निवेदन किया गया ।

5. संबंधित पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों को विस्तारपूर्वक सुना ।

6. प्रारंभ में, यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि उच्च न्यायालय ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा अतिशेष रकम जो वर्ष 2017 में मंजूर की गई ओटीएस स्कीम के अधीन शोध्य और संदेय थी, का संदाय करने के लिए प्रत्यर्थी-उधार लेने वाले-मूल रिट याची के पक्ष में तारीख 10 मार्च, 2022 से छह सप्ताह की अतिरिक्त अवधि का समय-विस्तार किया था ।

6.1 अत: संक्षिप्त प्रश्न जो इस माननीय न्यायालय के विचार के लिए उत्पन्न होता है, यह है कि क्या मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में उच्च न्यायालय ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए मंजूर ओटीएस स्कीम के अधीन प्रदान

किए गए समय से परे मंजूर ओटीएस स्कीम के अधीन अतिशेष रकम का संदाय करने के लिए समय का विस्तार करके न्यायोचित किया था ?

6.2 पूर्वोक्त विवाद्यक पर विचार करते हुए **बिजनौर अर्बन को-आपरेटिव बैंक लि.** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के हाल ही के विनिश्चय को निर्दिष्ट किया जाना आवश्यक है ।

6.3 **बिजनौर अर्बन को-आपरेटिव बैंक लि.** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय ने निम्नलिखित दो प्रश्नों का उत्तर दिया था :–

> "(i) क्या ओटीएस स्कीम के अधीन फायदे का अधिकार के रूप में निवेदन किया जा सकता है ? ;
>
> (ii) क्या उच्च न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए बैंक को ओटीएस स्कीम के अधीन और वह भी ओटीएस स्कीम के अधीन वर्णित पात्रता मानदंड से असंबद्ध फायदा प्रदान करने हेतु सकारात्मक रूप से विचार करने के लिए निदेश देते हुए परमादेश की रिट जारी कर सकता है ?"

6.4 ओटीएस स्कीम का विस्तारपूर्वक विश्लेषण करने पर इस न्यायालय द्वारा यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया है कि, (i) कोई उधार लेने वाला अधिकार के रूप में एकबारगी निपटान स्कीम का फायदा प्रदान करने के लिए निवेदन नहीं कर सकता ; (ii) उच्च न्यायालय द्वारा भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए वित्तीय संस्थान/बैंक को किसी उधार लेने वाले को ओटीएस का फायदा प्रदान करने के लिए सकारात्मक रूप से विचार करने का निदेश देते हुए परमादेश की रिट जारी नहीं की जा सकती ; (iii) ओटीएस स्कीम का फायदा प्रदान करना पात्रता मानदंड और समय-समय पर जारी किए गए मार्गदर्शक सिद्धांतों के अधीन है । यद्यपि **बिजनौर अर्बन को-आपरेटिव बैंक लि.** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय को बैंक द्वारा विनिर्दिष्ट रूप से प्रयोग किया गया था और उच्च न्यायालय को बताया गया था, तो भी उच्च न्यायालय ने **बिजनौर अर्बन को-आपरेटिव बैंक लि.** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के आबद्धकारी विनिश्चय का अनुसरण करने की बजाय यह मत व्यक्त करते हुए इसका अनुसरण नहीं किया कि **सरदार**

एसोसिएट्स (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय का पूर्ववर्ती विनिश्चय अधिक विस्तृत है । हम उच्च न्यायालय द्वारा की गई ऐसी मताभिव्यक्ति और इस न्यायालय के पश्चात्वर्ती आबद्धकारी विनिश्चय जो इसी मुद्दे पर था, का अनुसरण न करने का अनुमोदन नहीं करते हैं । इस मुद्दे/विवाद्यक पर पश्चात्वर्ती विनिश्चय होने के कारण उच्च न्यायालय इसका अनुसरण करने के लिए आबद्ध था ।

6.5 अन्यथा भी, यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि **सरदार एसोसिएट्स** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय का विनिश्चय तथ्यों के आधार पर प्रभेदनीय है । **सरदार एसोसिएट्स** (उपर्युक्त) वाले मामले में यह पाया गया था कि बैंक ने भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा जारी किए गए ओटीएस के लिए मार्गदर्शक सिद्धांतों से विचलन किया था और इसलिए इस माननीय न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि भारतीय रिजर्व बैंक के मार्गदर्शक सिद्धांत बैंक पर आबद्धकर हैं और बैंक उधार लेने वाले के मामले पर ओटीएस पर भारतीय रिजर्व बैंक के मार्गदर्शक सिद्धांतों के अधीन विचार करेगा । अत: अन्यथा भी तथ्यों के आधार पर उक्त विनिश्चय कतई लागू नहीं होता था ।

6.6 प्रस्तुत मामले में, तारीख 21 नवंबर, 2017 के मंजूरी पत्र में विनिर्दिष्ट रूप से यह उपबंधित था कि संपूर्ण संदाय तारीख 21 मई, 2018 तक किया जाए । किस्तों में संदाय करने की अनुसूची का भी उल्लेख किया गया था । यह एक स्वीकृति स्थिति है कि उधार लेने वाले ने मंजूर ओटीएस स्कीम के अधीन शोध्य और संदेय रकम का मंजूरी पत्र में वर्णित तारीख को या उससे पूर्व संदाय नहीं किया था । नौ माह के समय-विस्तार के लिए उधार लेने वाले के निवेदन को बहुत पहले तारीख 16 मई, 2018 को नामंजूर कर दिया गया था और उधार लेने वाले को तारीख 21 मई, 2018 तक 2.52 करोड़ रुपए का संदाय करने का निदेश दिया गया था किंतु उधार लेने वाला संदाय करने में असफल रहा । इस प्रक्रम पर, यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान बैंक द्वारा कुल मिलाकर तीन विभिन्न ओटीएस स्कीम चलाई गई थीं और बैंक ने प्रत्यर्थी-उधार लेने वाले को ओटीएस स्कीम के अधीन बकाया रकम का निपटान करने की प्रस्थापना की थी । तथापि, उधार लेने वाले ने किसी स्कीम को नहीं चुना । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा तारीख 10 मार्च, 2022

से छह सप्ताह का अतिरिक्त समय प्रदान किया था जो यहां तक कि उधार लेने वाले द्वारा वर्ष 2018 में निवेदन किए गए समय से भी परे था । जैसा कि ऊपर पहले ही मत व्यक्त किया गया है, आठ से नौ माह की अवधि की ईप्सा वर्ष 2018 में की गई थी और आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा उधार लेने वाले को मई, 2022 तक का समय मिल गया था । अन्यथा भी, जैसा कि बैंक की ओर से ठीक ही दलील दी गई है, ओटीएस स्कीम के अधीन संदाय को पुन:निर्धारित करने के लिए बैंक को निदेश देना संविदा का उपांतरण करने की कोटि में आएगा जो भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 62 के अधीन पारस्परिक सम्मति से किया जाता है । आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा ओटीएस स्कीम के अधीन संदाय को पुन:निर्धारित करना और समय-विस्तार प्रदान करना संविदा को पुन: लिखने की कोटि में आएगा जो भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए अनुज्ञेय नहीं है ।

6.7 यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि ओटीएस स्कीम के अधीन, जो मूल रूप से वर्ष 2017 में मंजूर की गई थी, उधार लेने वाले से 13,99,89,273.99/- रुपए बकाया के विरुद्ध 10,53,75,069.74/- रुपए का संदाय करने की अपेक्षा की गई थी । अत: मूल रूप से मंजूर ओटीएस स्कीम के अधीन उधार लेने वाले को लगभग 3 करोड़ की पर्याप्त राहत मिल रही थी । बैंक ने ओटीएस स्कीम की प्रस्थापना को तारीख 21 नवंबर, 2017 के पत्र में वर्णित निबंधनों और शर्तों पर सहमति और स्वीकृति दी थी । तारीख 21 नवंबर, 2017 के मंजूरी पत्र में खंड (iv) में विनिर्दिष्ट रूप से उल्लेख किया गया था कि ओटीएस स्कीम के अधीन संपूर्ण संदाय तारीख 21 मई, 2018 तक किया जाना है अन्यथा ओटीएस निष्फल हो जाएगा । अत: उधार लेने वाले मंजूर ओटीएस स्कीम के अनुसार संदाय करने के लिए आबद्ध थे । इसलिए उच्च न्यायालय को भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए मंजूर ओटीएस स्कीम से असंबद्ध अतिरिक्त समय-विस्तार नहीं करना चाहिए था ।

7. जहां तक उधार लेने की ओर से दी गई इन दलीलों का संबंध है कि कुछ अन्य उधार लेने वालों के मामलों में समय-विस्तार किया गया था, वे न तो यहां हैं और न वहां थे । बैंक पारस्परिक रूप से समय-विस्तार करने के लिए सहमत हो सकता है जो कि भारतीय संविदा

अधिनियम की धारा 62 के अधीन अनुज्ञेय है । उधार लेने वाला अधिकार के रूप में यह दावा नहीं कर सकता था कि यद्यपि उसने मंजूर ओटीएस स्कीम के अनुसार संदाय नहीं किया था तो भी उसे अधिकार के रूप में अतिरिक्त समय-विस्तार प्रदान किया जाए । दावाकृत कोई नकारात्मक विभेद नहीं हो सकता है । उधार लेने वाले को अधिकार के रूप में समय-विस्तार का दावा करने के लिए अपने पक्ष में किसी अधिकार को सिद्ध करना चाहिए ।

7.1 अब जहां तक **अनु भल्ला** (उपर्युक्त) वाले मामले में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के विनिश्चय के लिए गए अवलंब का संबंध है, **बिजनौर अर्बन को-आप्रेटिव बैंक लि.** (उपुर्यक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के प्रत्यक्ष विनिश्चय को ध्यान में रखते हुए इस न्यायालय का विनिश्चय उच्च न्यायालय पर आबद्धकर होगा ।

8. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए और ऊपर उल्लिखित कारणों से, उच्च न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थी-उधार लेने वाले को ओटीएस स्कीम के अधीन अतिशेष रकम का संदाय करने के लिए अतिरिक्त समय प्रदान करते हुए पारित किया गया आक्षेपित निर्णय और आदेश असंधार्य है और यह अभिखंडित और अपास्त किए जाने योग्य है और तद्नुसार अभिखंडित और अपास्त किया जाता है । परिणामत:, प्रत्यर्थी-उधार लेने वाले के द्वारा फाइल की गई मूल रिट याचिका खारिज हो जाती है । यह अपील तद्नुसार मंजूर की जाती है । तथापि, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में खर्चे के बारे में कोई आदेश नहीं किया जाएगा ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

[2022] 4 उम. नि. प. 335

प्रमोद सिंह किराड़

बनाम

मध्य प्रदेश राज्य और एक अन्य

[2022 की सिविल अपील सं. 8934-8935]

2 दिसंबर, 2022

न्यायमूर्ति एम. आर. शाह और न्यायमूर्ति सी. टी. रविकुमार

सेवा विधि – अपीलार्थी द्वारा पुलिस कांस्टेबल के पद के लिए आवेदन किया जाना – उसके द्वारा सत्यापन प्ररूप में पूर्व में भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध के लिए विचारण किए जाने और बाद में दोषमुक्त किए जाने का प्रकटीकरण किया जाना – नियोजक द्वारा उसकी अभ्यर्थिता को नामंजूर किया जाना – उच्च न्यायालय के समक्ष फाइल की गई रिट याचिका में एकल न्यायाधीश द्वारा उसकी अभ्यर्थिता के रद्दकरण को अपास्त किया जाना और पचास प्रतिशत पिछले वेतन के साथ सभी पारिणामिक फायदों सहित नियुक्त किए जाने का निदेश दिया जाना – उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा राज्य की रिट अपील को मंजूर किया जाना और एकल न्यायाधीश के निर्णय को अपास्त किया जाना – उच्चतम न्यायालय में अपील – अभ्यर्थी-अपीलार्थी द्वारा सत्यापन प्ररूप में कोई तात्विक तथ्य न छिपाए जाने और वर्ष 2001 में हुए वैवाहिक विवाद की परिणति पति-पत्नी के बीच न्यायालय के बाहर हुए समझौते के कारण वर्ष 2006 में दोषमुक्ति में हो जाने पर बहुत बाद में वर्ष 2013/2014 में अपीलार्थी को नियुक्ति से इनकार करना मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए न्यायोचित नहीं कहा जा सकता, तथापि, काम नहीं तो वेतन नहीं के सिद्धांत के आधार पर अपीलार्थी वास्तविक नियुक्ति की तारीख से सभी फायदों का हकदार होगा ।

इन अपीलों के तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी ने पुलिस कांस्टेबल के पद के लिए आवेदन किया था । उसने सत्यापन प्ररूप में उसका

भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध के लिए विचारण किए जाने की बात का प्रकटन किया था । तथापि, चूंकि वह पूर्व में आपराधिक मामले में अंतर्वलित था यद्यपि उसे दोषमुक्त कर दिया गया था, इसलिए उसकी अभ्यर्थिता को तारीख 16 दिसंबर, 2014 के आदेश द्वारा नामंजूर कर दिया गया । अपीलार्थी ने अपने चयन/अभ्यर्थिता के रद्दकरण और अनियुक्ति के विरुद्ध उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिका फाइल की । विद्वान् एकल न्यायाधीश ने रिट याचिका मंजूर की और उसकी अभ्यर्थिता के रद्दकरण और अनियुक्ति को अपास्त कर दिया तथा राज्य को उसे पुलिस कांस्टेबल के रूप में उस तारीख से जिसको अन्य बैचमेट को कांस्टेबल के पद पर नियुक्त किया गया था, 50 प्रतिशत पिछले वेतन सहित सभी पारिणामिक फायदों के साथ नियुक्त करने का निदेश दिया । विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित किए गए निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर राज्य द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष रिट अपील फाइल की गई । उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने उक्त अपील मंजूर की और विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित किए गए आदेश को यह मत व्यक्त करते हुए अपास्त कर दिया कि यदि अभ्यर्थी किसी आपराधिक मामले में अंतर्ग्रस्त होना पाया जाता है, यहां तक कि दोषमुक्ति के मामले में भी और/या यहां तक कि ऐसे मामले में भी जहां कर्मचारी ने समाप्त हो चुके किसी आपराधिक मामले की सत्यता से घोषणा की है, नियोजक को फिर भी उसके पूर्ववृत्त पर विचार करने का अधिकार है और उसे अभ्यर्थी को नियुक्त करने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता । उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए निर्णय (निर्णयों) और आदेश (आदेशों) से व्यथित और असंतुष्ट होकर मूल रिट याची द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपीलें फाइल की गईं । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलों को मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – अपीलार्थी ने कांस्टेबल के पद के लिए आवेदन वर्ष 2013 में किया था और उसे मेधावी पाया गया था तथा कांस्टेबल के रूप में नियुक्त किए जाने के लिए अर्हित पाया था । उसने सत्यापन प्ररूप में ही यह घोषणा की थी कि उसका पूर्व में भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध के लिए विचारण किया गया था । इसलिए सत्य और सही तथ्यों को प्रकट करने में अपीलार्थी द्वारा कुछ

नहीं छिपाया गया था । यह भी उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि अपीलार्थी को तारीख 30 अक्तूबर, 2006 के निर्णय और आदेश द्वारा अर्थात् उसके द्वारा कांस्टेबल के पद के लिए आवेदन करने से 7 वर्ष पूर्व भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध के लिए दोषमुक्त कर दिया गया था । विचारण न्यायालय द्वारा पारित किए गए दोषमुक्ति के निर्णय और आदेश से यह प्रतीत होता है कि यह एक वैवाहिक विवाद था जिसमें समझौता हो गया था और मूल शिकायतकर्ता ने न्यायालय के बाहर समझौते को देखते हुए अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन नहीं किया था तथा उसे पक्षद्रोही घोषित किया गया था और मामले में परीक्षा किए गए अन्य अभियोजन साक्षी (साक्षियों) ने अभियोजन पक्ष के वृत्तांत की संपुष्टि नहीं की थी । इस प्रकार, यह देखा जा सकता है कि अपीलार्थी ने भारतीय दंड संहिता के अन्य अपराधों के लिए अभियोजन का सामना नहीं किया था । इसलिए वर्ष 2001 में जो कुछ घटित हुआ था और धारा 498क के अधीन अपराध के लिए दांडिक मामले की परिणति वर्ष 2006 में दोषमुक्ति में हो गई थी, इसलिए अपीलार्थी को वर्ष 2013/2014 में नियुक्ति से इनकार नहीं किया जाना चाहिए था । जिस अपराध के लिए उसका विचारण किया गया था और जिसकी परिणति अंततोगत्वा दोषमुक्ति में हो गई थी, वह वैवाहिक विवाद से उद्भूत हुआ था जो अंततोगत्वा न्यायालय के बाहर हुए समझौते के कारण समाप्त हो गया था । इन परिस्थितियों में और मामले के विशिष्ट तथ्यों में अपीलार्थी को एकमात्र इस पूर्वोक्त आधार पर नियुक्ति से इनकार नहीं किया जा सकता था कि उसका भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध के लिए और वह भी उस अपराध के लिए जो अभिकथित रूप से वर्ष 2001 में घटित हुआ था और जिसके लिए उसे वर्ष 2006 में चाहे (पति और पत्नी के बीच) समझौते के आधार पर दोषमुक्त भी कर दिया गया था । उपरोक्त को दृष्टिगत करते हुए और ऊपर उल्लिखित कारणों से उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने कांस्टेबल के पद पर अपीलार्थी की नियुक्ति से इनकार करके और विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित किए गए निर्णय और आदेश को अभिखंडित और अपास्त करके तात्विक गलती की है । तथापि, साथ ही साथ, काम नहीं तो वेतन नहीं के सिद्धांत के आधार पर अपीलार्थी

वास्तविक नियुक्ति की तारीख से सभी फायदों का हकदार होगा । (पैरा 6 और 8)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2021] (2021) 10 एस. सी. सी. 136 :
राजस्थान राज्य विद्युत प्रसारण निगम लि. और अन्य बनाम **अनिल कनवारिया** ; 4, 7

[2016] (2016) 8 एस. सी. सी. 471 :
अवतार सिंह बनाम **भारत संघ और अन्य** । 2.1, 4

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2022 की सिविल अपील सं. 8934-8935.

2018 की रिट अपील सं. 723 और 2021 के पुनरीक्षण आवेदन सं. 672 में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय के तारीख 10 फरवरी, 2020 और 4 फरवरी, 2022 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री एस. के. गांगले, ज्येष्ठ अधिवक्ता, (सुश्री) प्रिया शर्मा, पृथ्वी राज चौहान और (सुश्री) शशि किरन

प्रत्यर्थियों की ओर से सुश्री अंकिता चौधरी, उप महाधिवक्ता, सर्वश्री अंकित मिश्रा, सन्नी चौधरी और श्रेयस बालाजी

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एम. आर. शाह ने दिया ।

न्या. शाह – मूल रिट याची ने क्रमश: 2018 की रिट अपील सं. 723 और 2021 के पुनरीक्षण आवेदन सं. 672 में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर की खंड न्यायपीठ द्वारा तारीख 10 फरवरी, 2020 और 4 फरवरी, 2022 के उस आक्षेपित निर्णय (निर्णयों) और आदेश (आदेशों) से व्यथित और असंतुष्ट होकर ये अपीलें फाइल की हैं, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने राज्य द्वारा फाइल की गई

उक्त अपील मंजूर की और विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा 2014 की रिट याचिका सं. 18388 मंजूर करते हुए और इस अपील में अपीलार्थी की पुलिस कांस्टेबल के रूप में अभ्यर्थिता को रद्द करने वाले आदेश को अपास्त करते हुए पारित किए गए निर्णय और आदेश को अभिखंडित और अपास्त कर दिया गया था ।

2. इस अपील में अपीलार्थी ने पुलिस कांस्टेबल के पद के लिए आवेदन किया था । उसने सत्यापन प्ररूप में उसका भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध के लिए विचारण किए जाने की बात का प्रकटन किया था । तथापि, चूंकि वह पूर्व में आपराधिक मामले में अंतर्वलित था यद्यपि उसे दोषमुक्त कर दिया गया था, इसलिए उसकी अभ्यर्थिता को तारीख 16 दिसंबर, 2014 के आदेश द्वारा नामंजूर कर दिया गया था । अपीलार्थी ने अपने चयन/अभ्यर्थिता के रद्दकरण और अनियुक्ति के विरुद्ध उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिका फाइल की । विद्वान् एकल न्यायाधीश ने तारीख 21 अगस्त, 2017 के निर्णय और आदेश द्वारा 2014 की रिट याचिका सं. 18388 मंजूर की और उसकी अभ्यर्थिता के रद्दकरण और अनियुक्ति को अपास्त कर दिया तथा राज्य को उसे पुलिस कांस्टेबल के रूप में उस तारीख से जिसको अन्य बैचमेट को कांस्टेबल के पद पर नियुक्त किया गया था, 50 प्रतिशत पिछले वेतन सहित सभी पारिणामिक फायदों के साथ नियुक्त करने का निदेश दिया ।

2.1 विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित किए गए निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर राज्य ने उच्च न्यायालय के समक्ष रिट अपील फाइल की । उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा तथा **अवतार सिंह** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1] वाले मामले में की गई कुछ मताभिव्यक्तियों और अन्य विनिश्चयों का अवलंब लेते हुए उक्त अपील मंजूर की और विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित किए गए आदेश को यह मत व्यक्त करते हुए अपास्त कर दिया कि यदि अभ्यर्थी किसी आपराधिक मामले में अंतर्ग्रस्त होना पाया जाता है, यहां तक कि दोषमुक्ति के मामले में भी और/या यहां तक कि ऐसे मामले में भी जहां कर्मचारी ने समाप्त हो

[1] (2016) 8 एस. सी. सी. 471.

चुके किसी आपराधिक मामले की सत्यता से घोषणा की है, नियोजक को फिर भी उसके पूर्ववृत्त पर विचार करने का अधिकार है और उसे अभ्यर्थी को नियुक्त करने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता ।

2.2 पुनरीक्षण आवेदन को उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया है ।

2.3 उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए निर्णय (निर्णयों) और आदेश (आदेशों) से व्यथित और असंतुष्ट होकर मूल रिट याची ने वर्तमान अपीलें फाइल की हैं ।

3. अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री एस. के. गांगले ने जोरदार रूप से यह दलील दी कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने अपील को मंजूर करके और विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित किए गए उस सकारण आदेश को अभिखंडित और अपास्त करके तात्विक रूप से गलती की है, जिसके द्वारा विद्वान् एकल न्यायाधीश ने अपीलार्थी की पुलिस कांस्टेबल के रूप में अभ्यर्थिता के रद्दकरण और अनियुक्ति को अभिखंडित और अपास्त कर दिया था ।

3.1 यह दलील दी गई कि उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ को इस तथ्य का मूल्यांकन करना चाहिए था कि अपीलार्थी के विरुद्ध मामला गंभीर अपराध का नहीं था अपितु भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध के लिए था जो एक वैवाहिक विवाद के कारण था ।

3.2 यह दलील दी गई कि उच्च न्यायालय की माननीय खंड न्यायपीठ ने इस तथ्य का मूल्यांकन और इस पर विचार नहीं किया था कि भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध के मामले में पति और पत्नी के बीच समझौते को ध्यान में रखते हुए वर्ष 2006 में दोषमुक्ति हो गई थी और कांस्टेबल के पद के लिए आवेदन वर्ष 2013/2014 में आमंत्रित किए गए थे । यह दलील दी गई कि अपीलार्थी को उसके लिए, जो कुछ 7-8 वर्ष पहले घटित हुआ था, दंडित नहीं किया जा सकता था और वह भी जब उस समय अपीलार्थी की आयु लगभग 18 वर्ष थी और अपनी पढ़ाई कर रहा था । यह दलील दी गई कि अत:

अपीलार्थी को केवल इस आधार पर नियुक्ति से इनकार नहीं किया जा सकता था कि वह भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध के एक मामले में और वह भी 7 वर्ष पहले अंतर्ग्रस्त था और जिसमें उसे दोषमुक्त कर दिया गया था ।

4. प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से हाजिर होने वाली विद्वान् उप महाधिवक्ता सुश्री अंकिता चौधरी ने वर्तमान अपीलों का विरोध करते हुए **अवतार सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय तथा **राजस्थान राज्य विद्युत प्रसारण निगम लि. और अन्य** बनाम **अनिल कनवारिया**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के एक हाल ही के विनिश्चय का अवलंब लिया ।

4.1 यह दलील दी गई कि पूर्वोक्त विनिश्चय में इस न्यायालय द्वारा यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया है कि जब कोई अभ्यर्थी/कर्मचारी किसी आपराधिक मामले में अंतर्ग्रस्त है, तो आपराधिक पूर्ववृत्त के ऐसे व्यक्ति को नियुक्त करना या न करना अंततोगत्वा नियोजक पर है ।

5. हमने संबंधित पक्षकारों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेलों को विस्तारपूर्वक सुना ।

6. आरंभ में, यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि अपीलार्थी ने कांस्टेबल के पद के लिए आवेदन वर्ष 2013 में किया था और उसे मेधावी पाया गया था तथा कांस्टेबल के रूप में नियुक्त किए जाने के लिए अर्हित पाया था । उसने सत्यापन प्ररूप में ही यह घोषणा की थी कि उसका पूर्व में भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध के लिए विचारण किया गया था । इसलिए सत्य और सही तथ्यों को प्रकट करने में अपीलार्थी द्वारा कुछ नहीं छिपाया गया था । यह भी उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि अपीलार्थी को तारीख 30 अक्तूबर, 2006 के निर्णय और आदेश द्वारा अर्थात् उसके द्वारा कांस्टेबल के पद के लिए आवेदन करने से 7 वर्ष पूर्व भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध के लिए दोषमुक्त कर दिया गया था । विचारण

---

[1] (2021) 10 एस. सी. सी. 136.

न्यायालय द्वारा पारित किए गए दोषमुक्ति के निर्णय और आदेश से यह प्रतीत होता है कि यह एक वैवाहिक विवाद था जिसमें समझौता हो गया था और मूल शिकायतकर्ता ने न्यायालय के बाहर समझौते को देखते हुए अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन नहीं किया था तथा उसे पक्षद्रोही घोषित किया गया था और मामले में परीक्षा किए गए अन्य अभियोजन साक्षी (साक्षियों) ने अभियोजन पक्ष के वृत्तांत की संपुष्टि नहीं की थी । इस प्रकार, यह देखा जा सकता है कि अपीलार्थी ने भारतीय दंड संहिता के अन्य अपराधों के लिए अभियोजन का सामना नहीं किया था । इसलिए वर्ष 2001 में जो कुछ घटित हुआ था और धारा 498क के अधीन अपराध के लिए दांडिक मामले की परिणति वर्ष 2006 में दोषमुक्ति में हो गई थी, इसलिए अपीलार्थी को वर्ष 2013/2014 में नियुक्ति से इनकार नहीं किया जाना चाहिए था । जिस अपराध के लिए उसका विचारण किया गया था और जिसकी परिणति अंततोगत्वा दोषमुक्ति में हो गई थी, वह वैवाहिक विवाद से उद्भूत हुआ था जो अंततोगत्वा न्यायालय के बाहर हुए समझौते के कारण समाप्त हो गया था । इन परिस्थितियों में और मामले के विशिष्ट तथ्यों में अपीलार्थी को एकमात्र इस पूर्वोक्त आधार पर नियुक्ति से इनकार नहीं किया जा सकता था कि उसका भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध के लिए और वह भी उस अपराध के लिए जो अभिकथित रूप से वर्ष 2001 में घटित हुआ था और जिसके लिए उसे वर्ष 2006 में चाहे (पति और पत्नी के बीच) समझौते के आधार पर दोषमुक्त भी कर दिया गया था ।

7. अब जहां तक प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से हाजिर होने वाली विद्वान् काउंसेल द्वारा अवलंब लिए गए **अनिल कनवारिया** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब लेने का संबंध है, तथ्यों के आधार पर उक्त विनिश्चय लागू नहीं होगा । वह ऐसा मामला था जहां अभ्यर्थी ने पूर्ववृत्त को छिपाया था और तात्विक तथ्यों को छिपाकर कपट/दुर्व्यपदेशन करके और तात्विक तथ्य को छिपाकर नियुक्ति अभिप्राप्त की थी । उस मामले में कर्मचारी को भारतीय दंड संहिता की धारा 343 और 323 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था । अत: नियुक्ति के समय उसे दोषसिद्ध पाया गया था । इसलिए इस

न्यायालय द्वारा उसकी सेवा समाप्ति को कायम रखा गया था । प्रस्तुत मामले में ऐसी स्थिति नहीं है । न तो अपीलार्थी की ओर से कोई तात्विक तथ्य छिपाया गया था और न ही उसे भारतीय दंड संहिता के अधीन किसी अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया था । अभिकथित घटना वर्ष 2001 की थी जिसकी परिणति वर्ष 2006 में दोषमुक्ति में हो गई थी और उसने कांस्टेबल के पद के लिए आवेदन वर्ष 2013/2014 में किया था ।

8. उपरोक्त को दृष्टिगत करते हुए और ऊपर उल्लिखित कारणों से उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने कांस्टेबल के पद पर अपीलार्थी की नियुक्ति से इनकार करके और विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित किए गए निर्णय और आदेश को अभिखंडित और अपास्त करके तात्विक गलती की है । तथापि, साथ ही साथ, काम नहीं तो वेतन नहीं के सिद्धांत के आधार पर अपीलार्थी वास्तविक नियुक्ति की तारीख से सभी फायदों का हकदार होगा ।

9. उपरोक्त को दृष्टिगत करते हुए और ऊपर उल्लिखित कारणों से उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा पारित किए गए निर्णय (निर्णयों) और आदेश (आदेशों) को अभिखंडित और अपास्त किया जाता है/किए जाते हैं । विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित किए गए निर्णय और आदेश को कांस्टेबल के रूप में अपीलार्थी की अभ्यर्थिता और अनियुक्ति के रद्दकरण के आदेश को अपास्त करने की सीमा तक तद्द्वारा प्रत्यावर्तित किया जाता है । प्रत्यर्थी (प्रत्यर्थियों) को अपीलार्थी, जैसा कि अन्यथा उसे कांस्टेबल के पद के लिए मेधावी अर्हित पाया गया था, को आज से चार सप्ताह के भीतर कांस्टेबल के पद पर नियुक्त करने का निदेश दिया जाता है । तथापि, यह मत व्यक्त किया जाता है कि वह सभी फायदों के लिए केवल वास्तविक नियुक्ति की तारीख से हकदार होगा । वर्तमान अपीलें पूर्वोक्त सीमा तक मंजूर की जाती हैं । खर्चे के लिए कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

अपीलें मंजूर की गईं ।

जस.

[2022] 4 उम. नि. प. 344

सुखपाल सिंह खैरा

बनाम

पंजाब राज्य

[2019 की दांडिक अपील सं. 885]

5 दिसंबर, 2022

न्यायमूर्ति एस. अब्दुल नज़ीर, न्यायमूर्ति बी. आर. गवई, न्यायमूर्ति ए. एस. बोपन्ना, न्यायमूर्ति रामासुब्रमण्यन और न्यायमूर्ति बी. वी. नागरत्ना

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 319 – अपराध के दोषी प्रतीत होने वाले अन्य व्यक्तियों के विरुद्ध कार्यवाही करने की शक्ति – अतिरिक्त अभियुक्त को समन करने का प्रक्रम – जहां पहले से विचारण किए जा रहे अन्य अभियुक्तों के विरुद्ध दोषसिद्धि का निर्णय सुनाया गया हो, वहां धारा 319 के अधीन शक्ति का प्रयोग दंडादेश का आदेश सुनाए जाने से पूर्व और दोषमुक्ति की दशा में इस शक्ति का प्रयोग दोषमुक्ति का आदेश सुनाए जाने से पूर्व किया जाना चाहिए किंतु दोषसिद्धि की दशा में यदि दंडादेश का निर्णय उसी दिन पारित किया गया है तो इसकी परीक्षा प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर की जानी होगी और यदि ऐसा समन आदेश दोषमुक्ति के आदेश के पश्चात् या दोषसिद्धि की दशा में दंडादेश अधिरोपित करने के पश्चात् किया जाता है तो वह संधार्य नहीं होगा ।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 – धारा 319 – अपराध के दोषी प्रतीत होने वाले अन्य व्यक्तियों के विरुद्ध कार्यवाही करने की शक्ति – जहां किसी अपराध के फरार अभियुक्तों के विरुद्ध विचारण को विभाजित (द्विविभाजित) किया गया हो और बाद में उनकी उपस्थिति सुनिश्चित करने के पश्चात् कार्यवाही चल रही हो/लंबित हो, तो वहां विचारण न्यायालय को अतिरिक्त अभियुक्तों को समन करने की शक्ति तब है जब द्विविभाजित किए गए विचारण में अभिलिखित किए गए साक्ष्य से

समन किए जाने वाले अभियुक्तों की अपराध में अंतर्ग्रस्तता इंगित होती हो, किंतु यदि ऐसी शक्ति का प्रयोग मुख्य विचारण के समाप्त होने से पूर्व न किया गया हो तो मुख्य विचारण में अभिलिखित किए गए साक्ष्य के आधार पर ऐसा समन आदेश नहीं किया जा सकता ।

इस मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि पुलिस थाने में 11 अभियुक्तों के विरुद्ध स्वापक ओषधि और मन:प्रभावी पदार्थ अधिनियम की विभिन्न धाराओं के अतिरिक्त आयुध अधिनियम और सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम के अधीन एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई थी । आरोपपत्र में 10 अभियुक्तों को समन किया गया था और सेशन न्यायालय के समक्ष विचारण किया गया था । यद्यपि पुलिस द्वारा दूसरा आरोपपत्र फाइल किया गया था जिसमें इस अपील में अपीलार्थी का नाम अभियुक्त के रूप में नहीं था । साक्षियों द्वारा अपीलार्थी को नामित नहीं किया गया था । आरंभ में अभिलिखित किए साक्ष्य के पश्चात् अभियोजन पक्ष ने अभि. सा. 4 और 5 को फिर से बुलाने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 311 के अधीन एक आवेदन फाइल किया, जिसे मंजूर किया गया । फिर से बुलाए गए उक्त साक्षियों की आगे परीक्षा करने पर उन्होंने अपीलार्थी का नाम लिया । अभियोजन पक्ष ने उसके पश्चात् सेशन मामले में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 का अवलंब लेते हुए अपीलार्थी सहित पांच अतिरिक्त अभियुक्तों को समन करने के लिए आवेदन किया । उक्त 2019 के सेशन मामला सं. 289 में 11 अभियुक्तों में से 10 के विरुद्ध कार्यवाहियां चल रहीं थी और चूंकि एक अभियुक्त उपलब्ध नहीं था इसलिए उसके संबंध में मामले को विभाजित किया गया था । उस तारीख को जब धारा 319 के अधीन आवेदन फाइल किया गया था तब एकमात्र लंबित कार्यवाही 2015 के सेशन मामला सं. 289 में थी । उस बाबत, 10 अभियुक्तों के विरुद्ध कार्यवाहियों के संबंध में विद्वान् सेशन न्यायाधीश ने तारीख 31 अक्तूबर, 2017 को निर्णय सुनाया जिसके द्वारा अभियुक्तों में से एक को दोषमुक्त कर दिया गया, जबकि शेष 9 अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया गया और तारीख 31 अक्तूबर, 2017 को ही दंडादेश अधिरोपित किया गया । विद्वान् सेशन न्यायाधीश ने उसी दिन अर्थात् तारीख 31

अक्तूबर, 2017 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन फाइल किए गए आवेदन को भी मंजूर किया और अपीलार्थी को विचारण का सामना करने के लिए समन किया । अपीलार्थी ने उसे विचारण का सामना करने के लिए समन करने वाले तारीख 31 अक्तूबर, 2017 के आदेश को उच्च न्यायालय में चुनौती दी, चूंकि उसके अनुसार ऐसा आदेश विधि में संधार्य नहीं है क्योंकि वह विद्वान् सेशन न्यायालय के समक्ष लंबित कार्यवाही में पारित नहीं किया गया था क्योंकि उस प्रक्रम पर जब विद्वान् सेशन न्यायाधीश द्वारा समन करने की शक्ति का प्रयोग किया गया था तब दोषसिद्धि और दंडादेश का निर्णय पहले ही तारीख 31 अक्तूबर, 2017 को पारित किया जा चुका था । उक्त आदेश को चुनौती देने वाले पुनरीक्षण आवेदन को उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया । उच्च न्यायालय के निर्णय को उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल करके चुनौती दी गई । इस अपील को इस न्यायालय के दो माननीय न्यायाधीशों की न्यायपीठ के समक्ष सुना गया जिसमें समन करने वाले आदेश को चुनौती देने के अनुक्रम में शशिकांत सिंह **बनाम** तारकेश्वर सिंह वाले मामले में और हरदीप सिंह **बनाम** पंजाब राज्य वाले मामले में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन प्रयोक्तव्य शक्ति के संदर्भ में दिए गए इस न्यायालय के विनिश्चयों का उल्लेख किया गया । इस संदर्भ में, इस न्यायालय के माननीय दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ की यह राय थी कि उस वास्तविक प्रक्रम की बाबत प्रश्न पर प्राधिकारवान् रूप से विचार किए जाने की आवश्यकता है जिस पर विचारण को समाप्त हुआ कहा जाता है चूंकि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन शक्ति असाधारण प्रकृति की है । इस दृष्टि से, विधि के निम्नलिखित सारवान् प्रश्न और आगे विचार करने के लिए एक समुचित संख्या की न्यायपीठ का गठन करने के लिए मामलों को भारत के माननीय मुख्य न्यायमूर्ति के समक्ष प्रस्तुत किया गया । माननीय मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा तद्नुसार इन उठाए गए प्रश्नों (I) क्या विचारण न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन उस समय अतिरिक्त अभियुक्त को समन करने की शक्ति है जब अन्य सह-अभियुक्तों के संबंध में विचारण समाप्त हो गया है और उसी तारीख को समन करने का आदेश सुनाने से पूर्व दोषसिद्धि का निर्णय सुनाया गया

है ? (II) क्या विचारण न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन उस समय अतिरिक्त अभियुक्त को समन करने की शक्ति है जब कतिपय अन्य फरार अभियुक्तों (जिनकी उपस्थिति को बाद में सुनिश्चित किया गया) के संबंध में विचारण को मुख्य विचारण से विभाजित करने के कारण चल रहा है/लंबित है ? (III) वे मार्गदर्शक सिद्धांत क्या हैं जिनका सक्षम न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए अवश्य अनुसरण करना चाहिए ?" पर विचार करने के लिए पांच न्यायाधीशों की न्यायपीठ का गठन किया गया । न्यायपीठ द्वारा उक्त प्रश्नों का उत्तर देते हुए,

अभिनिर्धारित – दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के सूक्ष्म परिशीलन से यह उपदर्शित होता है कि किसी ऐसे व्यक्ति को, जो मामले में अभियुक्त नहीं है, को समन करने के लिए न्यायालय को प्रदान की गई शक्ति उस समय है जब विचारण के दौरान साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि अपराध करने में ऐसे व्यक्ति की भूमिका है । इसलिए न्यायालय ऐसे किसी व्यक्ति को समन करने के लिए स्वतंत्र होगा जिससे अभियुक्त के साथ उसका विचारण किया जा सके और ऐसी शक्ति अनन्य रूप से न्यायालय को है । स्पष्ट रूप से, जब अतिरिक्त अभियुक्त को बुलाने और ऐसे व्यक्ति का पहले से आरोपित उस अभियुक्त के साथ विचारण करने, जिसके विरुद्ध विचारण चल रहा है, की ऐसी शक्ति है तो इस शक्ति का प्रयोग विचारण की समाप्ति से पूर्व किया जाना होगा । 'विचारण की समाप्ति' का अर्थ प्रस्तुत मामले में साक्ष्य अभिलिखित किए जाने के प्रक्रम तक के रूप में नहीं लगाया जा सकता अपितु इसे निर्णय सुनाए जाने से पूर्व के प्रक्रम के रूप में समझा जाना चाहिए चूंकि निर्णय सुना दिए जाने पर विचारण समाप्त हो जाता है चूंकि ऐसा समय न आने तक न्यायालय द्वारा अभियुक्त का विचारण किया जा रहा होता है । (पैरा 20)

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 232, 235 और 353 के उपबंधों के परिशीलन से यह दिखाई देता है कि यदि सेशन न्यायालय अभिलिखित किए गए साक्ष्य का विश्लेषण करते समय यह पाता है कि अभियुक्त को अपराध कारित किए जाने का दोषी ठहराने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है,

तो न्यायाधीश के लिए यह अपेक्षित है कि दोषमुक्ति का आदेश अभिलिखित करे । उस दशा में, विद्वान् न्यायाधीश द्वारा आगे कुछ और नहीं किया जाना है और इसलिए उस प्रक्रम पर विचारण समाप्त हो जाता है । ऐसे मामलों में जहां यह बात दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 232 के अधीन उद्भूत होती है और दोषमुक्ति का आदेश अभिलिखित किया जाता है तथा जब एक से अधिक अभियुक्त हैं या एकमात्र अभियुक्त है और दोषमुक्त किए गए हैं/किया गया है, तो ऐसे मामलों में विचारण समाप्त हो जाने के कारण दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन यथा अनुध्यात साक्ष्य के आधार पर अभियुक्त को समन करने की न्यायालय की शक्ति का अवलंब लिया जा सकेगा और दोषमुक्ति का निर्णय सुनाए जाने से पूर्व प्रयोग किया जा सकेगा । इस बारे में भी मस्तिष्क का प्रयोग किया जाएगा कि क्या उसका नए सिरे से विचारण करते समय पृथक् विचारण किया जाना चाहिए या संयुक्त विचारण किया जाना चाहिए । ऐसे आदेश के पश्चात् वह उस अभियुक्त की दोषमुक्ति का निर्णय सुनाने के लिए स्वतंत्र होगा जिसका पहले विचारण किया गया था । तथापि, यदि विद्वान् न्यायाधीश इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि अभियुक्त को दोषसिद्ध किया जाना है, तो दोषसिद्धि का आदेश दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 235 के अधीन अनुध्यात अनुसार निर्णय के द्वारा किया जाएगा । इसकी उपधारा (2) में यह उपबंधित है कि यदि विद्वान् न्यायाधीश अभियुक्त को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 के अधीन परिवीक्षा पर छोड़े जाने का फायदा देने की कार्यवाही नहीं करता है, तो विद्वान् न्यायाधीश दंडादेश के प्रश्न पर अभियुक्त को सुनेगा और फिर विधि के अनुसार उस पर दंडादेश अधिरोपित करेगा । इसलिए यह दिखाई पड़ता है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 235 दो भागों में विभाजित है, पहला दोषसिद्धि अभिलिखित करना और यदि दोषसिद्धि अभिलिखित की जाती है, तो केवल सुने जाने का अवसर देने के पश्चात् दंडादेश अधिरोपित किया जाना है । दंडादेश पर सुनवाई करते समय यदि यह पाया जाता है कि अभियुक्त को पहले दोषसिद्ध किया गया था और यदि अभियुक्त इस बात को स्वीकार नहीं करता है, तो विद्वान् न्यायाधीश के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 236 के अधीन अनुध्यात अनुसार उस पहलू पर निष्कर्ष अभिलिखित करना अपेक्षित

है । इसके अतिरिक्त, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 353 में उस रीति को उपबंधित किया गया है जिसमें निर्णय सुनाया जाना अपेक्षित है और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 354 में निर्णय की भाषा और अंतर्वस्तुओं का उल्लेख है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 354 की उपधारा (1)(घ) और उपधारा (2) से (6) से यह उपदर्शित होता है कि दोषसिद्धि का आदेश किए जाने के पश्चात् भी विद्वान् न्यायाधीश द्वारा दंडादेश अधिरोपित करने के लिए विनिर्दिष्ट प्रक्रिया का अनुसरण किया जाना और दंड की कठोरता के लिए कारण देना अपेक्षित है जिससे यह दर्शित होता है कि यह एक सतत् प्रक्रिया है जिसमें विद्वान् न्यायाधीश से अपेक्षा की जाती है कि अपराध के कारित करने में अंतर्ग्रस्तता की प्रकृति, उसकी गंभीरता का अवधारण करने के लिए अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर अपने मस्तिष्क का प्रयोग करे और दंडादेश अधिरोपित करे जैसा कि सिविल कार्यवाही में नहीं किया जाता है जहां डिक्री यद्यपि निर्णय के आधार पर बनाना एक अनुसचिवीय कृत्य है । उपरोक्त पहलुओं से यह उपदर्शित होता है कि दोषसिद्धि का निर्णय सुनाए जाने के पश्चात् भी विचारण पूर्ण नहीं होता है चूंकि विद्वान् सेशन न्यायाधीश से उस साक्ष्य पर अपने मस्तिष्क का प्रयोग करने की अपेक्षा की जाती है जो उस आरोप की गंभीरता जिसके लिए अभियुक्त दोषी पाया जाता है, जब अपराध में एक से अधिक अभियुक्त हों तब किसी विशिष्ट अभियुक्त की भूमिका का अवधारण करने के लिए अभिलेख पर उपलब्ध है और उस आलोक में समुचित दंडादेश अधिनिर्णीत करेगा । इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि केवल दोषसिद्धि का निर्णय सुनाने पर विचारण पूर्ण हो जाता है, यद्यपि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 232 के अधीन अनुध्यात अनुसार दोषमुक्ति की दशा में ऐसा हो सकता है चूंकि उस दशा में विद्वान् न्यायाधीश द्वारा दोषमुक्ति का आदेश अभिलिखित करने के सिवाय आगे कुछ नहीं किया जाना होता है जिसके परिणामस्वरूप विचारण का समापन हो जाता है । (पैरा 22, 23 और 24)

उपरोक्त कारणों से निर्देशित किए गए प्रश्नों का उत्तर निम्नलिखित प्रकार से दिया जाता है –

जहां अभियुक्त की दोषसिद्धि का निर्णय है वहां दंड प्रक्रिया संहिता

की धारा 319 के अधीन शक्ति का अवलंब और इसका प्रयोग दंडादेश का आदेश सुनाए जाने के पूर्व किया जाना चाहिए । दोषमुक्ति की दशा में, इस शक्ति का प्रयोग दोषमुक्ति का आदेश सुनाए जाने के पूर्व किया जाना चाहिए । अत: दोषसिद्धि की दशा में समन आदेश दंडादेश अधिरोपित करके विचारण का समापन होने से पूर्व होना चाहिए । यदि आदेश उसी दिन पारित किया जाता है, तो इसकी परीक्षा प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में करनी होगी और यदि ऐसा समन आदेश या तो दोषमुक्ति के आदेश के पश्चात् या दोषसिद्धि की दशा में दंडादेश अधिरोपित करने के पश्चात् पारित किया जाता है, तो वह संधार्य नहीं होगा । (पैरा 33)

विचारण न्यायालय को उस समय अतिरिक्त अभियुक्त को समन करने की शक्ति है जब फरार अभियुक्त की उपस्थिति सुनिश्चित करने के पश्चात् उसकी बाबत विचारण आंरभ हो जाता है और यह इस बात के अध्यधीन होगी कि विभाजित (द्विभाजित) किए गए विचारण में अभिलिखित किए गए साक्ष्य से समन किए जाने की ईप्सा करने वाले अभियुक्त की अंतर्ग्रस्तता इंगित होती हो । किंतु समाप्त हो गए मुख्य विचारण में अभिलिखित किया गया साक्ष्य समन आदेश का आधार नहीं हो सकता यदि ऐसी शक्ति का प्रयोग मुख्य विचारण में इसका समापन होने तक नहीं किया गया है । (पैरा 33)

(i) यदि सक्षम न्यायालय अभिलिखित किए गए साक्ष्य के आधार पर, दोषमुक्ति या दंडादेश का आदेश पारित किए जाने से पूर्व, विचारण के किसी प्रक्रम पर किसी अन्य व्यक्ति की अपराध कारित करने में अंतर्ग्रस्तता के संबंध में साक्ष्य पाता है या यदि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन आवेदन फाइल किया जाता है, तो उस प्रक्रम पर विचारण को रोक दिया जाएगा ।

(ii) तदुपरांत न्यायालय पहले अतिरिक्त अभियुक्त को समन करने की आवश्यकता या अन्यथा का विनिश्चय करेगा और उस पर आदेश पारित करेगा ।

(iii) यदि न्यायालय का विनिश्चय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन शक्ति का प्रयोग करने और अभियुक्त को समन करने का

है, तो ऐसा समन आदेश मुख्य मामले में विचारण में आगे अग्रसर होने से पूर्व पारित किया जाएगा ।

(iv) यदि अतिरिक्त अभियुक्त को समन करने का आदेश पारित किया जाता है, तो उस प्रक्रम पर निर्भर करते हुए जिस पर यह पारित किया जाता है, न्यायालय इस तथ्य पर भी अपने मस्तिष्क का प्रयोग करेगा कि क्या ऐसे समन किए गए अभियुक्त का विचारण अन्य अभियुक्तों के साथ किया जाना चाहिए या पृथक् रूप से ।

(v) यदि विनिश्चय संयुक्त विचारण करने का है, तो नए सिरे से विचारण समन किए गए अभियुक्त की उपस्थिति सुनिश्चित करने के पश्चात् ही आरंभ किया जाएगा ।

(vi) यदि विनिश्चय यह है कि समन किए गए अभियुक्त का पृथक् रूप से विचारण किया जा सकता है, तो ऐसा आदेश किए जाने पर न्यायालय के लिए उन अभियुक्तों के विरुद्ध विचारण जारी रखने और समाप्त करने में कोई अड़चन नहीं होगी जिनके विरुद्ध कार्यवाही चल रही थी ।

(vii) यदि ऊपर (i) के अनुसार रोकी गई कार्यवाही ऐसे मामले में है जहां उन अभियुक्तों को, जिनका विचारण किया गया था, दोषमुक्त किया जाना है और विनिश्चय यह है कि समन किए गए अभियुक्त का नए सिरे से पृथक् रूप से विचारण किया जा सकता है, तो मुख्य मामले में दोषमुक्ति का निर्णय पारित करने में कोई अड़चन नहीं होगी ।

(viii) यदि इस शक्ति का अवलंब या प्रयोग मुख्य विचारण में इसके समापन तक नहीं किया जाता है और यदि विभाजित (द्विभाजित) मामला है, तो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन शक्ति का अवलंब या प्रयोग केवल तब किया जा सकता है यदि इस आशय का ऐसा साक्ष्य है जिससे विभाजित (द्विभाजित) विचारण में समन किए जाने वाले अतिरिक्त अभियुक्त की अंतर्ग्रस्तता इंगित होती हो ।

(ix) यदि बहस सुने जाने और मामला आरक्षित रखने के पश्चात्

न्यायालय के लिए दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन शक्ति का अवलंब लेने और प्रयोग करने का अवसर उद्भूत होता है, तो न्यायालय के लिए समुचित प्रक्रिया यह है कि वह उस पर फिर से सुनवाई को अभिलिखित करे ।

(x) उसे फिर से सुनवाई के लिए अभिलिखित करने पर, समन करने के बारे में विनिश्चय करने के लिए ऊपर अधिकथित प्रक्रिया; संयुक्त विचारण करने या अन्यथा के बारे में विनिश्चय किया जाएगा और तद्नुसार कार्यवाही की जाएगी ।

(xi) यहां तक कि ऐसे मामले में भी उस प्रक्रम पर यदि विनिश्चय अतिरिक्त अभियुक्त को समन करने और एक संयुक्त विचारण करने का है, तो फिर से विचारण किया जाएगा और नए सिरे से कार्यवाहियां की जाएंगी ।

(xii) यदि उस परिस्थिति में, समन किए गए अभियुक्त के मामले में विनिश्चय पहले उपदर्शित किए गए अनुसार पृथक् विचारण करने का है, तो

(क) मुख्य मामले का दोषसिद्धि और दंडादेश सुनाकर विनिश्चय किया जा सकेगा और फिर समन किए गए अभियुक्त के विरुद्ध नए सिरे से कार्यवाही की जा सकेगी ;

(ख) दोषमुक्ति के मामले में, मुख्य मामले में उस आशय का आदेश पारित किया जाएगा और फिर समन किए गए अभियुक्त के विरुद्ध नए सिरे से कार्यवाही की जाएगी । (पैरा 33)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2021] 2021 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 632 :
मंजीत सिंह बनाम **हरियाणा राज्य और अन्य** ; 32

[2014] (2014) 3 एस. सी. सी. 92 :
हरदीप सिंह बनाम **पंजाब राज्य** ; 5, 8

[2013] (2013) 13 एस. सी. सी. 1 :
याकूब अब्दुल रज़ाक मेमन बनाम
महाराष्ट्र राज्य ; 26

[2007] (2007) 7 एस. सी. सी. 378 :
राजेन्द्र सिंह बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**
और एक अन्य ; 31

[2002] (2002) 5 एस. सी. सी. 738 :
शशिकांत सिंह बनाम **तारकेश्वर सिंह** ; 5, 17, 19

[1995] (1995) 2 एस. सी. सी. 513 :
रामा नारंग बनाम **रमेश नारंग और अन्य** । 25

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2019 की दांडिक अपील सं. 885.

2017 के दांडिक पुनरीक्षण सं. 4070 और 2017 के दांडिक पुनरीक्षण सं. 4113 में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के तारीख 17 नवंबर, 2017 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री पी. एस. पटवालिया, ज्येष्ठ अधिवक्ता, (सुश्री) निहारिका आहलुवालिया, सुधीर वालिया, अर्पित शर्मा, (सुश्री) हर्षिता वर्मा, गौरवजीत सिंह पटवालिया, अजीत सिंह जौहर, हर्षित सेठी, महताब सिंह खैरा, कपिल दहिया, देवांशु यादव, अमित के. नैन, पुनीत सिंह बिंद्रा, नीरज कुमार वर्मा, यशर्थ कांत, सिमरनजीत, चिन्मय खलादकर, अभिनव अग्निहोत्री, सलोनी प्रांजपे, अभिषेक शर्मा और डी. के. पाल

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री तुषार मेहता, महा सालिसिटर, एस. वी. राजू, अपर महा सालिसिटर, अरदेंदुमौली कुमार प्रसाद, सौरभ मिश्रा, अपर महाधिवक्तागण, विनोद घई,

ज्येष्ठ अधिवक्ता/महाधिवक्ता, अमन पाल, गौरव धामा, अपर महाधिवक्तागण, (सुश्री) कनिका आहूजा, (सुश्री) कीर्ति आहूजा, (सुश्री) प्रियंका सी., मयंक दहिया, (सुश्री) महिमा डोगरा, (सुश्री) भूपिन्दर, अजय पाल, (सुश्री) रानू पुरोहित, मुकेश कुमार मरोड़िया, ज़ोहेब हुसैन, कनु अग्रवाल, अनिरुद्ध भट्ट, अदित खुराना, पदमेश मिश्रा, उदय खन्ना, अंकित भाटिया, (सुश्री) मधुमिता, अंशुमान सिंह, हर्ष पाल सिंह, हितार्थ राजा, विकास बंसल, विष्णु शंकर जैन, शशि शेखर कुमार, (सुश्री) तरुणा अरदेंदुमौली प्रसाद, अमरितेश राज, (सुश्री) श्रेया श्रीवास्तव, आशीष मदान, अमन सिंह भदोरिया, (सुश्री) अनन्या साहू, अभिनव श्रीवास्तव और सन्नी चौधरी

मध्यक्षेपी की ओर से — सर्वश्री आशीष दीक्षित, रवि शर्मा और एस. नागमुथु, ज्येष्ठ अधिवक्ता (न्याय-मित्र)

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति ए. एस. बोपन्ना ने दिया ।

न्या. बोपन्ना – उपरोक्त अपील में 2017 के दांडिक पुनरीक्षण सं. 4070 और 2017 के दांडिक पुनरीक्षण सं. 4113 में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 17 नवंबर, 2017 को पारित किए गए आदेश को चुनौती दी गई है । उक्त आदेश के द्वारा उच्च न्यायालय ने दांडिक पुनरीक्षण आवेदनों को खारिज कर दिया और विचारण न्यायालय द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में 'दंड प्रक्रिया संहिता') की धारा 319 के अधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए अपीलार्थी को अतिरिक्त अभियुक्त के रूप में समन करते हुए तारीख 31

अक्तूबर, 2017 को पारित किए गए आदेश को कायम रखा । तथ्यों का वर्णन करने के प्रयोजनार्थ, 2019 की दांडिक अपील सं. 885 में मामले के तथ्यों का उल्लेख किया जाता है ।

2. वह स्थिति जिसके कारण अपीलार्थी को समन किया गया, यह है कि तारीख 5 मार्च, 2015 को पुलिस थाना सदर, जलालाबाद में 11 अभियुक्तों के विरुद्ध स्वापक ओषधि और मन:प्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 की धारा 21, 24, 25, 27, 28, 29 और 30 आयुध अधिनियम की धारा 25-क और सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 की धारा 66 के अधीन अपराध के लिए एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई थी । तारीख 6 सितंबर, 2015 के आरोप पत्र में दस अभियुक्तों को समन किया गया था और 2015 के सेशन मामला सं. 289 में विचारण किया गया था । यद्यपि पुलिस द्वारा दूसरा आरोप पत्र फाइल किया गया था किंतु इसमें इस अपील में अपीलार्थी का अभियुक्त के रूप में नाम नहीं था ।

3. विद्वान् सेशन न्यायाधीश के समक्ष किए गए विचारण में भी आरंभ में साक्षियों द्वारा अपीलार्थी के नाम का उल्लेख नहीं किया गया था । आरंभिक साक्ष्य अभिलिखित करने के पश्चात् अभियोजन पक्ष ने अभि. सा. 4 और अभि. सा. 5 को पुन: बुलाने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 311 के अधीन तारीख 31 जुलाई, 2017 को एक आवेदन फाइल किया, जिसे मंजूर किया गया । उक्त पुन: बुलाए गए साक्षियों की आगे की गई परीक्षा में उन्होंने इस अपील में अपीलार्थी को नामित किया । अभियोजन पक्ष ने उसके पश्चात् 2015 के उक्त सेशन मामला सं. 289 में इस अपील में अपीलार्थी सहित पांच अतिरिक्त अभियुक्तों को समन करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 का अवलंब लेते हुए तारीख 21 सितंबर, 2017 को एक आवेदन फाइल किया । अतिरिक्त अभियुक्तों को समन करने की मांग अभि. सा. 4, अभि. सा. 5 और अभि. सा. 13 द्वारा दिए गए साक्ष्य के आधार पर की गई थी ।

4. यह उल्लेखनीय है कि 2015 के सेशन मामला सं. 289 में की कार्यवाहियां 11 अभियुक्तों में से 10 अभियुक्तों के विरुद्ध थीं और चूंकि

एक अभियुक्त उपलब्ध नहीं था इसलिए उसकी बाबत मामले को विभाजित (द्विवभाजित) किया गया था और बाद में इसे तारीख 3 सितंबर, 2019 को 2019 के सेशन मामला सं. 217 के रूप में संख्यांकित किया गया था । उस पृष्ठभूमि में, यह दिखाई देता है कि उस तारीख को जब दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन तारीख 21 सितंबर, 2017 को आवेदन फाइल किया गया था तब एकमात्र लंबित कार्यवाही 2015 के सेशन मामला सं. 289 में थी । इस विषय में 10 अभियुक्तों के विरुद्ध कार्यवाहियों के संबंध में विद्वान् सेशन न्यायाधीश ने तारीख 31 अक्तूबर, 2017 को निर्णय सुनाया, जिसके द्वारा अभियुक्तों में से एक को दोषमुक्त कर दिया गया, जबकि शेष 9 अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया गया और तारीख 31 अक्तूबर, 2017 को ही दंडादेश अधिरोपित किया गया । विद्वान् सेशन न्यायाधीश ने उसी दिन अर्थात् तारीख 31 अक्तूबर, 2017 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन फाइल किए गए आवेदन को भी मंजूर किया और अपीलार्थी को विचारण का सामना करने के लिए समन किया । यही वह पृष्ठभूमि है जिसमें अपीलार्थी ने उसे विचारण का सामना करने के लिए समन करने वाले तारीख 31 अक्तूबर, 2017 के आदेश को चुनौती दी, चूंकि उसके अनुसार ऐसा आदेश विधि में संधार्य नहीं है क्योंकि वह आदेश विद्वान् सेशन न्यायालय के समक्ष लंबित कार्यवाही में पारित नहीं किया गया था क्योंकि उस प्रक्रम पर जब विद्वान् सेशन न्यायाधीश द्वारा समन करने की शक्ति का प्रयोग किया गया था तब दोषसिद्धि और दंडादेश का निर्णय पहले ही तारीख 31 अक्तूबर, 2017 को पारित किया जा चुका था । उच्च न्यायालय द्वारा उक्त आदेश को चुनौती देने वाले 2017 के पुनरीक्षण आवेदन सं. 4070 और 4113 को खारिज कर दिया गया, जिसके परिणामस्वरूप वर्तमान कार्यवाहियां उद्भूत हुई हैं ।

5. प्रस्तुत अपील को तारीख 10 मई, 2019 को इस न्यायालय के दो माननीय न्यायाधीशों की न्यायपीठ के समक्ष सुना गया जिसमें समन करने वाले आदेश को चुनौती देने के अनुक्रम में **शशिकांत सिंह** बनाम **तारकेश्वर सिंह**[1] वाले मामले में और **हरदीप सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[2]

---

[1] (2002) 5 एस. सी. सी. 738.

[2] (2014) 3 एस. सी. सी. 92.

वाले मामले में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन प्रयोक्तवय शक्ति के संदर्भ में दिए गए इस न्यायालय के विनिश्चयों का उल्लेख किया गया । इस संदर्भ में, इस न्यायालय के माननीय दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ की यह राय थी कि उस वास्तविक प्रक्रम की बाबत प्रश्न पर प्राधिकारवान् रूप से विचार किए जाने की आवश्यकता है जिस प्रक्रम पर विचारण को समाप्त हुआ कहा जाता है चूंकि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन शक्ति असाधारण प्रकृति की है ।

6. इस दृष्टि से, विधि के निम्नलिखित सारवान् प्रश्न और आगे विचार करने के लिए उठाए गए और उठाए गए प्रश्नों पर विचार करने के लिए एक समुचित संख्या की न्यायपीठ का गठन करने के लिए मामलों को भारत के माननीय मुख्य न्यायमूर्ति के समक्ष प्रस्तुत किया गया । तद्नुसार, माननीय मुख्य न्यायमूर्ति ने इन उठाए गए प्रश्नों पर विचार करने के लिए इस न्यायपीठ का गठन किया, जो निम्नलिखित हैं :–

> "I. क्या विचारण न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन उस समय अतिरिक्त अभियुक्त को समन करने की शक्ति है जब अन्य सह-अभियुक्तों के संबंध में विचारण समाप्त हो गया है और समन करने का आदेश सुनाने से पूर्व उसी तारीख को दोषसिद्धि का निर्णय सुनाया गया है ?
>
> II. क्या विचारण न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन उस समय अतिरिक्त अभियुक्त को समन करने की शक्ति है जब कतिपय अन्य फरार अभियुक्तों (जिनकी उपस्थिति को बाद में सुनिश्चित किया गया) के संबंध में विचारण मुख्य विचारण से विभाजित करने के कारण चल रहा है/लंबित है ?
>
> III. वे मार्गदर्शक सिद्धांत क्या हैं जिनका सक्षम न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए अवश्य अनुसरण किया जाना चाहिए ?"

7. उपरोक्त प्रश्नों का उत्तर देने के लिए हमने अपीलार्थी की ओर

से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री पी. एस. पटवालिया और विद्वान् काउंसेल श्री पुनीत सिंह बिंद्रा को भी सुना जो संलग्न मामले में अपीलार्थी की ओर से हाजिर हुए । विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री एस. नागमुथु ने न्याय-मित्र के रूप में इस न्यायालय की सहायता की । श्री विनोद घई, महाधिवक्ता पंजाब राज्य की ओर से हाजिर हुए जबकि श्री ए. के. प्रसाद, विद्वान् अपर महाधिवक्ता उत्तर प्रदेश राज्य की ओर से हाजिर हुए । श्री एस. वी. राजू, अपर महा सालिसिटर भारत संघ की ओर से हाजिर हुए चूंकि अपीलार्थी के विरुद्ध कथित रूप से धन शोधन निवारण अधिनियम, 2002 के अधीन भी एक मामला रजिस्ट्रीकृत किया गया है । हमने विद्वान् काउंसेल श्री आशीष दीक्षित को भी सुना, जो मध्यक्षेपी-अभियोजक संगम (प्रासीक्यूटर्स एसोसिएशन) की ओर से हाजिर हुए ।

8. विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री पी. एस. पटवालिया द्वारा दी गई दलील का सार निम्नलिखित है :–

> एक व्यक्ति (इस अपील में अपीलार्थी) को अभियुक्त के रूप में समन करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन आदेश उस प्रक्रम पर पारित किया गया था जब विचारण पहले ही समाप्त हो गया था और यहां तक कि दंडादेश का निर्णय और आदेश भी सुना दिया गया था । यह दलील दी गई कि अत: उक्त आदेश दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 और **हरदीप सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले के अतिक्रमण में है, जिसमें पैरा 47 में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि इस शक्ति का प्रयोग निर्णय सुनाए जाने के पूर्व किया जाना चाहिए । इस शक्ति का प्रयोग केवल विचारण के लंबित रहने के दौरान किया जा सकता है, जो निर्णय सुनाए जाने की तारीख से पूर्व का प्रक्रम है । वास्तव में, यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 353(1) के अनुरूप भी है, जिसमें यह कहा गया है कि निर्णय साक्ष्य का परिशीलन करने के पश्चात् विचारण की समाप्ति के पश्चात् सुनाया जाना चाहिए और इसलिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 में यह आदिष्ट है कि इस शक्ति का प्रयोग केवल विचारण के दौरान किया जा सकता है और निष्कर्ष यह है कि जब एक बार विचारण समाप्त हो जाता है और

निर्णय सुना दिया जाता है, तो न्यायालय उस प्रक्रम पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन शक्ति का प्रयोग नहीं कर सकता । यह दलील देना कि इसका प्रयोग साथ-साथ किया जा सकता है, यह बात भी समान रूप से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 की अतिक्रमणकारी है और अधिकथित विधि स्पष्ट है कि इस शक्ति का प्रयोग निर्णय सुनाए जाने के पूर्व किया जाना चाहिए । संक्षेप में, यदि किसी अभियुक्त को समन किया जाना है, तो यह उस समय किया जाना चाहिए जब विचारण चल रहा हो । जिस क्षण विचारण समाप्त हो जाता है और मामले को निर्णय के लिए रख लिया जाता है, तब दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन शक्ति का प्रयोग करने के लिए प्रक्रम चला जाता है और न्यायालय उसके पश्चात् पदकार्य-निवृत्त हो जाता है । जब विचारण लंबित है, तो न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन किसी अभियुक्त को जोड़ सकता है किंतु जिस क्षण विचारण समाप्त हो जाता है और निर्णय सुना दिया जाता है, तब न्यायालय के समक्ष कोई कार्यवाहियां बाकी नहीं रह जाती हैं । जब न्यायालय अभियुक्त को दोषमुक्त या दोषसिद्ध करते हुए निर्णय सुना देता है, उसके पश्चात् कोई कार्यवाहियां, जो मूल आरोप पत्र फाइल करने के साथ आरंभ हुई थीं, लंबित नहीं रह जाती हैं । यह भी दलील दी गई कि यह मात्र एक प्रक्रिया संबंधी अतिक्रमण नहीं, बल्कि सारभूत अतिक्रमण है चूंकि यह शक्ति उस प्रक्रम अर्थात् जांच/विचारण तक परिसीमित है, जिसके दौरान इसका प्रयोग किया जा सकता है ।

9. श्री एस. नागमुथु, विद्वान् न्याय-मित्र द्वारा दी गई दलीलों का सार निम्नलिखित है :–

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 190 के अधीन संज्ञान लेने से पूर्व और निर्णय सुनाए जाने के पश्चात् न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन कोई शक्ति नहीं है और **हरदीप सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले को ध्यान में रखते हुए विचारण न्यायालय को उस समय अतिरिक्त अभियुक्त को समन करने की शक्ति नहीं है जब अन्य सह-अभियुक्तों की बाबत विचारण समाप्त हो गया है और उसी तारीख को दोषसिद्धि का निर्णय सुना दिया

गया है । सेशन विचारण में, अभियुक्त को दोषमुक्ति के आदेश द्वारा दोषमुक्त किया जा सकता है और यदि अभियुक्त को या तो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 232 या धारा 235 के अधीन आदेश पारित करके या निर्णय सुनाकर दोषमुक्त कर दिया जाता है, तो कार्यवाहियां समाप्त हो जाती हैं । जबकि यदि अभियुक्त को दोषसिद्ध किया जाता है, तो कार्यवाही फिर भी जारी रहती है क्योंकि उसे दंडादेश के प्रश्न पर सुना जाना है और वह उस प्रक्रम पर साक्ष्य प्रस्तुत करने का हकदार है । इसलिए जब अभियुक्त को दोषसिद्ध किया जाता है, तो विचारण दंडादेश पारित किए जाने के पश्चात् समाप्त हो जाता है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 353 को इस पृष्ठभूमि में समझा जाना चाहिए और इसलिए यह दलील नहीं दी जा सकती कि बहस सुनने के पश्चात् विचारण समाप्त हो जाता है । जांच/विचारण के दौरान अभिलेख पर जो साक्ष्य लाया गया है जिसमें अन्वेषण के दौरान एकत्रित साक्ष्य जैसे प्रथम इत्तिला रिपोर्ट, धारा 161, धारा 164 के अधीन कथन सम्मिलित हैं, उसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के प्रयोजनार्थ साक्ष्य नहीं समझा जा सकता । इसे लागू करते हुए, यह प्रकट होता है कि अन्य अभियुक्त के विरुद्ध किए गए पृथक् विचारण में लेखबद्ध किए गए साक्ष्य को प्रस्तुत मामले में साक्ष्य के रूप में नहीं समझा जा सकता । किंतु विभाजित (द्विभाजित) मामले में जहां एक पृथक् विचारण किया गया है और उस विचारण के दौरान यदि उस व्यक्ति के विरुद्ध जो पहले अभियुक्त नहीं है, अभिलेख पर कोई साक्ष्य आता है, तो केवल उस साक्ष्य के आधार पर उसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन अभियुक्त के रूप में क्रमबद्ध किया जा सकता है । जब किसी व्यक्ति को अतिरिक्त अभियुक्त के रूप में समन किया जाता है, तो यह न्यायालय का विवेकाधिकार है कि क्या दो या अधिक व्यक्तियों को उसी विचारण में आरोपित और विचारण किया जाए या नहीं ।

जहां तक नए जोड़े गए अभियुक्त का संबंध है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319(4) के अनुसार विचारण एक नया विचारण होना चाहिए । तथापि, यदि संयुक्त विचारण है, तो नया विचारण

विद्यमान अभियुक्तों सहित सभी अभियुक्तों के विरुद्ध किया जाना चाहिए । ऐसी स्थिति में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 273 को ध्यान में रखते हुए पहले ही अभिलिखित किया गया साक्ष्य नए जोड़े गए अभियुक्त के विरुद्ध साक्ष्य नहीं है । किसी मामले में, दो प्रकार का साक्ष्य नहीं हो सकता, एक विद्यमान अभियुक्तों के विरुद्ध और दूसरा जोड़े गए अभियुक्तों के विरुद्ध । परिणामत:, पहले ही अभिलिखित किया गया साक्ष्य विद्यमान अभियुक्त सहित किसी अभियुक्त के विरुद्ध कोई साक्ष्य नहीं होता है । नए सिरे से विचारण किया जाना चाहिए ।

10. पंजाब राज्य की ओर से विद्वान् महाधिवक्ता श्री विनोद घई द्वारा दी गई दलीलों का सार निम्नलिखित है :–

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 को पुर:स्थापित करने के पीछे विधानमंडल का आशय यह रोकथाम करना है कि कोई अपराधी बचकर न जाए और वास्तविक अभियुक्त की दोषिता को सिद्ध किया जा सके । इसी संदर्भ में न्यायालयों को ऐसे किसी व्यक्ति को समन करने के लिए सशक्त किया गया है जिसके द्वारा वह अपराध, जिसके लिए पहले ही आरोपपत्रित किए गए अभियुक्त विचारण का सामना कर रहे हैं, कारित किया गया प्रतीत होता है । ऐसे उपबंध का एक संकीर्ण निर्वचन करने से और अवांछित निर्बंधन लगाने से इस शक्ति के प्रयोजन को ही निष्फल करना होगा और इसके परिणामस्वरूप न्याय की हानि होगी । उक्त उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए ही एक रचनात्मक और उद्देश्यपूर्ण निर्वचन अंगीकार किया जाना चाहिए जो न्याय के हेतु को अग्रसर कर सके तथा न्यायालय के समाधानप्रद वह अपराध, जो विचारण की विषय-वस्तु है, कारित करने में उस व्यक्ति का अभियुक्त के रूप में विचारण करने के ऊपर उल्लिखित प्रकट उद्देश्य और प्रयोजन को पूरा करने के लिए न्यायालय को शक्ति प्रदत्त करते हुए कानून के आशय को कम न करता हो ।

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319(1) में स्पष्ट किया गया है कि किसे/किस प्रकार के व्यक्ति को विचारण का सामना करने के

लिए अतिरिक्त अभियुक्त के रूप में समन किया जा सकता है । "अन्य अभियुक्त के साथ विचारण किया जा सकता है" शब्द उस व्यक्ति की पहचान करने के लिए प्रयुक्त किया गया है जिसे अतिरिक्त अभियुक्त के रूप में समन और विचारण किया जा सकता है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन आदेश के विरुद्ध उच्चतर न्यायालयों के समक्ष पुनरीक्षण/अपील के लंबित रहने के दौरान मुख्य विचारण के समापन से वह आदेश केवल इस कारण अप्रवर्तनशील/अप्रभावी नहीं हो जाएगा कि जिस विचारण में ऐसा आदेश पारित किया गया था वह समाप्त हो गया था ।

न्यायालय ने अतिरिक्त अभियुक्त को समन करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन शक्ति का प्रयोग उस समय किया है जब अन्य फरार अभियुक्तों के संबंध में विचारण, जिसे मुख्य विचारण से द्विभाजित किया गया है, चल रहा है/लंबित है । उन अभियुक्तों के संबंध में विचारण लंबित है, जो पहले फरार थे और कुछ साक्ष्य आया है जिसके आधार पर न्यायालय द्वारा अतिरिक्त अभियुक्त को समन करना आवश्यक है । जब दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन आवेदन का विनिश्चय उसी दिन एकसाथ किया जाता है जिस दिन विचारण समाप्त होता है, तब निचला न्यायालय पदकार्य-निवृत्त नहीं हो जाता है और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन शक्ति का प्रयोग करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 354 को ध्यान में रखते हुए सक्षम है, जिसमें अभिव्यक्त रूप से यह उपबंधित है कि दंडादेश की मात्रा पर आदेश निर्णय का एक अभिन्न भाग है और ऐसे आदेश के बिना दोषसिद्धि का कोई निर्णय अपूर्ण कहा जाएगा ।

11. उत्तर प्रदेश राज्य की ओर से विद्वान् अपर महाधिवक्ता श्री ए. के. प्रसाद द्वारा दी गई दलील का सार वास्तव में उसी प्रकार का है, जैसी दलील प्रत्यर्थी-पंजाब राज्य की ओर से विद्वान् महाधिवक्ता द्वारा दी गई है । जहां तक उस शक्ति से संबंधित पहलू का संबंध है जो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन प्रयोग की जा सकती है,

विचारण के पूर्ण होने से पूर्व ऐसी शक्ति का प्रयोग किए जाने का अर्थ बताते हुए विद्वान् काउंसेल द्वारा यह दलील दी गई कि दोषसिद्धि का निर्णय सुनाए जाने के साथ विचारण समाप्त नहीं हो जाता है चूंकि दंडादेश भी निर्णय का एक भाग है । न्यायालय दंडादेश अधिरोपित करने के पश्चात् ही पदकार्य-निवृत्त होता है । यह दलील दी गई कि यह अभिनिर्धारित किया जाना होगा कि इस शक्ति का प्रयोग दंडादेश के सुनाए जाने तक किया जा सकता है, जो वह बिंदु है जिस पर निर्णय पूरी तरह से पूर्ण हो जाता है और विचारण समाप्त हो जाता है ।

12. विद्वान् अपर महा सालिसिटर श्री एस. वी. राजू ने यद्यपि उस प्रकार की दलीलें दीं जो संबंधित राज्यों की ओर से विद्वान् महाधिवक्ता और अपर महाधिवक्ता द्वारा दी गई, तो भी उन्होंने वास्तव में एक कदम आगे बढ़कर यह दलील दी कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन शक्ति का अवलंब किसी भी प्रक्रम पर, यहां तक कि दंडादेश सुनाए जाने के पश्चात् भी, लिया जा सकता है चूंकि अभियुक्त की अंतर्ग्रस्तता बाद के प्रक्रम पर भी प्रकाश में आ सकती है और उस परिस्थिति में यदि विधि आयोग की सिफारिश को इस उपबंध में लाने की बात को ध्यान में रखा जाए, तो इसका एकमात्र उद्देश्य यह है कि कोई अभियुक्त बचकर निकलना नहीं चाहिए और इसलिए अभियुक्त को कठघरे में लाने के लिए किसी भी प्रक्रम पर कदम उठाए जा सकते हैं । मध्यक्षेपी की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री आशीष दीक्षित ने इसी प्रकार की दलीलें देकर राज्यों की ओर से दी गई दलीलों को पूर्ण किया ।

13. परस्पर-विरोधी दलीलों की पृष्ठभूमि में हमें निर्दिष्ट किए गए प्रश्न का अवधारण करने के लिए हमारे लिए समुचित होगा कि प्रारंभ में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 में यथा अंतर्विष्ट उपबंध का उल्लेख किया जाए, जो निम्नलिखित प्रकार से हैं :–

> "**319. अपराध के दोषी प्रतीत होने वाले अन्य व्यक्तियों के विरुद्ध कार्यवाही करने की शक्ति** – (1) जहां किसी अपराध की जांच या विचारण के दौरान साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि किसी व्यक्ति ने, जो अभियुक्त नहीं है, कोई ऐसा अपराध किया है

जिसके लिए ऐसे व्यक्ति का अभियुक्त के साथ विचारण किया जा सकता है, वहां न्यायालय उस व्यक्ति के विरुद्ध उस अपराध के लिए जिसका उसके द्वारा किया जाना प्रतीत होता है, कार्यवाही कर सकता है ।

(2) जहां ऐसा व्यक्ति न्यायालय में हाजिर नहीं है वहां पूर्वोक्त प्रयोजन के लिए उसे मामले की परिस्थितियों की अपेक्षानुसार गिरफ्तार या समन किया जा सकता है ।

(3) कोई व्यक्ति जो गिरफ्तार या समन न किए जाने पर भी न्यायालय में हाजिर है, ऐसे न्यायालय द्वारा उस अपराध के लिए, जिसका उसके द्वारा किया जाना प्रतीत होता है, जांच या विचारण के प्रयोजन के लिए निरुद्ध किया जा सकता है ।

(4) जहां न्यायालय किसी व्यक्ति के विरुद्ध उपधारा (1) के अधीन कार्यवाही करता है, वहां –

(क) उस व्यक्ति के बारे में कार्यवाही फिर से प्रारंभ की जाएगी और साक्षियों को फिर से सुना जाएगा ;

(ख) खंड (क) के उपबंधों के अधीन रहते हुए, मामले में ऐसे कार्यवाही की जा सकती है मानो वह व्यक्ति उस समय अभियुक्त व्यक्ति था जब न्यायालय ने अपराध का संज्ञान किया था जिस पर जांच या विचारण प्रारंभ किया था ।"

14. प्रारंभ में, इस उपबंध का उल्लेख करने के पश्चात् यह पूरी तरह से स्पष्ट है कि न्यायालय को प्रदान की गई शक्ति इस आशय की है कि किसी अपराध की जांच या विचारण के दौरान न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए गए साक्ष्य के आधार पर न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि ऐसे साक्ष्य से उन अभियुक्तों के अतिरिक्त, जिनका न्यायालय के समक्ष विचारण किया जा रहा है, किसी व्यक्ति द्वारा कोई अपराध किया जाना इंगित होता है और ऐसे अभियुक्त को उस समय तक आरोप पत्र में या विचारण की प्रक्रिया में अपवर्जित किया गया है तो उसे फिर भी समन किया जा सकता है और उस अपराध के अभियुक्त के साथ विचारण किया जा सकता है जिसका अतिरिक्त अभियुक्त के

रूप में समन किए गए ऐसे व्यक्तियों द्वारा किया जाना प्रतीत होता है ।

15. इस संबंध में, दंड प्रक्रिया संहिता में इस उपबंध को सम्मिलित करने और न्यायालय को ऐसी शक्ति प्रदान करने का उद्देश्य भारत के विधि आयोग द्वारा अपनी 41वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश पर आधारित था, जिसके प्रति सभी विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेलों ने विस्तारपूर्वक निर्देश किया है जो निम्नलिखित है :–

> 24.80. कभी-कभी, यद्यपि प्रायिक तौर पर नहीं, यह होता है कि मजिस्ट्रेट कतिपय अभियुक्तों के विरुद्ध किसी मामले की सुनवाई करते हुए साक्ष्य से यह पाता है कि उसके समक्ष अभियुक्तों के अतिरिक्त कोई व्यक्ति भी इसी अपराध या संबद्ध अपराध में संलग्न है । उचित होगा कि मजिस्ट्रेट को उसे बुलाने और कार्यवाहियों में सम्मिलित करने की शक्ति होनी चाहिए । धारा 351 में ऐसी स्थिति के लिए उपबंध तो किया गया है, किंतु केवल यदि वह व्यक्ति पहले से न्यायालय में हाजिर हो । फिर उसे निरुद्ध किया जा सकता है और उसके विरुद्ध कार्यवाही की जा सकती है । यदि वह न्यायालय में मौजूद न हो तो धारा 351 में ऐसे व्यक्ति को समन करने के लिए कोई अभिव्यक्त उपबंध नहीं है । ऐसा उपबंध करने से धारा 351 उचित रूप से विस्तृत हो जाएगी और हम यह उचित समझते हैं कि उस स्थिति के लिए इसमें अभिव्यक्त रूप से उपबंध किया जाए ।
>
> 24.81. धारा 351 में यह धारणा की गई है कि मजिस्ट्रेट को इसके अधीन कार्यवाही में नए मामले का संज्ञान लेने की शक्ति है । तथापि, इसमें यह नहीं बताया गया है कि मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान किस रीति में लिया जाना है । संज्ञान लेने के ढंग धारा 190 में वर्णित हैं और स्पष्ट रूप से सुविस्तृत हैं । प्रश्न यह है कि क्या नए जोड़े गए अभियुक्त के विरुद्ध संज्ञान धारा 190(1)(ग) के अधीन मजिस्ट्रेट की स्वयं की जानकारी के आधार पर लिया गया समझा जाएगा, या केवल उस रीति में लिया जाएगा जिसमें पहले अन्य अभियुक्तों के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लिया गया था ।

विनिर्दिष्ट रूप से, यदि मूल मामला एक पुलिस रिपोर्ट के आधार पर अर्थात् धारा 190(1)(ख) के अधीन संस्थित किया गया था, तो क्या नए अभियुक्त के विरुद्ध संज्ञान उसी रीति में लिया गया समझा जाएगा या धारा 190(1)(ग) के अधीन ? प्रश्न महत्वपूर्ण है, क्योंकि दोनों मामलों में जांच और विचारण के ढंग भिन्न-भिन्न हैं । विद्यमान विधि के अधीन सही स्थिति के बारे में मतभेद रहा है और हमारा विचार है कि इसे स्पष्ट किया जाना चाहिए । हमें यह प्रतीत होता है कि इस विशिष्ट उपबंध का मुख्य प्रयोजन यह है कि सभी ज्ञात संदिग्धों के विरुद्ध संपूर्ण मामला शीघ्रता से अग्रसर होना चाहिए और सुविधा के लिए यह आवश्यक है कि नए जोड़े गए अभियुक्त के विरुद्ध संज्ञान उसी रीति में लिया जाना चाहिए जिस रीति में अन्य अभियुक्तों के विरुद्ध लिया गया है । अत: हम धारा 351 को व्यापक बनाने और यह उपबंध करते हुए कि यदि कोई नया व्यक्ति कार्यवाहियों के दौरान अभियुक्त के रूप में जोड़ा जाता है तो संज्ञान लेने के ढंग में कोई अंतर नहीं होगा इसे नया रूप देने का प्रस्ताव करते हैं । निस्संदेह, यह आवश्यक है कि (जैसा कि पहले उपबंध किया गया है) ऐसी स्थिति में साक्ष्य को नए जोड़े गए अभियुक्त की मौजूदगी में फिर से सुना जाना चाहिए ।

24.82. जिस अपराध के लिए नए जोड़े गए अभियुक्त का विचारण किया जा सकता है उसे इस धारा में स्पष्ट शब्दों में उपदर्शित नहीं किया गया है । स्पष्ट रूप से, वह अपराध उस अपराध से संबद्ध होना चाहिए जिसके लिए मूल अभियुक्त विचारणाधीन है । इसे स्पष्ट करने के लिए एक लघु शाब्दिक संशोधन की सिफारिश की जाती है ।

16. उपरोक्त पृष्ठभूमि में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन प्रयोग की जाने वाली शक्ति से संबंधित विवाद्यक विस्तृत रूप से विचार करने के लिए **हरदीप सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में उद्धृत हुआ था जिसमें इसकी व्याप्ति, प्रक्रिया और उस प्रक्रम पर विचार किया गया था जिस पर ऐसी शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए और

निम्नलिखित सारांश प्रस्तुत किया :–

"12. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 जूडेक्स डेम्नेटर कम नोसेंश एब्सोलविटर (न्यायाधीश की उस समय निंदा होती है जब दोषी को दोषमुक्त किया जाता है) सिद्धांत से उत्पन्न होती है और इस सिद्धांत का प्रयोग दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 की व्याप्ति और इसके अधिनियमन के लिए अंतर्निहित भाव को स्पष्ट करने के लिए एक प्रकाश स्तंभ के रूप में किया जाना चाहिए ।

13. न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वास्तविक अपराधी को दंडित करके न्याय करे । जहां अन्वेषण अभिकरण किसी कारण से वास्तविक अपराधियों में से किसी को अभियुक्त के रूप में क्रमबद्ध नहीं करता है, तो न्यायालय उक्त अभियुक्त को विचारण का सामना करने के लिए बुलाने हेतु निशक्त नहीं है । प्रश्न यह उठता है कि किन परिस्थितियों और किस प्रक्रम पर न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 में अनुध्यात अपनी शक्ति का प्रयोग करना चाहिए ?

15. अभिलेख पर यह लाना आवश्यक होगा कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन प्रदत्त शक्ति केवल न्यायालय को है । इसे इस संदर्भ में समझा जाना चाहिए कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 केवल न्यायालय को ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए सशक्त करती है । हमारे दांडिक न्यायालयों के अधिक्रम में 'न्यायालय' शब्द को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 6 में परिभाषित किया गया है, जिसमें सेशन न्यायालय, न्यायिक मजिस्ट्रेट, महानगर मजिस्ट्रेट तथा कार्यपालक मजिस्ट्रेट सम्मिलित हैं । सेशन न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 9 में परिभाषित किया गया है और न्यायिक मजिस्ट्रेटों के न्यायालय इसकी धारा 11 में परिभाषित हैं । महानगर मजिस्ट्रेटों के न्यायालयों को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 16 में परिभाषित किया गया है । जो न्यायालय दंड संहिता, 1860 के अधीन किए गए अपराधों या किसी अन्य विधि के अधीन किए गए अपराध का विचारण कर सकते हैं, उनको दंड प्रक्रिया संहिता की प्रथम अनुसूची

के साथ पठित धारा 26 के अधीन विनिर्दिष्ट किया गया है । प्रथम अनुसूची के अधीन 'अपराधों का वर्गीकरण' शीर्षक के अधीन स्पष्टीकरण नोट (2) में 'प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट' और 'कोई मजिस्ट्रेट' अभिव्यक्ति को विनिर्दिष्ट किया गया है जिसके अंतर्गत महानगर मजिस्ट्रेट भी हैं जो उक्त अनुसूची के अधीन अपराधों का विचारण करने के लिए सशक्त हैं किंतु कार्यपालक मजिस्ट्रेट इसमें नहीं आते हैं ।

40. यहां तक कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 में आने वाले 'दौरान' शब्द से स्पष्ट रूप से यह उपदर्शित होता है कि इस शक्ति का प्रयोग केवल उस अवधि के दौरान किया जा सकता है जब जांच आरंभ हो गई है और चल रही है या विचारण जो आरंभ हो गया है और चल रहा है । इसके अंतर्गत विचारण-पूर्व और विचारण के प्रक्रम की संपूर्ण व्यापक प्रक्रिया आती है । अत: 'दौरान' शब्द न्यायालय को जांच के आरंभिक प्रक्रम से लेकर विचारण के समाप्त होने के प्रक्रम तक किसी व्यक्ति के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए इस शक्ति का अवलंब लेने के लिए अनुज्ञात करता है । जहां न्यायालय किसी अन्य व्यक्ति के संबंध में, जो अभियुक्त नहीं है, सामग्री पर विचार कर रहा हो तो वह पदकार्य-निवृत्त नहीं हो जाता है भले ही संज्ञान ले लिया हो । 'दौरान' शब्द सामान्य तौर पर समय के हिसाब से एक बिंदु से अगले बिंदु तक हुई सतत् प्रगति के अर्थ को संप्रेषित करता है और एक समयावधि के भाव को संप्रेषित करता है न कि किसी निश्चित सुसंगत समय को ।

42. यह कहना कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन शक्तियों का प्रयोग केवल विचारण के दौरान किया जा सकता है, न्यायालय द्वारा 'जांच' शब्द के प्रभाव को कम करना होगा । विधि का यह स्थिर सिद्धांत है कि ऐसे निर्वचन से बचा जाना चाहिए, जिससे यह निष्कर्ष निकलता हो कि विधानमंडल द्वारा प्रयुक्त किया गया कोई शब्द अनावश्यक है क्योंकि यह उपधारणा की जाती है कि विधानमंडल ने अधिनियम के प्रयोजन को कार्यान्वित करने के लिए जानबूझकर और भानपूर्वक इन शब्दों

का प्रयोग किया है । विधिक सूक्ति ए. वर्बिस लेजिस नॉन इस्ट रीसिडेंडम, जिसका अर्थ है 'विधि के शब्दों से विचलन नहीं किया जाना चाहिए' को ध्यान में रखा जाना चाहिए ।

47. चूंकि आरोप पत्र फाइल होने के पश्चात् न्यायालय जांच के प्रक्रम पर पहुंचता है और जैसे ही न्यायालय आरोप विरचित करता है, तो विचारण आरंभ हो जाता है और इसलिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319(1) के अधीन शक्ति का प्रयोग आरोप पत्र फाइल होने के पश्चात् और निर्णय सुनाए जाने से पूर्व, सिवाय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 207/208 में उपबंधित सुपुर्दगी इत्यादि के प्रक्रम को छोड़कर जो केवल प्रक्रिया को आगे बढ़ाने के आशय से एक विचारण-पूर्व का प्रक्रम है, किया जा सकता है । इस प्रक्रम को सही मायने में एक न्यायिक रूप से उठाया कदम नहीं कहा जा सकता क्योंकि इस प्रक्रम पर न्यायिक रूप से मस्तिष्क का प्रयोग करने की बजाय केवल मस्तिष्क का प्रयोग करना अपेक्षित है । इस विचारण-पूर्व प्रक्रम पर मजिस्ट्रेट से न्यायिक कार्य की बजाय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 207 और 208 के अधीन के अनुपालन को सुनिश्चित करने और यदि मामला अनन्य रूप से सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है तो मामले को सुपुर्द करने जैसे प्रशासनिक प्रकृति के कार्य करने की अपेक्षा की जाती है । इसलिए हमारे लिए यह निष्कर्ष निकालना विधिसम्मत होगा कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 207 से 209 के प्रक्रम पर मजिस्ट्रेट को मामले के गुणागुण पर अपने मस्तिष्क का प्रयोग करने और यह अवधारण करने के लिए कि क्या किसी अभियुक्त को सेशन न्यायालय के समक्ष विचारण का सामना करने के लिए जोड़े जाने या हटाए जाने की आवश्यकता है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अभिव्यक्त उपबंध द्वारा निषिद्ध किया गया है ।

57. इस प्रकार, जांच के प्रक्रम पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के उपबंधों के प्रयोग को इसके सही परिप्रेक्ष्य में समझा जाना चाहिए । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन शक्ति का प्रयोग केवल विचारण के दौरान न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत

किए गए साक्ष्य के आधार पर किया जाना चाहिए । जहां तक जांच के दौरान इसके प्रयोग का संबंध है, जैसा कि इसमें ऊपर निर्दिष्ट किया गया है, यह शक्ति किसी ऐसे व्यक्ति को अभियुक्त के रूप में जोड़ने, जिसका नाम आरोप पत्र के स्तंभ 2 में वर्णित किया गया है या किसी ऐसे अन्य व्यक्ति को जोड़ने तक सीमित रह जाती है । जो सह-अपराधी हो सकता है ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

17. **शशिकांत सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में, जहां समन किए गए अभियुक्त के विरुद्ध तात्पर्यित रूप से कार्यवाही उन अभियुक्तों के विरुद्ध निर्णय सुनाए जाने के पश्चात् की गई थी जो मूल रूप से आरोपित किए गए थे, दो न्यायाधीशों की एक अन्य न्यायपीठ द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण के कारण इस मामले में स्पष्टता की ईप्सा करते हुए दो माननीय न्यायाधीशों से बनी न्यायपीठ द्वारा पारित किए गए आदेश में अंतर्विष्ट निर्देश को ध्यान में रखते हुए उस स्थिति का उल्लेख करना आवश्यक है जो उस मामले में उद्भूत हुई थी और निष्कर्ष निकाला गया था । यह पाया गया है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन एक मामले में, जिसमें **शशिकांत सिंह** (उपर्युक्त) के भाई शिवकांत सिंह की हत्या हो गई थी, एक चंद्र शेखर सिंह नामक व्यक्ति के विरुद्ध विचारण आरंभ किया गया था । जब साक्ष्य अभिलिखित किया गया था तब यह पाया गया कि तारकेश्वर सिंह और दो अन्य व्यक्तियों ने भी शिवकांत सिंह की हत्या करने का अपराध किया था । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने तारीख 7 अप्रैल, 2001 के आदेश द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन शक्ति का प्रयोग किया और गिरफ्तारी का वारंट जारी करने का आदेश दिया जिससे उनका चंद्र शेखर सिंह, वह अभियुक्त जिसके विरुद्ध विचारण चल रहा था, के साथ विचारण किया जा सके । अभियुक्तों को समन करते हुए तारीख 7 अप्रैल, 2001 के उक्त आदेश को तारकेश्वर सिंह द्वारा 2001 के दांडिक पुनरीक्षण सं. 269 में उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई । उच्च न्यायालय के समक्ष उक्त पुनरीक्षण आवेदन के लंबित रहने के दौरान विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने मूल रूप से आरोपित अभियुक्त चंद्र

शेखर सिंह के विरुद्ध लंबित विचारण का समापन किया और उसे तारीख 16 जुलाई, 2001 के निर्णय द्वारा दोषसिद्ध किया । अत: उस संदर्भ में उद्भूत प्रश्न यह था कि क्या उस मामले में, जिसमें तारकेश्वर सिंह सहित अतिरिक्त अभियुक्तों को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन समन किया गया था, अन्य अभियुक्तों के विरुद्ध विचारण दोषसिद्धि के आदेश के साथ समाप्त होने के पश्चात् दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319(1) में अंतर्विष्ट वाक्यांश "अभियुक्त के साथ विचारण किया जा सकता है" को ध्यान में रखते हुए विचारण चलाया जा सकता था ।

18. उस संदर्भ में, दो माननीय न्यायाधीशों की न्यायपीठ, जिसने समन किए गए अभियुक्त तारकेश्वर सिंह और अन्य के विरुद्ध विचारण चलाने की मंजूरी दी थी, ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया था :–

> "9. इस उपबंध का आशय यह है कि जहां किसी अपराध की जांच या विचारण के दौरान न्यायालय को साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि किसी व्यक्ति ने, जो अभियुक्त नहीं है, कोई अपराध किया है, तो न्यायालय उस व्यक्ति के विरुद्ध उस अपराध के लिए जिसका उसके द्वारा किया जाना प्रतीत होता है, कार्यवाही कर सकता है । उस प्रक्रम पर, न्यायालय इस बात पर विचार करेगा कि ऐसे व्यक्ति का उस अभियुक्त के साथ विचारण किया जा सकता है जो पहले ही न्यायालय के समक्ष विचारण का सामना कर रहा है । ऐसे व्यक्ति की बाबत उपबंधित रक्षोपाय यह है कि कार्यवाहियां आज्ञापक रूप से शुरुआत से फिर से आरंभ की जानी चाहिएं और साक्षियों को फिर से सुना जाना चाहिए । संक्षेप में, उसके विरुद्ध एक नया विचारण किया जाना चाहिए । नया विचारण किए जाने का यह उपबंध आज्ञापक है । इससे न्यायालय के समक्ष इस प्रकार लाए गए व्यक्ति के अधिकारों पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है । यह पर्याप्त नहीं होगा कि साक्षियों को केवल ऐसे व्यक्ति की प्रतिपरीक्षा करने के लिए ही पेश किया जाए । उनकी फिर से परीक्षा की जानी चाहिए । नए जोड़े गए अभियुक्त की न केवल प्रतिपरीक्षा करने के प्रयोजन के लिए अपितु मुख्य परीक्षा करने के लिए भी उनको फिर से पेश करना धारा 319(4) का

आदेश है । धारा 319(1) में 'अभियुक्त के साथ विचारण किया जा सकता है' शब्द केवल निदेशात्मक प्रतीत होते हैं । 'किया जा सकता है' को इन परिस्थितियों में 'अवश्य किया जाना चाहिए' अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता । इस उपबंध का निर्वचन यह अर्थ लगाने के लिए नहीं किया जा सकता कि चूंकि उस व्यक्ति की बाबत विचारण समाप्त हो गया है जो न्यायालय के समक्ष था और परिणामस्वरूप नए जोड़े गए व्यक्ति का उस व्यक्ति के साथ विचारण नहीं किया जा सकता है जो उस समय न्यायालय के समक्ष था जब धारा 319(1) के अधीन आदेश पारित किया गया था, इसलिए वह आदेश न्यायालय द्वारा उसके समक्ष साक्ष्य के आधार पर बनाई गई इस पूर्ववर्ती राय को बातिल करते हुए अप्रभावी और अप्रवर्तनशील हो जाएगा कि नए जोड़े गए व्यक्ति द्वारा अपराध का किया जाना प्रतीत होता है और जिसके परिणामस्वरूप उसे न्यायालय के समक्ष लाए जाने का आदेश किया गया था ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

19. इस प्रकार, मामले के इस परिप्रेक्ष्य में विधि आयोग की सिफारिश के परिशीलन से यह आशय उपदर्शित होता है कि अभियुक्त जिसे आरोप पत्रित नहीं किया गया है किंतु यदि वह अंतर्ग्रस्त होना पाया जाता है, तो बचकर नहीं जाना चाहिए । इसीलिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 सम्मिलित की गई थी जिसमें न्यायालय को इस शक्ति का प्रयोग यह सुनिश्चित करते हुए करने के लिए यह उपबंध किया गया कि उसके द्वारा इसका प्रयोग विचारण की समाप्ति से पूर्व किया जाए जिससे ऐसे अभियुक्त को समन करके अन्य अभियुक्तों के साथ कार्यवाही की जा सके । **शशि कांत सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में दो माननीय न्यायाधीशों की एक न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित करते हुए कि संयुक्त विचारण किया जाना अनिवार्य नहीं है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319(1) में अंतर्विष्ट अपेक्षा को केवल निदेशात्मक अभिनिर्धारित किया और इसलिए आरोप पत्रित अभियुक्त के विरुद्ध तारीख 16 जुलाई, 2001 के दोषसिद्धि के निर्णय को न्यायालय के लिए उस अभियुक्त के

विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए बाधा नहीं समझा गया था जिसे तारीख 7 अप्रैल, 2001 के समन आदेश द्वारा जोड़ा गया था और जो किसी भी स्थिति में विचारण की समाप्ति से पूर्व का था और हमारा मत है कि इससे इस अपेक्षा का समाधान हो जाता है चूंकि समन आदेश निर्णय से पूर्व का था । **हरदीप सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में भी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन न्यायालय की शक्ति को कायम रखा गया था, दोहराया गया था और यह अभिनिर्धारित किया गया था कि ऐसी शक्ति निर्णय सुनाए जाने के पूर्व किसी भी समय पर प्रयोग किए जाने के लिए उपलब्ध है । इसलिए जहां तक इस शक्ति का प्रयोग करने, इसकी रीति और वह प्रक्रम जिस पर इस शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए, का संबंध है, उक्त विनिश्चयों में कोई विरोध या भिन्न दृष्टिकोण नहीं है । तथापि, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 की उपधारा 4(क) में की अपेक्षा के साथ पठित उपधारा (1) में प्रकट होने वाले "अभियुक्त के साथ विचारण किया जा सकता है" वाक्यांश के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए और "निर्णय सुनाए जाने के पूर्व" वाक्यांश के अनुसार शक्ति का प्रयोग करने के सही तात्पर्य को समझने के लिए कतिपय शंकाओं का समाधान करना आवश्यक है ।

20. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के सूक्ष्म परिशीलन से यह उपदर्शित होता है कि किसी ऐसे व्यक्ति को, जो मामले में अभियुक्त नहीं है, को समन करने के लिए न्यायालय को प्रदान की गई शक्ति उस समय है जब विचारण के दौरान साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि अपराध करने में ऐसे व्यक्ति की भूमिका है । इसलिए न्यायालय ऐसे किसी व्यक्ति को समन करने के लिए स्वतंत्र होगा जिससे अभियुक्त के साथ उसका विचारण किया जा सके और ऐसी शक्ति अनन्य रूप से न्यायालय को है । स्पष्ट रूप से, जब अतिरिक्त अभियुक्त को बुलाने और ऐसे व्यक्ति का पहले से आरोपित उस अभियुक्त के साथ विचारण करने, जिसके विरुद्ध विचारण चल रहा है, की ऐसी शक्ति है तो इस शक्ति का प्रयोग विचारण की समाप्ति से पूर्व किया जाना होगा । 'विचारण की समाप्ति' का अर्थ प्रस्तुत मामले में साक्ष्य अभिलिखित किए जाने के प्रक्रम तक के रूप में नहीं लगाया जा सकता अपितु इसे

निर्णय सुनाए जाने से पूर्व के प्रक्रम के रूप में समझा जाना चाहिए, जैसा कि पहले ही **हरदीप सिंह** (उपुर्यक्त) वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया है चूंकि निर्णय सुना दिए जाने पर विचारण समाप्त हो जाता है चूंकि ऐसा समय न आने तक न्यायालय द्वारा अभियुक्त का विचारण किया जा रहा होता है ।

21. इस संदर्भ में, इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए परस्पर-विरोधी दलीलों का विश्लेषण करना होगा कि वह प्रक्रम क्या है जिसके बारे में यह कहा जा सके कि विचारण समाप्त हो गया है । क्या यह वह प्रक्रम है, जब निर्णय सुनाया जाता है और दोषसिद्धि का आदेश किया जाता है या क्या यह वह प्रक्रम है जब दंडादेश अधिरोपित किया जाता है और विचारण पूरी तरह से समाप्त हो जाता है ? इस पहलू पर किसी निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए संहिता में निर्णय से संबंधित उपबंध का उल्लेख किया जाना आवश्यक है । अध्याय 18 में सेशन न्यायालय के समक्ष विचारण को विनियमित करने के लिए अपनाई जाने वाली प्रक्रिया और विचारण की समाप्ति उपदर्शित होती है । हमारे प्रयोजन के लिए जो सुसंगत है वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 232 और 235 है, जो निम्नलिखित हैं :–

> "**232. दोषमुक्ति** – यदि संबद्ध विषय के बारे में अभियोजन का साक्ष्य लेने, अभियुक्त की परीक्षा करने और अभियोजन और प्रतिरक्षा को सुनने के पश्चात् न्यायाधीश का यह विचार है कि इस बात का साक्ष्य नहीं है कि अभियुक्त ने अपराध किया है तो न्यायाधीश दोषमुक्ति का आदेश अभिलिखित करेगा ।"
>
> "**235. दोषमुक्ति या दोषसिद्धि का निर्णय** – (1) बहस और विधि-प्रश्न (यदि कोई हों) सुनने के पश्चात् न्यायाधीश मामले में निर्णय देगा ।
>
> (2) यदि अभियुक्त दोषसिद्ध किया जाता है तो न्यायाधीश, उस दशा के सिवाय जिसमें वह धारा 360 के उपबंधों के अनुसार कार्यवाही करता है, दंड के प्रश्न पर अभियुक्त को सुनेगा और तब विधि के अनुसार उसके बारे में दंडादेश देगा ।"

इसके अतिरिक्त, अध्याय 27 दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 353 में यथा

अंतर्विष्ट निर्णय के संबंध में है जबकि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 354 निर्णय की भाषा और अंतर्वस्तुओं के संबंध में है । वे निम्नलिखित प्रकार से हैं :–

"353. **निर्णय** – (1) आरंभिक अधिकारिता के दंड न्यायालय में होने वाले प्रत्येक विचारण में निर्णय पीठासीन अधिकारी द्वारा खुले न्यायालय में या तो विचारण के खत्म होने के पश्चात् तुरंत या बाद में किसी समय, जिसकी सूचना पक्षकारों या उनके प्लीडरों को दी जाएगी,–

(क) संपूर्ण निर्णय देकर सुनाया जाएगा ; या

(ख) संपूर्ण निर्णय पढ़कर सुनाया जाएगा ; या

(ग) अभियुक्त या उसके प्लीडर द्वारा समझी जाने वाली भाषा में निर्णय का प्रवर्तनशील भाग पढ़कर और निर्णय का सार समझाकर सुनाया जाएगा ।

(2) जहां उपधारा (1) के खंड (क) के अधीन निर्णय दिया जाता है, वहां पीठासीन अधिकारी उसे आशुलिपि में लिखवाएगा और जैसे ही अनुलिपि तैयार हो जाती है वैसे ही खुले न्यायालय में उस पर और उसके प्रत्येक पृष्ठ पर हस्ताक्षर करेगा, और उस पर निर्णय दिए जाने की तारीख डालेगा ।

(3) जहां निर्णय या उसका प्रवर्तनशील भाग, यथास्थिति, उपधारा (1) के खंड (ख) या खंड (ग) के अधीन पढ़कर सुनाया जाता है, वहां पीठासीन अधिकारी द्वारा खुले न्यायालय में उस पर तारीख डाली जाएगी और हस्ताक्षर किए जाएंगे और यदि वह उसके द्वारा स्वयं अपने हाथ से नहीं लिखा गया है तो निर्णय के प्रत्येक पृष्ठ पर उसके द्वारा हस्ताक्षर किए जाएंगे ।

(4) जहां निर्णय उपधारा (1) के खंड (ग) में विनिर्दिष्ट रीति से सुनाया जाता है, वहां संपूर्ण निर्णय या उसकी एक प्रतिलिपि पक्षकारों या उनके प्लीडरों के परिशीलन के लिए तुरंत नि:शुल्क उपलब्ध कराई जाएगी ।

(5) यदि अभियुक्त अभिरक्षा में है तो निर्णय सुनने के लिए

उसे लाया जाएगा ।

(6) यदि अभियुक्त अभिरक्षा में नहीं है तो उससे न्यायालय द्वारा सुनाए जाने वाले निर्णय को सुनने के लिए हाजिर होने की अपेक्षा की जाएगी, किंतु उस दशा में नहीं की जाएगी जिसमें विचारण के दौरान उसकी वैयक्तिक हाजिरी से उसे अभियुक्ति दे दी गई है और दंडादेश केवल जुर्माने का है या उसे दोषमुक्त किया गया है :

परंतु जहां एक से अधिक अभियुक्त हैं और उनमें से एक या एक से अधिक उस तारीख को न्यायालय में हाजिर नहीं हैं जिसको निर्णय सुनाया जाने वाला है तो पीठासीन अधिकारी उस मामले को निपटाने में अनुचित विलंब से बचने के लिए उनकी अनुपस्थिति में भी निर्णय सुना सकता है ।

(7) किसी भी दंड न्यायालय द्वारा सुनाया गया कोई निर्णय केवल इस कारण विधित: अमान्य न समझा जाएगा कि उसके सुनाए जाने के लिए सूचित दिन को या स्थान में कोई पक्षकार या उसका प्लीडर अनुपस्थित था या पक्षकारों पर या उनके प्लीडरों पर या उनमें से किसी पर ऐसे दिन और स्थान की सूचना की तामील करने में कोई लोप या त्रुटि हुई थी ।

(8) इस धारा की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह धारा 465 के उपबंधों के विस्तार को किसी प्रकार से परिसीमित करती है ।"

"**354. निर्णय की भाषा और अंतर्वस्तु** – (1) इस संहिता द्वारा अभिव्यक्त रूप से अन्यथा उपबंधित के सिवाय, धारा 353 में निर्दिष्ट प्रत्येक निर्णय –

(क) न्यायालय की भाषा में लिखा जाएगा ;

(ख) अवधारण के लिए प्रश्न, उस प्रश्न या उन प्रश्नों पर विनिश्चय और विनिश्चय के कारण अंतर्विष्ट करेगा ;

(ग) वह अपराध (यदि कोई हो) जिसके लिए और

भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) या अन्य विधि की वह धारा, जिसके अधीन अभियुक्त दोषसिद्ध किया गया है, और वह दंड जिसके लिए वह दंडादिष्ट है, विनिर्दिष्ट करेगा ;

(घ) यदि निर्णय दोषमुक्ति का है तो, उस अपराध का कथन करेगा जिससे अभियुक्त दोषमुक्त किया गया है और निदेश देगा कि वह स्वतंत्र कर दिया जाए ।

(2) जब दोषसिद्धि भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) के अधीन है और यह संदेह है कि अपराध उस संहिता की दो धाराओं में से इसके अधीन या एक ही धारा के दो भागों में से इसके अधीन आता है तो न्यायालय इस बात को स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त करेगा और अनुकल्पत: निर्णय देगा ।

(3) जब दोषसिद्धि, मृत्यु से अथवा अनुकल्पत: आजीवन कारावास से या कई वर्षों की अवधि के कारावास से दंडनीय किसी अपराध के लिए है, तब निर्णय में दिए गए दंडादेश के कारणों का और मृत्यु के दंडादेश की दशा में ऐसे दंडादेश के लिए विशेष कारणों का, कथन होगा ।

(4) जब दोषसिद्धि, एक वर्ष या उससे अधिक की अवधि के कारावास से दंडनीय अपराध के लिए है किंतु न्यायालय तीन मास से कम अवधि के कारावास का दंड अधिरोपित करता है, तब वह ऐसा दंड देने के अपने कारणों को लेखबद्ध करेगा उस दशा के सिवाय जब वह दंडादेश न्यायालय के उठने तक के लिए कारावास का नहीं है या यह मामला इस संहिता के उपबंधों के अधीन संक्षेपत: विचारित नहीं किया गया है ।

(5) जब किसी व्यक्ति को मृत्यु का दंडादेश दिया जाता है तो वह दंडादेश यह निदेश देगा कि उसे गर्दन में फांसी लगाकर तब तक लटकाया जाए जब तक उसकी मृत्यु न हो जाए ।
(6) धारा 117 के अधीन या धारा 138 की उपधारा (2) के अधीन प्रत्येक आदेश में और धारा 125, धारा 145 या धारा 147 के अधीन किए गए प्रत्येक अंतिम आदेश में, अवधारण

के लिए प्रश्न, उस प्रश्न या उन प्रश्नों पर विनिश्चय और विनिश्चय के कारण अंतर्विष्ट होंगे ।"

22. ऊपर उद्धृत उपबंधों के परिशीलन से यह दिखाई देता है कि यदि सेशन न्यायालय अभिलिखित किए गए साक्ष्य का विश्लेषण करते समय यह पाता है कि अभियुक्त को अपराध कारित किए जाने का दोषी ठहराने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है, तो न्यायाधीश के लिए यह अपेक्षित है कि दोषमुक्ति का आदेश अभिलिखित करे । उस दशा में, विद्वान् न्यायाधीश द्वारा आगे कुछ और नहीं किया जाना है और इसलिए उस प्रक्रम पर विचारण समाप्त हो जाता है । ऐसे मामलों में जहां यह बात दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 232 के अधीन उद्भूत होती है और दोषमुक्ति का आदेश अभिलिखित किया जाता है तथा जब एक से अधिक अभियुक्त हैं या एकमात्र अभियुक्त है और दोषमुक्त किए गए हैं/किया गया है, तो ऐसे मामलों में विचारण समाप्त हो जाने के कारण दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन यथा अनुध्यात साक्ष्य के आधार पर अभियुक्त को समन करने की न्यायालय की शक्ति का अवलंब लिया जा सकेगा और दोषमुक्ति का निर्णय सुनाए जाने से पूर्व प्रयोग किया जा सकेगा । इस बारे में भी मस्तिष्क का प्रयोग किया जाएगा कि क्या उसका नए सिरे से विचारण करते समय पृथक् विचारण किया जाना चाहिए या संयुक्त विचारण किया जाना चाहिए । ऐसे आदेश के पश्चात् वह उस अभियुक्त की दोषमुक्ति का निर्णय सुनाने के लिए स्वतंत्र होगा जिसका पहले विचारण किया गया था ।

23. तथापि, यदि विद्वान् न्यायाधीश इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि अभियुक्त को दोषसिद्ध किया जाना है, तो दोषसिद्धि का आदेश दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 235 के अधीन अनुध्यात अनुसार निर्णय के द्वारा किया जाएगा । इसकी उपधारा (2) में यह उपबंधित है कि यदि विद्वान् न्यायाधीश अभियुक्त को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 के अधीन परिवीक्षा पर छोड़े जाने का फायदा देने की कार्यवाही नहीं करता है, तो विद्वान् न्यायाधीश दंडादेश के प्रश्न पर अभियुक्त को सुनेगा और फिर विधि के अनुसार उस पर दंडादेश अधिरोपित करेगा । इसलिए यह दिखाई पड़ता है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 235 दो भागों में

विभाजित है, पहला दोषसिद्धि अभिलिखित करना और यदि दोषसिद्धि अभिलिखित की जाती है, तो केवल सुने जाने का अवसर देने के पश्चात् दंडादेश अधिरोपित किया जाना है । दंडादेश पर सुनवाई करते समय यदि यह पाया जाता है कि अभियुक्त को पहले दोषसिद्ध किया गया था और यदि अभियुक्त इस बात को स्वीकार नहीं करता है, तो विद्वान् न्यायाधीश के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 236 के अधीन अनुध्यात अनुसार उस पहलू पर निष्कर्ष अभिलिखित करना अपेक्षित है । इसके अतिरिक्त, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 353 में उस रीति को उपबंधित किया गया है जिसमें निर्णय सुनाया जाना अपेक्षित है और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 354 में निर्णय की भाषा और अंतर्वस्तुओं का उल्लेख है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 354 की उपधारा (1)(घ) और उपधारा (2) से (6) से यह उपदर्शित होता है कि दोषसिद्धि का आदेश किए जाने के पश्चात् भी विद्वान् न्यायाधीश द्वारा दंडादेश अधिरोपित करने के लिए विनिर्दिष्ट प्रक्रिया का अनुसरण किया जाना और दंड की कठोरता के लिए कारण देना अपेक्षित है जिससे यह दर्शित होता है कि यह एक सतत् प्रक्रिया है जिसमें विद्वान् न्यायाधीश से अपेक्षा की जाती है कि अपराध के कारित करने में अंतर्ग्रस्तता की प्रकृति, उसकी गंभीरता का अवधारण करने के लिए अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर अपने मस्तिष्क का प्रयोग करे और दंडादेश अधिरोपित करे जैसा कि सिविल कार्यवाही में नहीं किया जाता है जहां डिक्री यद्यपि निर्णय के आधार पर बनाना एक अनुसचिवीय कृत्य है ।

24. उपरोक्त पहलुओं से यह उपदर्शित होता है कि दोषसिद्धि का निर्णय सुनाए जाने के पश्चात् भी विचारण पूर्ण नहीं होता है चूंकि विद्वान् सेशन न्यायाधीश से उस साक्ष्य पर अपने मस्तिष्क का प्रयोग करने की अपेक्षा की जाती है जो उस आरोप की गंभीरता जिसके लिए अभियुक्त दोषी पाया जाता है, जब अपराध में एक से अधिक अभियुक्त हों तब किसी विशिष्ट अभियुक्त की भूमिका का अवधारण करने के लिए अभिलेख पर उपलब्ध है और उस आलोक में समुचित दंडादेश अधिनिर्णीत करेगा । इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि केवल दोषसिद्धि का निर्णय सुनाने पर विचारण पूर्ण हो जाता है, यद्यपि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 232 के अधीन अनुध्यात अनुसार दोषमुक्ति की दशा में ऐसा

हो सकता है चूंकि उस दशा में विद्वान् न्यायाधीश द्वारा दोषमुक्ति का आदेश अभिलिखित करने के सिवाय आगे कुछ नहीं किया जाना होता है जिसके परिणामस्वरूप विचारण का समापन हो जाता है ।

25. इस संबंध में, **रामा नारंग** बनाम **रमेश नारंग और अन्य**[1] वाले मामले में के विनिश्चय को निर्दिष्ट करना उपयुक्त होगा जिसमें तीन माननीय न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया था :–

> "12. अध्याय 18 सेशन न्यायालय के समक्ष विचारण के संबंध में है । धारा 225 से 227 आरोप विरचित करने से पूर्व के प्रक्रम के संबंध में है । धारा 228 अभियुक्त व्यक्ति के विरुद्ध आरोप विरचित करने से संबंधित है । यदि आरोप विरचित करने के पश्चात् अभियुक्त दोषी होने का अभिवचन करता है तो न्यायाधीश उस अभिवाक् को लेखबद्ध करेगा और उसके आधार पर उसे, स्वविवेकानुसार, दोषसिद्ध कर सकता है । तथापि, यदि वह दोषी होने का अभिवचन नहीं करता है, तो धारा 230 और 231 में अभियोजन साक्ष्य प्रस्तुत करने का उपबंध है । यदि अभियोजन साक्ष्य और अभियुक्त की परीक्षा पूर्ण होने पर न्यायाधीश का यह विचार है कि ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है कि अभियुक्त ने वह अपराध किया है जिसके लिए वह आरोपित है, तो न्यायाधीश दोषमुक्ति का आदेश अभिलिखित करेगा । यदि न्यायाधीश धारा 232 के अधीन दोषमुक्ति का आदेश अभिलिखित नहीं करता है, तो अभियुक्त को अपनी प्रतिरक्षा प्रस्तुत करने के लिए कहा जाएगा, जैसी कि धारा 233 में अपेक्षा की गई है । धारा 234 में की गई अपेक्षा के अनुसार प्रतिरक्षा में साक्ष्य पूर्ण होने के पश्चात् और बहस सुनने के पश्चात् धारा 235 में न्यायाधीश से यह अपेक्षा की गई है कि वह मामले में निर्णय दे । <u>यदि अभियुक्त दोषसिद्ध किया जाता है, तो धारा 235 की उपधारा (2) में यह अपेक्षित है कि न्यायाधीश, उस दशा के सिवाय जिसमें वह धारा 360 के उपबंधों के अनुसार कार्यवाही करता है, दंड के प्रश्न पर अभियुक्त को सुनेगा और फिर</u>

---

[1] (1995) 2 एस. सी. सी. 513.

विधि के अनुसार उस पर दंडादेश पारित करेगा । इस प्रकार, यह दिखाई देता है कि संहिता के अधीन दोषसिद्धि अभिलिखित किए जाने के पश्चात् धारा 235(2) में, अन्य बातों के साथ-साथ, यह उपबंधित है कि न्यायाधीश दंड के प्रश्न पर अभियुक्त को सुनेगा और फिर विधि के अनुसार उस पर दंडादेश पारित करेगा । इसलिए विचारण की समाप्ति केवल दोषसिद्ध व्यक्ति को दंडादेश अधिनिर्णीत किए जाने के पश्चात् होती है ।

13. अध्याय 27 निर्णय के संबंध में है । धारा 354 में निर्णय की अंतर्वस्तुओं को उपवर्णित किया गया है । इस धारा में यह कहा गया है कि धारा 353 में निर्दिष्ट प्रत्येक निर्णय, अन्य बातों के साथ-साथ, उस अपराध (यदि कोई हो), जिसके लिए और दंड संहिता, 1860 या अन्य विधि की वह धारा, जिसके अधीन अभियुक्त दोषसिद्ध किया गया है और वह दंड जिसके लिए वह दंडादिष्ट है, विनिर्दिष्ट करेगा । इस प्रकार, कोई निर्णय तब तक पूर्ण नहीं होता है जब तक वह दंड इसमें उपवर्णित नहीं किया जाता है जिसके लिए अभियुक्त व्यक्ति को दंडादिष्ट किया गया है । धारा 356 में पूर्वतन सिद्धदोष अपराधी को अपने पते की सूचना देने का आदेश करने का उल्लेख है । धारा 357 में प्रतिकर का संदाय करने के संबंध में आदेश करने का उल्लेख है । धारा 359 में असंज्ञेय मामलों में खर्चा देने के लिए आदेश करने का उपबंध किया गया है और धारा 360 सदाचरण के आधार पर परिवीक्षा पर छोड़ देने का आदेश करने का उल्लेख है । इस प्रकार, उपरोक्त उपबंधों से यह दिखाई देता है कि न्यायालय द्वारा कोई दोषसिद्धि अभिलिखित करने के पश्चात् अभियुक्त को दंडादेश के प्रश्न पर सुना जाना चाहिए और केवल दंडादेश अधिनिर्णीत करने के पश्चात् निर्णय पूर्ण होता है और इसके विरुद्ध संहिता की धारा 374 के अधीन अपील की जा सकती है ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

26. इसी प्रकार, विचारण को अंतिमता प्रदान करने के लिए निर्णय का गठन किस बात से होता है इसके तात्पर्य पर विचार करते हुए **याकूब**

अब्दुल रज़ाक मेमन बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में दो माननीय न्यायाधीशों की एक न्यायपीठ ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया था :–

> "106. यह स्पष्ट है कि दोषसिद्धि का आदेश धारा 353 के अधीन अनुध्यात अनुसार 'निर्णय' नहीं है और यह कि कोई निर्णय दंडादेश अधिनिर्णीत किए जाने के पश्चात् ही सुनाया जाता है ।
>
> 113. निर्णय से यह भी स्पष्ट है कि अपीलार्थी (अभियुक्त-1) द्वारा दंडादेश-पूर्व सुनवाई के दौरान विस्तृत दलीलें दी गई थीं और इन दलीलों पर विचार किया गया था और तद्नुसार, पदाभिहित न्यायाधीश द्वारा अंतिम निर्णय के पैरा 46 में संहिता की धारा 235(2) और धारा 353 की अपेक्षा के अनुपालन में कारण अभिलिखित किए गए हैं । यह भी उल्लेख करना सुसंगत है कि धारा 354 में यह स्पष्ट किया गया है कि 'निर्णय' में अभियुक्त को अधिनिर्णीत दंड भी अंतर्विष्ट होगा । अत: यह दंडादेश का अवधारण किए जाने के पश्चात् ही पूर्ण होता है ।"
>
> (बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

27. अत: उपबंधों के परिशीलन और इस न्यायालय के विनिश्चयों से यह स्पष्ट है कि किसी दांडिक अभियोजन में विचारण का समापन यदि इसकी परिणिति दोषसिद्धि में होती है तो निर्णय पूरी तरह से पूर्ण हुआ केवल तब समझा जाता है जब यदि सिद्धदोष व्यक्ति को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 का फायदा न देते हुए उस पर दंडादेश अधिरोपित किया जाता है । इसी प्रकार, ऐसे मामले में जहां एक से अधिक अभियुक्त हैं और उनमें से एक या अधिक दोषमुक्त कर दिए जाते हैं तथा अन्य दोषसिद्ध किए जाते हैं, तो उन अभियुक्तों के विरुद्ध विचारण समाप्त हो जाएगा जो दोषसिद्ध किए जाते हैं और दोषसिद्ध अभियुक्तों के विरुद्ध विचारण दंडादेश के अधिरोपण के साथ समाप्त होगा । जब दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के संदर्भ में विचार किया जाए, तो इसका कोई द्विविभाजन नहीं होगा, जैसे कि दलील दी गई है,

---

[1] (2013) 13 एस. सी. सी. 1

चूंकि यहां जो सुसंगत हो जाता है वह केवल अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर किसी नए अभियुक्त को समन करने का विनिश्चय है जिससे विद्यमान अभियुक्तों पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा चूंकि जो भी स्थिति हो वे दोषसिद्ध हो गए हैं ।

28. मामले को इस प्रकार दृष्टिगत करते हुए, यदि न्यायालय विचारण की प्रक्रिया में लेखबद्ध किए गए साक्ष्य से यह पाता है कि कोई अन्य व्यक्ति अंतर्ग्रस्त है, तो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन अभियुक्त को समन करने के लिए ऐसी शक्ति का प्रयोग दंडादेश अधिरोपित किए जाने से पूर्व इस आशय का आदेश पारित करके किया जा सकता है और निर्णय पूरी तरह से पूर्ण हो जाता है तथा विचारण का समापन हो जाता है । ऐसे निष्कर्ष पर पहुंचते समय जो बात ध्यान में रखी जानी चाहिए वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 की उपधारा (4) में की गई अपेक्षा है । उक्त उपबंध से यह स्पष्ट है कि यदि विद्वान् सेशन न्यायाधीश अतिरिक्त अभियुक्त को समन करने के लिए शक्ति का प्रयोग करता है, तो ऐसे व्यक्ति के संबंध में कार्यवाहियां नए सिरे से आरंभ की जाएंगी और अतिरिक्त अभियुक्त की मौजूदगी में साक्षियों की फिर से परीक्षा की जाएगी । ऐसे किसी मामले में जहां विद्वान् सेशन न्यायाधीश साक्षियों का साक्ष्य अभिलिखित करने के पश्चात् या दोषसिद्धि का निर्णय सुनाने के पश्चात् किंतु दंडादेश अधिरोपित करने से पूर्व दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन शक्ति का प्रयोग करता है, तो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 273 को ध्यान में रखते हुए वही साक्ष्य जो अभिलेख पर उपलब्ध है, नए जोड़े गए अभियुक्त के विरुद्ध प्रयुक्त नहीं किया जा सकता । उस अभियुक्त के विरुद्ध जिसे बाद में समन किया गया है, एक नया विचारण किया जाना चाहिए । तथापि, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन आवेदन पर विचार करते समय यदि विद्वान् सेशन न्यायाधीश द्वारा अतिरिक्त अभियुक्त को समन करने का विनिश्चय दोषसिद्धि का निर्णय पारित करने से पूर्व या दंडादेश पर आदेश पारित करने से पूर्व का है, तो निर्णय सुनाकर विचारण के समापन को विधारित किया जाना अपेक्षित है और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन आवेदन का निपटारा किया जाना चाहिए और केवल तब निर्णय का समापन या तो अन्य अभियुक्तों को दोषसिद्ध करके जो

पहले न्यायालय के समक्ष थे और उन्हें दंडादिष्ट करने की कार्यवाही की जा सकती है । ऐसा इसलिए है चूंकि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन शक्ति का प्रयोग दोषसिद्धि और दंडादेश का निर्णय पारित करके केवल विचारण के समापन से पूर्व किया जा सकता है ।

29. यद्यपि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 में यह उपबंधित है कि इसकी उपधारा (1) के अनुसार समन किए गए ऐसे व्यक्ति का विचारण, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 223 के अधीन न्यायालय को संयुक्त विचारण करने के लिए उपलब्ध शक्ति को ध्यान में रखते हुए, अन्य अभियुक्त के साथ संयुक्त रूप से किया जा सकता है, तो भी विद्वान् सेशन न्यायाधीश दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन आवेदन पर विचार करने और अतिरिक्त अभियुक्त को समन करने का विनिश्चय करने के समय पर इस बारे में भी विनिश्चय करने के लिए स्वतंत्र होगा कि क्या विचारण किए गए अभियुक्तों के विरुद्ध पारित किए गए निर्णय को आस्थगित करके ऐसे अभियुक्त को समन करने के पश्चात् संयुक्त विचारण किया जाना चाहिए या नहीं । यदि यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि नए जोड़े गए अभियुक्त के विरुद्ध नए सिरे से विचारण किया जाए तो पृथक् रूप से विचारण किया जा सकता है ऐसी स्थिति में विद्वान् सेशन न्यायाधीश इस प्रकार का आदेश करने के लिए स्वतंत्र होगा और उस अभियुक्त के संबंध में निर्णय पारित करने और विचारण समाप्त करने की कार्यवाही करने के लिए स्वतंत्र होगा जिसके विरुद्ध उसने मूल रूप से कार्यवाही आरंभ की थी और उसके पश्चात् नए जोड़े गए अभियुक्त के मामले में कार्यवाही करेगा । तथापि, महत्वपूर्ण बात यह है कि अतिरिक्त अभियुक्त को न्यायालय द्वारा या तो स्वप्रेरणा से समन करने के विनिश्चय पर या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन आवेदन के आधार पर समन करने के विनिश्चय पर सभी संभाव्यता में विचार किया जाएगा और इसका निपटारा दोषसिद्धि और दंडादेश का निर्णय सुनाए जाने से पूर्व किया जाएगा, इससे अन्यथा विचारण समाप्त हो जाएगा और न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन शक्ति से वंचित हो जाएगा । चूंकि न्यायालय को यह विनिश्चय करने की शक्ति उपलब्ध है कि क्या संयुक्त विचारण किया जाना चाहिए या नहीं, इस न्यायालय ने **शशिकांत**

सिंह (उपर्युक्त) वाले मामले में यह अभिनिर्धारित करके न्यायोचित किया था कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319(1) में यथा अंतर्विष्ट "अभियुक्त के साथ विचारण किया जा सकता है" वाक्यांश निदेशात्मक है, जो हमारी राय में सही दृष्टिकोण है ।

30. एक अन्य पहलू जिसे स्पष्ट किया जाना आवश्यक है, यह है कि यदि फरार अभियुक्त के विरुद्ध विचारण को विभाजित (द्विविभाजित) किया जाता है और लंबित है, तो इस बात से ही दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन फाइल किए गए आवेदन को या पूर्वतन मुख्य विचारण में अतिरिक्त अभियुक्त को समन करने के लिए न्यायालय के आदेश को विधिमान्यता नहीं मिल जाएगी यदि ऐसा समन करने वाला आदेश अन्य अभियुक्तों के विरुद्ध पूर्वतन समाप्त हो गए विचारण में किया गया है । ऐसा इसलिए है क्योंकि न्यायालय द्वारा ऐसी शक्ति का प्रयोग उस मामले में जिसमें अभियुक्त को समन किए जाने की ईप्सा की गई है, अभिलिखित किए गए साक्ष्य के आधार पर उसकी अंतर्ग्रस्तता इंगित हो रही है, किया जा सकता है । यदि विभाजित (द्विभाजित) मामले में, फरार अभियुक्त की उपस्थिति सुनिश्चित करने पर विचारण आरंभ किया जाता है और यदि उसमें अभिलिखित किए गए साक्ष्य से किसी अन्य व्यक्ति की अंतर्ग्रस्तता इंगित होती है, जैसा कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 में अनुध्यात किया गया है, तो उस मामले में विचारण के समापन से पूर्व विभाजित (द्विविभाजित) मामले में अभियुक्त को समन करने की ऐसी शक्ति का निश्चित रूप से अवलंब लिया जा सकता है ।

31. इस विवाद्यक का विश्लेषण करके और सभी पहलुओं पर उपरोक्त निष्कर्ष निकालते हुए हम, अन्य मामलों के साथ-साथ, **राजेन्द्र सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण द्वारा भी प्रेरित हुए हैं, जिसमें दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के उद्देश्य के संबंध में निम्नलिखित निष्कर्ष निकाला गया है :–

"20. संहिता की धारा 319 के अधीन शक्ति न्यायालय को

---

[1] (2007) 7 एस. सी. सी. 378.

यह सुनिश्चित करने के लिए प्रदत्त की गई है कि किसी अपराध के सभी दोषी व्यक्तियों पर दोषारोपण करके समाज के प्रति न्याय किया जाए । दांडिक न्याय व्यवस्था के उद्देश्यों और प्रयोजनों में एक सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखना है । उस संदर्भ में यह सुनिश्चित किया जाना आवश्यक है कि कोई भी जो दोषी प्रतीत होता है, उस दोष के संबंध में एक उचित विचारण का सामना करने से न बच सके । यह भी कर्तव्य है कि अपराध के शिकार के साथ न्याय किया जाए । इसी मान्यता को लेकर संहिता में न्यायालय को उन अन्य व्यक्तियों के विरुद्ध कार्यवाही करने की शक्ति विनिर्दिष्ट रूप से प्रदत्त की गई है जो इस धारा द्वारा उपवर्णित परिस्थितियों में अभियुक्त के रूप में क्रमबद्ध नहीं किए गए हैं । यह एक हितकारी शक्ति है जो अपराध के सभी दोषियों पर दोषारोपण करने के लिए समाज के प्रति न्यायालय की आबद्धता का निर्वहन करने के लिए उसे समर्थ बनाती है ।

21. मेरे मत में, संहिता की धारा 319 के अधीन उस साक्ष्य के आधार पर जो उसके समक्ष आता है, अपराध का विचारण करने के लिए शक्ति का प्रयोग करना न्यायालय पर छोड़ा गया है । संहिता की धारा 319 के अधीन शक्ति का प्रयोग करने के लिए न्यायालय को पूर्ववर्ती शर्त का अवश्य समाधान करना चाहिए । यह धारणा करने का कोई कारण नहीं है कि विधि में पारंगत न्यायालय इस उपबंध की परिसीमाओं के भीतर रहकर शक्ति का प्रयोग और यह विनिश्चय नहीं करेगा कि क्या वह ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध कार्यवाही कर सकता है या नहीं । इस शक्ति और विवेकाधिकार को या तो असाधारण कहकर या यह कहकर कि इसका प्रयोग केवल आपवादिक परिस्थितियों में किया जाएगा, इसमें बाधा डालने का कोई तर्काधार नहीं है । इसका प्रयोग तब किया जाना आशयित है जब धारा द्वारा अनुध्यात अवसर उद्भूत होता है ।"

32. जैसा कि **मंजीत सिंह** बनाम **हरियाणा राज्य और अन्य**[1] वाले

[1] 2021 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 632.

मामले के पैरा 34 में उपदर्शित किया गया है, हमने भी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के उद्देश्य और इसके अधीन प्रयोक्तव्य शक्ति के विश्लेषण को बिंदुवार ध्यान में रखा है ।

33. ऊपर उल्लिखित सभी कारणों से हम निर्देशित किए गए प्रश्नों का निम्नलिखित उत्तर देते हैं :–

> "I. क्या विचारण न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन उस समय अतिरिक्त अभियुक्त को समन करने की शक्ति है जब अन्य सह-अभियुक्तों के संबंध में विचारण समाप्त हो गया है और समन करने का आदेश सुनाने से पूर्व उसी तारीख को दोषसिद्धि का निर्णय सुनाया गया है ?

जहां अभियुक्त की दोषसिद्धि का निर्णय है वहां दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन शक्ति का अवलंब और इसका प्रयोग दंडादेश का आदेश सुनाए जाने के पूर्व किया जाना चाहिए । दोषमुक्ति की दशा में, इस शक्ति का प्रयोग दोषमुक्ति का आदेश सुनाए जाने के पूर्व किया जाना चाहिए । अत: दोषसिद्धि की दशा में समन आदेश दंडादेश अधिरोपित करके विचारण का समापन होने से पूर्व होना चाहिए । यदि आदेश उसी दिन पारित किया जाता है, तो इसकी परीक्षा प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में करनी होगी और यदि ऐसा समन आदेश या तो दोषमुक्ति के आदेश के पश्चात् या दोषसिद्धि की दशा में दंडादेश अधिरोपित करने के पश्चात् पारित किया जाता है, तो वह संधार्य नहीं होगा ।

> II. क्या विचारण न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन उस समय अतिरिक्त अभियुक्त को समन करने की शक्ति है जब कतिपय अन्य फरार अभियुक्तों (जिनकी उपस्थिति को बाद में सुनिश्चित किया गया) के संबंध में विचारण मुख्य विचारण से विभाजित करने के कारण चल रहा है/लंबित है ?

विचारण न्यायालय को उस समय अतिरिक्त अभियुक्त को समन करने की शक्ति है जब फरार अभियुक्त की उपस्थिति सुनिश्चित करने के पश्चात् उसकी बाबत विचारण आंरभ हो जाता है और यह इस बात के

अध्यधीन होगी कि विभाजित (द्विविभाजित) किए गए विचारण में अभिलिखित किए गए साक्ष्य से समन किए जाने की ईप्सा करने वाले अभियुक्त की अंतर्ग्रस्तता इंगित होती हो । किंतु समाप्त हो गए मुख्य विचारण में अभिलिखित किया गया साक्ष्य समन आदेश का आधार नहीं हो सकता यदि ऐसी शक्ति का प्रयोग मुख्य विचारण में इसका समापन होने तक नहीं किया गया है ।

III. वे मार्गदर्शक सिद्धांत क्या हैं जिनका सक्षम न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए अवश्य अनुसरण करना चाहिए ?"

(i) यदि सक्षम न्यायालय अभिलिखित किए गए साक्ष्य के आधार पर, दोषमुक्ति या दंडादेश का आदेश पारित किए जाने से पूर्व, विचारण के किसी प्रक्रम पर किसी अन्य व्यक्ति की अपराध कारित करने में अंतर्ग्रस्तता के संबंध में साक्ष्य पाता है या यदि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन आवेदन फाइल किया जाता है, तो उस प्रक्रम पर विचारण को रोक दिया जाएगा ।

(ii) तदुपरांत न्यायालय पहले अतिरिक्त अभियुक्त को समन करने की आवश्यकता या अन्यथा का विनिश्चय करेगा और उस पर आदेश पारित करेगा ।

(iii) यदि न्यायालय का विनिश्चय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन शक्ति का प्रयोग करने और अभियुक्त को समन करने का है, तो ऐसा समन आदेश मुख्य मामले में विचारण में आगे अग्रसर होने से पूर्व पारित किया जाएगा ।

(iv) यदि अतिरिक्त अभियुक्त को समन करने का आदेश पारित किया जाता है, तो उस प्रक्रम पर निर्भर करते हुए जिस पर यह पारित किया जाता है, न्यायालय इस तथ्य पर भी अपने मस्तिष्क का प्रयोग करेगा कि क्या ऐसे समन किए गए अभियुक्त का विचारण अन्य अभियुक्तों के साथ किया जाना चाहिए या पृथक् रूप से ।

(v) यदि विनिश्चय संयुक्त विचारण करने का है, तो नए सिरे से विचारण समन किए गए अभियुक्त की उपस्थिति सुनिश्चित करने

के पश्चात् ही आरंभ किया जाएगा ।

(vi) यदि विनिश्चय यह है कि समन किए गए अभियुक्त का पृथक् रूप से विचारण किया जा सकता है, तो ऐसा आदेश किए जाने पर न्यायालय के लिए उन अभियुक्तों के विरुद्ध विचारण जारी रखने और समाप्त करने में कोई अड़चन नहीं होगी जिनके विरुद्ध कार्यवाही चल रही थी ।

(vii) यदि ऊपर (i) के अनुसार रोकी गई कार्यवाही ऐसे मामले में है जहां उन अभियुक्तों को, जिनका विचारण किया गया था, दोषमुक्त किया जाना है और विनिश्चय यह है कि समन किए गए अभियुक्त का नए सिरे से पृथक् रूप से विचारण किया जा सकता है, तो मुख्य मामले में दोषमुक्ति का निर्णय पारित करने में कोई अड़चन नहीं होगी ।

(viii) यदि इस शक्ति का अवलंब या प्रयोग मुख्य विचारण में इसके समापन तक नहीं किया जाता है और यदि विभाजित (द्विविभाजित) मामला है, तो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन शक्ति का अवलंब या प्रयोग केवल तब किया जा सकता है यदि इस आशय का ऐसा साक्ष्य है जिससे विभाजित (द्विविभाजित) विचारण में समन किए जाने वाले अतिरिक्त अभियुक्त की अंतर्ग्रस्तता इंगित होती हो ।

(ix) यदि बहस सुने जाने और मामला आरक्षित रखने के पश्चात् न्यायालय के लिए दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन शक्ति का अवलंब लेने और प्रयोग करने का अवसर उद्भूत होता है, तो न्यायालय के लिए समुचित प्रक्रिया यह है कि वह उस पर फिर से सुनवाई को अभिलिखित करे ।

(x) उसे फिर से सुनवाई के लिए अभिलिखित करने पर, समन करने के बारे में विनिश्चय करने के लिए ऊपर अधिकथित प्रक्रिया; संयुक्त विचारण करने या अन्यथा के बारे में विनिश्चय किया जाएगा और तद्नुसार कार्यवाही की जाएगी ।

(xi) यहां तक कि ऐसे मामले में भी उस प्रक्रम पर यदि विनिश्चय

अतिरिक्त अभियुक्त को समन करने और एक संयुक्त विचारण करने का है, तो फिर से विचारण किया जाएगा और नए सिरे से कार्यवाहियां की जाएगी ।

(xii) यदि उस परिस्थिति में, समन किए गए अभियुक्त के मामले में विनिश्चय पहले उपदर्शित किए गए अनुसार पृथक् विचारण करने का है, तो

(क) मुख्य मामले का दोषसिद्धि और दंडादेश सुनाकर विनिश्चय किया जा सकेगा और फिर समन किए गए अभियुक्त के विरुद्ध नए सिरे से कार्यवाही की जा सकेगी ;

(ख) दोषमुक्ति के मामले में, मुख्य मामले में उस आशय का आदेश पारित किया जाएगा और फिर समन किए गए अभियुक्त के विरुद्ध नए सिरे से कार्यवाही की जाएगी ।

34. निर्देशित प्रश्नों का उपरोक्त रीति में उत्तर देने के पश्चात् हम रजिस्ट्री को निदेश देते हैं कि माननीय मुख्य न्यायमूर्ति से आदेश अभिप्राप्त किया जाए और मामले में उद्भूत तथ्यात्मक पहलुओं पर विधिक स्थिति की पृष्ठभूमि में और गुणागुण के आधार पर दलीलों के आधार पर विनिश्चय करने के लिए समुचित न्यायपीठ के समक्ष रखा जाए ।

35. विलग होने से पूर्व, हम सभी विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल/काउंसेलों, जिनमें विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री एस. नागमुथु भी हैं जिन्होंने न्याय-मित्र के रूप में इस न्यायालय की सहायता की, द्वारा की गई सहायता के लिए सराहना करते हैं ।

निर्देश का उत्तर दिया गया ।

जस.

टी. पी. गोपालकृष्णन्

बनाम

केरल राज्य

[2017 की दांडिक अपील सं. 187-188]

8 दिसंबर, 2022

न्यायमूर्ति बी. आर. गवई और न्यायमूर्ति बी. वी. नागरत्ना

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 20(2) [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 300] – दोहरे संकट के विरुद्ध संरक्षण – अपीलार्थी-अभियुक्त द्वारा कृषि अधिकारी के रूप में कार्य करते हुए धन का दुर्विनियोजन किया जाना – अपीलार्थी को अभियोजित किया जाना और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(1)(ग) के साथ पठित धारा 13(2) तथा दंड संहिता की धारा 409 के अधीन दोषसिद्ध तथा दंडादिष्ट किया जाना – बाद में की गई पुन: लेखापरीक्षा के आधार पर अपीलार्थी को उसी अवधि और उन्हीं तथ्यों के आधार पर पुन: अभियोजित किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना तथा उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किया जाना – संधार्यता – अभिलेख पर के तथ्यों से यह पाए जाने पर कि अपीलार्थी-अभियुक्त द्वारा किए गए अपराध के लिए उसके विरुद्ध पूर्ववर्ती मामलों में लगाए गए आरोप और वर्तमान मामलों में लगाए गए आरोप उसी अपराध और उसी अवधि और उन्हीं तथ्यों से संबंधित हैं, तो दोहरे संकट के सिद्धांत को लागू करते हुए वर्तमान मामलों में निचले न्यायालयों द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट करते हुए पारित किए गए निर्णयों को कायम नहीं रखा जा सकता और यदि वर्तमान मामलों के अपराधों को भिन्न अपराध मान भी लिया जाए तो भी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 300(2) के अधीन राज्य सरकार की पूर्व सम्मति अभिप्राप्त करने में असफल रहने के कारण वर्तमान विचारण अविधिपूर्ण था ।

इन अपीलों के तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी-अभियुक्त ने

तारीख 31 मई, 1991 से 31 मई, 1994 की अवधि में कृषि अधिकारी, राज्य बीज फार्म, पेराम्ब्रा में कार्यरत रहते हुए एक लोक सेवक के नाते अपनी पदीय स्थिति का दुरुपयोग किया और आपराधिक न्यास भंग कारित किया तथा तारीख 27 अप्रैल, 1992 से 25 अगस्त, 1992 की अवधि के दौरान नीलामी से प्राप्त कतिपय रकम को उप-कोषागार में विप्रेषित न करके दुर्विनियोजन किया । मई, 1994 में राज्य बीच फार्म, पेराम्ब्रा में एक औचक निरीक्षण किया गया था और निरीक्षण दल ने पाया कि रोकड़ बही को उचित रूप से बनाए नहीं रखा गया था और कृषि अधिकारी ने खजाने से रकम प्राप्त की थी । निरीक्षण रिपोर्ट कृषि निदेशक को प्रस्तुत की गई । उक्त रिपोर्ट के आधार पर सतर्कता विभाग द्वारा जांच की गई और अभियुक्त के विरुद्ध तारीख 5 फरवरी, 1996 को एक आपराधिक मामला रजिस्ट्रीकृत किया गया । अन्वेषण पूर्ण होने पर सतर्कता और भ्रष्टाचार निरोध ब्यूरो ने तीन रिपोर्टें प्रस्तुत की और अभियुक्त के विरुद्ध 1999 का आपराधिक मामला सं. 12 (तारीख 28 मार्च, 1994 और 2 अप्रैल, 1994 के बीच की अवधि में कारित किए गए अपराधों के लिए) ; 1999 का आपराधिक मामला सं. 13 (तारीख 15 दिसंबर, 1992 से 31 मार्च, 1993 की अवधि में कारित किए गए अपराधों के लिए) और 1999 का आपराधिक मामला सं. 14 (तारीख 5 मार्च, 1994 से 8 मार्च, 1994 की अवधि में कारित किए गए अपराधों के लिए) भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम (जिसे इसमें आगे अधिनियम कहा गया है) की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 13(1)(ग) और भारतीय दंड संहिता की धारा 409 और 477क के अधीन रजिस्ट्रीकृत किए । इन तीन मामलों में से दो मामलों में अपीलार्थी को दोषसिद्ध और एक मामले में दोषमुक्त कर दिया गया था । लेखाधिकारी ने राज्य बीज फार्म में तारीख 31 मई, 1991 से 31 मई, 1991 की अवधि से संबंधित लेखापरीक्षा की और एक रिपोर्ट दी । इस रिपोर्ट के आधार पर अपीलार्थी के विरुद्ध दो मामले 2003 का आपराधिक मामला सं. 24 और 2003 का आपराधिक मामला सं. 25 रजिस्ट्रीकृत किए गए । विचारण न्यायालय द्वारा अभिलेख पर के साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् अभियुक्त को अधिनियम की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 13(1)(ग) और भारतीय दंड संहिता की धारा 409 के अधीन अपराधों के लिए यह

अभिनिर्धारित करते हुए दोषसिद्ध किया कि अभियुक्त ने तारीख 27 अप्रैल, 1992 से 25 अगस्त, 1992 और 1 मार्च, 1993 से 12 अप्रैल, 1994 तक की अवधि के दौरान 78,706/- रुपए की रकम जो नीलामी के आगम का दो-तिहाई थी, को कोषागार में विप्रेषित न करके इसका दुर्विनियोजन किया था । विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय से व्यथित होकर अपीलार्थी-अभियुक्त ने विचारण न्यायालय के निर्णय को चुनौती देते हुए उच्च न्यायालय के समक्ष दांडिक अपीलें फाइल की गईं । उक्त अपीलों को खारिज कर दिया गया और दोषसिद्धि को कायम रखा गया । निचले न्यायालयों द्वारा पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय से व्यथित होकर अपीलार्थी द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपीलें फाइल की गईं और दलील दी गई कि अपीलार्थी को पहले ही उन्हीं अपराधों के लिए उसी प्रकार के तथ्यों पर अभियोजित तथा दंडित किया जा चुका है । वर्तमान दोनों मामलों में अपीलार्थी को अभियोजित करना दोहरे संकट की कोटि में आता है । भारत में दोहरे संकट के विरुद्ध संरक्षण भारत के संविधान के अनुच्छेद 20(2) के अधीन प्रतिष्ठापित एक मूल अधिकार है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 300 भी उक्त सिद्धांत पर आधारित है । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलों को मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – भारत के संविधान के अनुच्छेद 20 के खंड (2) के अधीन, किसी व्यक्ति को एक ही अपराध के लिए एक बार से अधिक अभियोजित और दंडित नहीं किया जाएगा । भारत के संविधान का अनुच्छेद 20(2) अपनी परिधि में पूर्व दोषसिद्धि के अभिवाक् अर्थात् पहले की गई दोषसिद्धि, जैसा कि ब्रिटिश विधिशास्त्र में जाना जाता है, या दोहरे संकट के अभिवाक्, जैसा कि अमेरिका के संविधान में जाना जाता है, को सम्मिलित करता है । तथापि, उक्त अवधारणाओं को अनुच्छेद 20(2) में परिसीमित किया गया है जिसमें यह उपबंधित है कि इसे उसी अपराध के लिए किसी दूसरे अभियोजन और दंड के लिए वर्जन के रूप में लागू करने के लिए प्रथम बार में न केवल अभियोजन किया गया हो अपितु दंड भी दिया गया हो । अनुच्छेद 20 के उप खंड (2) के पठन मात्र से यह स्पष्ट है कि उक्त उपबंध किसी दूसरे अभियोजन को केवल

वहां वर्जित करता है जहां अभियुक्त को पूर्व में उसी अपराध के लिए **अभियोजित** और **दंडित** दोनों किया गया हो । किंतु यह खंड पश्चात्वर्ती विचारण को तब वर्जित नहीं करता है यदि पूर्ववर्ती और पश्चात्वर्ती विचारणों में के अपराधों के संघटक भिन्न हैं । इस खंड को लागू करने के लिए तीन शर्तें हैं । पहली, पूर्ववर्ती कार्यवाही किसी सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय या न्यायिक अधिकरण के समक्ष होनी चाहिए जिसमें व्यक्ति को अवश्य अभियोजित किया गया हो । उक्त अभियोजन अवश्य विधिमान्य होना चाहिए न कि शून्य और अकृत या विफल । दूसरी, उसी अपराध के संबंध में और उन्हीं तथ्यों के आधार पर, जिसके लिए उसे पहली कार्यवाही में अभियोजित और दंडित किया गया था, दूसरी कार्यवाही के समय पर पूर्ववर्ती कार्यवाही में दोषसिद्धि या दोषमुक्ति अवश्य प्रवृत्त होनी चाहिए । तीसरी, पश्चात्वर्ती कार्यवाही अवश्य एक नई कार्यवाही होनी चाहिए जहां उसका दूसरी बार उसी अपराध के लिए और उन्हीं तथ्यों के आधार पर अभियोजित और दंडित किए जाने की ईप्सा की गई है । दूसरे शब्दों में, इस खंड का तब कोई उपयोजन नहीं है जब पश्चात्वर्ती कार्यवाही पूर्ववर्ती कार्यवाही की मात्र एक निरंतरता है, उदाहरण के लिए, जहां कोई अपील ऐसी दोषमुक्ति या दोषसिद्धि से उद्भूत होती है । दोहरे संकट के अभिवाक् को कायम रखने के लिए अवश्य यह दर्शित किया जाना चाहिए कि इस खंड की सभी पूर्वोक्त शर्तों का समाधान किया गया है । यहां यह उल्लेखनीय है कि इन दोनों उपबंधों अर्थात् दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 300 और भारत के संविधान के अनुच्छेद 20 में 'उसी अपराध' शब्द का प्रयोग किया गया है । प्रस्तुत विवाद्यक पर विचार करने से पूर्व यह समझना आवश्यक है कि 'उसी अपराध' शब्द से क्या अभिप्रेत है और इसमें क्या सम्मिलित है । साधारण भाषा में 'उसी अपराध' शब्द से अभिप्रेत है, जहां अपराध भिन्न नहीं हैं और अपराधों के संघटक समान हैं । जहां भिन्न संघटकों से बने दो भिन्न अपराध हैं, वहां भारत के संविधान के अनुच्छेद 20 के अधीन रोक का कोई उपयोजन नहीं है, यद्यपि अपराध कुछ अतिव्यापी विशेषता के हो सकते हैं । अनुच्छेद 20 की महत्वपूर्ण अपेक्षा यह है कि अपराध सभी प्रकार से वही और समान हैं । दोहरे संकट की अवधारणा को भारत

के संविधान के अनुच्छेद 21 के निबंधनों के अनुसार भी समझा जा सकता है जिसमें यह कहा गया है कि किसी व्यक्ति को उसके प्राण या दैहिक स्वतंत्रता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जाएगा अन्यथा नहीं । संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन 'प्राण' मात्र सांस लेने की शारीरिक क्रिया नहीं है । यह मात्र पशुवत् जीवन या जीवनभर चलने वाली नीरसता का द्योतक नहीं है । इसका अधिक व्यापक निहितार्थ है ; इसमें मानवीय गरिमा के साथ जीने का अधिकार सम्मिलित है । अनुच्छेद 21 की व्यापप्ति में, मुफ्त विधिक सहायता का अधिकार, त्वरित विचारण का अधिकार, ऋजु विचारण का अधिकार इत्यादि जैसे विभिन्न अधिकारों को सम्मिलित किया गया है । इसी प्रकार, दोहरे संकट के विरुद्ध संरक्षण भी भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 की व्याप्ति में सम्मिलित है । किसी व्यक्ति को उन्हीं तथ्यों पर उसी अपराध के लिए अभियोजित करना, जिसके लिए उसे पूर्व में या तो दोषमुक्त या दोषसिद्ध किया जा चुका है और दंड भुगत लिया है, व्यक्ति के गरिमा के साथ जीने के अधिकार को प्रभावित करता है । दोहरे संकट को प्राय: दोहरा दंड समझा जाता है । दोनों के बीच बड़ा फर्क है । दोहरा दंड तब उद्भूत हो सकता है जब कोई व्यक्ति एक अभ्यारोपण में आरोपित दो या अधिक अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया जाता है, तथापि, दोहरे संकट का प्रश्न केवल तब उद्भूत होता है जब पूर्ववर्ती अभ्यारोपण के आधार पर दोषसिद्धि या दोषमुक्ति के पश्चात् किसी पश्चात्वर्ती अभ्यारोपण के आधार पर किसी दूसरे विचारण की ईप्सा की जाती है । यह सिद्धांत निश्चित रूप से दूसरे दंडादेश या दंड के जोखिम से व्यक्ति के लिए संरक्षण नहीं है, न ही एक अपराध के लिए कोई दंडादेश भुगतने के लिए संरक्षण है अपितु उसी अपराध के लिए दोहरे संकट के विरुद्ध अर्थात् उसी अपराध के लिए दूसरे विचारण के विरुद्ध एक संरक्षण है । (पैरा 26, 27, 28, 29 और 30)

इस अपील में अपीलार्थी द्वारा अवलंब लिए गए साक्षियों के परिसाक्ष्यों को निर्दिष्ट करना सुसंगत होगा । अभि. सा. 5 उल्लीयेरी का निवासी था और 10 वर्षों से नारियल के कारबार में लगा था । उसने यह कथन किया था कि उसने वर्ष 1992-1993 के दौरान पेराम्ब्रा बीज फार्म

से कई बार नारियल खरीदे थे । उसने यह कथन किया कि अपीलार्थी, जो तब कृषि अधिकारी था, ने उसे तारीख 28 मई, 1992 को 8,724/- रुपए की रकम की रसीद की कार्बन प्रति सौंपी थी । एक-तिहाई रकम नीलामी की तारीख को जमा कर दी गई थी और शेष दो-तिहाई रकम का संदाय बाद में किया गया था और उसके द्वारा नारियल ले लिए गए थे । इस साक्षी ने यह कथन किया कि उसे स्मरण नहीं है कि क्या दो-तिहाई रकम के संदाय की रसीद दी गई थी या नहीं । इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया कि उसकी परीक्षा घटना की तारीख से आठ वर्ष पश्चात् की गई थी और उक्त कार्यालय में अन्य कर्मचारिवृंद भी थे । वह इस बारे में सटीक रूप से नहीं कह सकता कि उसने किस को रकम सौंपी थी और यह भी कि उसने रसीदें लेने पर जोर नहीं दिया था तथा यह स्मरण नहीं है कि क्या रसीदें दी गई थीं या नहीं । अभि. सा. 11 तारीख 21 दिसंबर, 1992 से 2 अप्रैल, 1996 तक थायन्ना में कृषि अधिकारी था । उसके पास राज्य बीज फार्म, पेराम्ब्रा के कृषि अधिकारी के रूप में अतिरिक्त प्रभार था । उसने अपने परिसाक्ष्य में यह कथन किया था कि जब उसने संयुक्त कृषि निदेशक और उप निदेशक की मौजूदगी में प्रभार लिया था, तब उसने उक्त कार्यालय की जंगम और स्थावर संपत्तियों को ग्रहण नहीं किया था । दस्तावेज ग्रहण नहीं किए गए थे क्योंकि कार्यालय में कोई दस्तावेज नहीं थे और उसने नकदी और रोकड़ बही के बारे में नहीं कहा था । इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया कि जब उसने प्रभार ग्रहण किया था, तब कार्यालय के कर्मचारिवृंद ने उक्त कार्यालय के मामलों के बारे में ब्रीफ किया था । इस साक्षी के अनुसार, बीज फार्म में बहुत-सारे नकद संव्यवहार किए गए थे और अधिकारियों की अनुपस्थिति में कर्मचारिवृंद नकदी संबंधी मामलों को संभालते थे । कृषि अधिकारी के पास क्षेत्र संबंधी कार्य भी होता था और कालिक सम्मेलनों के लिए भी बाहर जाना पड़ता था । अभि. सा. 12 तारीख 24 जनवरी, 1996 से 31 अगस्त, 1998 तक प्रधान कृषि कार्यालय का लेखाधिकारी था । उसने अपने परिसाक्ष्य में यह कथन किया था कि उस अवधि के दौरान उसने तारीख 1 अप्रैल, 1992 से 31 दिसंबर, 1994 तक की अवधि के लिए बीज फार्म की पुन: लेखापरीक्षा की थी । पुन: लेखापरीक्षा इसलिए की गई थी

चूंकि वहां यह अभ्यापत्तियां थीं कि फार्म की आय के ब्यौरे की विस्तार से जांच नहीं की गई थी । तारीख 1 अप्रैल, 1992 से 3 जून, 1994 तक की अवधि के लिए कृषि अधिकारी इस अपील में अपीलार्थी टी. पी. गोपालकृष्णन था ; तारीख 4 जून, 1994 से 6 जून, 1994 तक मिनी था ; और तारीख 7 जून, 1994 से विनोद कुमार था । चूंकि पूर्ववर्ती लेखापरीक्षा में अनियमितताएं थीं इसलिए पुन: लेखापरीक्षा की गई थी । अभि. सा. 12 ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया कि उसने वह विभागीय लेखापरीक्षा नहीं देखी थी जो पहले की गई थी । उसकी लेखापरीक्षा की अवधि के दौरान अभियुक्त निलंबनाधीन था । इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया कि वह रोकड़ बही और कार्यालय में अन्य दस्तावेजों के उपलब्ध न होने के कारणों की जानकारी नहीं है । अभि. सा. 13 सतर्कता और भ्रष्टाचार निरोध ब्यूरो, कोझिकोड का उप अधीक्षक है, जिसने वर्तमान मामले में तारीख 5 दिसंबर, 2001 को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की थी और दस्तावेज अभिगृहीत किए थे । इस साक्षी ने अन्वेषण किया था और अभियुक्त के विरुद्ध आरोप लगाए थे । वर्तमान मामले में अभियुक्त के विरुद्ध लंबित मामलों को दर्शित करने वाले दस्तावेजों की सत्यापित प्रतियां भी बरामद की गई थीं । अभि. सा. 13 ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया कि उसे पूर्ववर्ती तीन मामलों का पता चला था जिनमें अभियुक्त नामित था और उसे दो मामलों में दोषसिद्ध तथा एक मामले में दोषमुक्त किया गया था और उसने इस बारे में उच्च प्राधिकारियों को सूचित किया था । पूर्वोल्लिखित साक्षियों के परिसाक्ष्यों का परिशीलन करने पर जो प्रकट होता है वह यह है कि अभियोजन साक्षियों के परिसाक्ष्यों में महत्वपूर्ण फर्क और असंगतियां हैं । अभि. सा. 5 ने अपने परिसाक्ष्य में यह कथन किया था कि उसने इस अपील में अपीलार्थी को रकम दी थी जबकि अपनी प्रतिपरीक्षा में उसने यह कथन किया कि उसे ज्ञात नहीं है कि उसने किस को धनराशि सौंपी थी । अभि. सा. 11 द्वारा अपनी प्रतिपरीक्षा में किए गए कथन के अनुसार, बीज फार्म के कर्मचारिवृंद उसमें के अधिकारियों की अनुपस्थिति में मामलों को संभालते थे । इस साक्षी के परिसाक्ष्य से इस अपील में अपीलार्थी के पक्षकथन का समर्थन होता है चूंकि अपीलार्थी ने भी इसी प्रकार का अभिवाक् किया था ।

अभि. सा. 12 ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह कहा था कि उसे उन कारणों की जानकारी नहीं है कि क्यों रोकड़ बही और अन्य दस्तावेज कार्यालय में नहीं थे । अभि. सा. 12 ने कहीं भी यह नहीं कहा था कि वे दस्तावेज इस अपील में अपीलार्थी की अभिरक्षा में थे । (पैरा 32, 33, 34, 35 और 36)

विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करके गलती की है कि पूर्ववर्ती मामले के तथ्य और अभियुक्त द्वारा कारित दुर्विनियोजन प्रस्तुत मामले के सुसंगत तथ्यों के समान नहीं हैं । विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि वर्तमान मामले में अभिकथन यह है कि नारियलों और अध-भरे अनाज की नीलामी करने के पश्चात् सफल बोलीदाताओं से प्राप्त दो-तिहाई रकम को कोषागार में विप्रेषित नहीं किया गया था, तथापि, पूर्ववर्ती मामलों में अभिकथन यह थे कि अभियुक्त ने राज्य बीज फार्म, पेराम्ब्रा से कृषि विपणन निगम, कोझिकोड, केरल राज्य कॉयर विपणन निगम, कोझिकोड के स्वत्वधारी को संदत्त की जाने वाली कुछ रकम का अभिलेखों की कूटरचना और मिथ्याकरण करके दुर्विनियोजन किया था । अभियोजन का यह स्वीकृत पक्षकथन है कि वर्तमान मामले अभि. सा. 9 - सहायक उप निरीक्षक, सतर्कता और भ्रष्टाचार निरोध ब्यूरो, कोझिकोड द्वारा की गई पुन: लेखापरीक्षा पर आधारित थे । पुन: लेखापरीक्षा तारीख 1 अप्रैल, 1992 से 31 दिसंबर, 1994 तक की अवधि के लिए की गई थी । वर्तमान मामले में आरोप तारीख 27 अप्रैल, 1992 से 25 अगस्त, 1992 और 1 मार्च, 1993 से 12 अप्रैल, 1994 तक की सुसंगत अवधि तक के लिए हैं जो समयावधि वही है जो पूर्ववर्ती तीन मामलों अर्थात् क्रमश: 28 मार्च, 1994 से 22 अप्रैल, 1994, 15 दिसंबर, 1992 से 31 मार्च, 1993 और 5 मार्च, 1994 से 8 मार्च, 1994 तक की थी । इस प्रकार, यह कहा जा सकता है कि वर्तमान मामले उन्हीं तथ्यों से संबंधित हैं और उन्हीं अपराधों के संबंध में हैं, उसी अवधि के लिए हैं, उसी हैसियत में कारित किए गए थे जो पूर्ववर्ती तीन मामलों में थी जिनमें इस अपील में अपीलार्थी को पहले ही वर्ष 1999 में अभियोजित किया गया था । इन सभी पांचों मामलों में मुख्य अभिकथन रोकड़ बही में मिथ्या

प्रविष्टियां करके दुर्विनियोजन करने के संबंध में हैं । अभियोजन पक्ष का यह अभिकथन कि नीलामी रकम का दो-तिहाई कोषागार में विप्रेषित नहीं किया गया था, निधियों का दुर्विनियोजन करने के अंतर्गत आएगा जिसके लिए अपीलार्थी को पहले ही वर्ष 1999 में अभियोजित किया जा चुका है । अपीलार्थी ने ठीक ही यह दलील दी है कि पहले तीन मामलों में आरोप तारीख 17 अगस्त, 1999 को विरचित किए गए थे जो लेखापरीक्षा के बहुत बाद का समय है और अभियोजन पक्ष को वर्तमान मामलों के संबंध में तारीख 17 अगस्त, 1999 को भली-भांति जानकारी रही होगी । (पैरा 38)

अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने इस न्यायालय का ध्यान दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 300 की उपधारा (2) की ओर भी दिलाया जिसमें यह कहा गया है कि किसी अपराध के लिए दोषमुक्त या दोषसिद्ध किए गए किसी व्यक्ति का विचारण तत्पश्चात् राज्य सरकार की सम्मति से किसी ऐसे भिन्न अपराध के लिए किया जा सकता है जिसके लिए पूर्वगामी विचारण में उसके विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 220 की उपधारा (1) के अधीन पृथक् आरोप लगाया जा सकता है । इसमें ऊपर पहले ही यह मत व्यक्त किया गया है कि प्रस्तुत मामलों में अभिकथन/अपराध पूर्ववर्ती तीन मामलों में अभिकथनों/अपराधों के समान हैं इसलिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 300 (2) के अधीन आदेश के अनुसार राज्य सरकार की सम्मति आवश्यक है । यदि दलील देने के लिए यह मान लिया जाए कि वर्तमान मामलों में अभिकथन पूर्ववर्ती मामलों में के अभिकथनों से भिन्न हैं, तो भी अभियोजन पक्ष अभियुक्त-अपीलार्थी को अभियोजित करने के लिए आवश्यक राज्य सरकार की पूर्व सम्मति अभिप्राप्त करने में असफल रहा है और इसलिए प्रस्तुत मामले में का विचारण अविधिपूर्ण है । यह कहना गलत नहीं होगा कि अभियुक्त के विरुद्ध विरचित आरोपों से यह प्रकट होता है कि दुर्विनियोजन और लेखाओं का मिथ्याकरण करने के कई कृत्य किए गए थे, तथापि, वे उसी संव्यवहार में किए गए थे जिसके लिए उसे वर्ष 1999 में अभियोजित किया गया था । उसके विरुद्ध अभिकथित कृत्य एक-दूसरे से जुड़े हैं । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 300 की उपधारा (2) में यह कहा गया है कि जब दूसरे विचारण में आरोप एक भिन्न अपराध

के लिए है, तो विचारण वर्जित नहीं है । इससे यह अभिप्रेत है कि यदि किसी व्यक्ति को किसी अपराध में दोषमुक्त या दोषसिद्ध किया गया है, तो उसका एक भिन्न अपराध के लिए विचारण किया जा सकता है जिसके लिए बाद के विचारण में उसके विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 220 की उपधारा (1) के अधीन एक पृथक् आरोप लगाया जा सकता था किंतु यह इस पूर्ववर्ती शर्त के अध्यधीन है कि इससे पूर्व कि ऐसे व्यक्ति का विचारण किया जा सके राज्य सरकार की सम्मति की ईप्सा की जाए । प्रस्तुत मामले में उक्त उपबंध को लागू करते हुए यह पाया गया है कि अपीलार्थी का पूर्व में 1999 के आपराधिक मामला सं. 12, 1999 के आपराधिक मामला सं. 13 और 1999 के आपराधिक मामला सं. 14 में अधिनियम की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 13(1)(ग) तथा भारतीय दंड संहिता की धारा 409 और 477क के अधीन अपराधों के लिए विचारण किया गया था । अपीलार्थी का 2003 के आपराधिक मामला सं. 24 और 2003 के आपराधिक मामला सं. 25 में पुन: एक बार उसी अवधि के लिए अधिनियम की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 13(1)(ग) और भारतीय दंड संहिता की धारा 409 के अधीन अपराधों के लिए विचारण किया जा रहा है । अभिलेख पर यह प्रदर्शित करने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि 2003 का आपराधिक मामला 24 और 2003 का आपराधिक मामला सं. 25 राज्य सरकार की सम्मति के अनुसरण में आरंभ किए गए हैं । अभिलेख पर यह भी नहीं लाया गया है कि 2003 का आपराधिक मामला सं. 24 और 2003 का आपराधिक मामला सं. 25 उस किसी भिन्न अपराध के लिए है जिसके लिए अपीलार्थी के विरुद्ध एक पृथक् आरोप लगाया गया था और पूर्ववर्ती विचारण किए गए थे । अत : (क) साक्षियों के साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करने और पक्षकारों की परस्पर विरोधी दलीलों पर विचार करने के पश्चात् हमारा निष्कर्ष है कि उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय की अभिपुष्टि करके न्यायोचित नहीं किया था । (ख) पूर्वोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय ने इस अपील में अपीलार्थी को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट करके सही नहीं किया था और इसलिए आक्षेपित निर्णय अपास्त किए जाने योग्य हैं । (पैरा 38, 39, 40 और 41)

अवलंबित निर्णय

		पैरा
[2005]	(2005) 11 एस. सी. सी. 600 : **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली)** बनाम **नवजोत संधु** ;	28
[1994]	(1994) 4 एस. सी. सी. 656 : **विजयलक्ष्मी** बनाम **वासुदेवन** ;	23
[1979]	[1979] 1 उम. नि. प. 243 = 1978 ए. आई. आर. 597 : **मेनका गांधी** बनाम **भारत संघ** ;	29
[1966]	ए. आई. आर. 1966 एस. सी. 911 : **ठाकुर राम** बनाम **बिहार राज्य** ;	25
[1954]	ए. आई. आर. 1954 एस. सी. 375 : **एस. ए. वेंकटरमन** बनाम **भारत संघ** ;	26 , 27
[1953]	ए. आई. आर. 1953 एस. सी. 355 : **मकबूल हुसैन** बनाम **बंबई राज्य** ।	26

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2017 की दांडिक अपील सं. 187-188.

2009 की दांडिक अपील सं. 947 और 948 में केरल उच्च न्यायालय, एर्नाकुलम द्वारा तारीख 13 जून, 2016 को पारित किए गए निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री एडोल्फ मैथ्यू और श्री संजय जैन

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री सी. के. सासी, अब्दुल्ला नसीह वी. टी. और (सुश्री) मीना के. पोलोस

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति बी. वी. नागरत्ना ने दिया ।

न्या. नागरत्ना – ये दांडिक अपीलें 2009 की दांडिक अपील सं. 947 और 948 में केरल उच्च न्यायालय, एर्नाकुलम द्वारा तारीख 13 जून, 2016 को पारित किए गए उस आक्षेपित निर्णय और आदेश को

चुनौती देते हुए फाइल की गई हैं, जिसके द्वारा 2003 के आपराधिक मामला सं. 24 और 25 में जांच आयुक्त और विशेष न्यायाधीश, कोझिकोड (जिसे सुविधा के लिए 'विचारण न्यायालय' कहा गया है) द्वारा तारीख 27 अप्रैल, 2009 को पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय और आदेश को पूर्वोक्त अपीलों को खारिज करते हुए और परिणामत: अपीलार्थी की दोषसिद्धि की पुष्टि करते हुए कायम रखा गया है ।

2. सुविधा की दृष्टि से, पक्षकारों को विचारण न्यायालय के समक्ष उनके क्रम के अनुसार निर्दिष्ट किया जाएगा ।

3. विचारण न्यायालय ने तारीख 27 अप्रैल, 2009 के अपने निर्णय और आदेश द्वारा पूर्वोक्त दोनों मामलों में इस अपील में अपीलार्थी-अभियुक्त को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (संक्षेप में 'अधिनियम') की धारा 13(1)(ग) के साथ पठित धारा 13(2) के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया और उसे दो वर्ष का कठोर कारावास भुगतने तथा दो हजार रुपए के जुर्माने का संदाय करने और उसका व्यतिक्रम करने पर छह माह का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया । अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 409 के अधीन अपराध के लिए भी दोषसिद्ध किया गया और दो वर्ष का कठोर कारावास भुगतने तथा दो हजार रुपए के जुर्माने का संदाय करने और उसका व्यतिक्रम करने पर छह माह का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया । दंडादेशों को साथ-साथ चलने का निदेश दिया गया ।

4. अपीलार्थी को इस न्यायालय के तारीख 30 जनवरी, 2017 के आदेश द्वारा विचारण न्यायालय द्वारा अधिरोपित शर्तों को पूर्ण करने के अध्यधीन रहते हुए जमानत पर छोड़ा गया था ।

मामले के तथ्य

5. संक्षिप्त और स्पष्ट रूप से उल्लेख करते हुए, 2003 के आपराधिक मामला सं. 24 में अभियोजन का पक्षकथन यह है कि अभियुक्त ने तारीख 31 मई, 1991 से 31 मई, 1994 की अवधि में कृषि अधिकारी, राज्य बीज फार्म, पेराम्ब्रा में कार्यरत रहते हुए उसने एक

लोक सेवक के नाते अपनी पदीय स्थिति का दुरुपयोग किया और आपराधिक न्यास भंग कारित किया तथा तारीख 27 अप्रैल, 1992 से 25 अगस्त, 1992 की अवधि के दौरान 20,035/- रुपए की रकम को उप-कोषागार में विप्रेषित न करके दुर्विनियोजन किया । इस रकम में 17,499/- रुपए राज्य बीज फार्म, पेराम्ब्रा से तारीख 28 मई, 1992 को कटाई और नीलाम किए गए 5,510 नारियलों की नीलामी से प्राप्त आगम का दो-तिहाई; तारीख 28 मई, 1992 को नीलाम किए गए 1049 किलोग्राम अध-भरे अनाज की नीलामी से प्राप्त दो-तिहाई आगम के 2,098/- रुपए ; और 488.80 रुपए क्रमश: तारीख 24 अगस्त, 1992 और 25 अगस्त, 1992 को राज्य बीज फार्म, पेराम्ब्रा से कटाई किए गए 104 नारियलों की कीमत सम्मलित थी ।

6. 2003 के आपराधिक मामला सं. 25 में अभियोजन का पक्षकथन यह है कि जब अभियुक्त तारीख 31 मई, 1991 से 31 मई, 1994 तक राज्य बीज फार्म के कृषि अधिकारी के रूप में कार्यरत था तब उसने एक लोक सेवक के नाते अपनी पदीय स्थिति का दुरुपयोग किया और आपराधिक न्यास भंग कारित किया और तारीख 1 मार्च, 1993 से 12 अप्रैल, 1994 की अवधि के दौरान 58,671/- रुपए की रकम का दुर्विनियोजन किया, जो राज्य बीज फार्म, पेराम्ब्रा से कटाई किए गए 11,109 नारियलों के विक्रय का आगम थी और जिसकी नीलामी तारीख 23 जुलाई, 1993 को की गई थी ; 12,290/- रुपए 6,046 नारियलों की नीलामी से प्राप्त आगम थे ; 11,840/- रुपए राज्य बीज फार्म, पेराम्ब्रा से कटाई किए गए 3,883 नारियलों की नीलामी से प्राप्त आगम थे ; 654/- रुपए तारीख 13 फरवरी, 1992, 7 अप्रैल, 1993, 17 मार्च, 1994 और 12 अप्रैल, 1994 को कटाई किए गए 160 नारियलों की कीमत थी, को हिसाब में नहीं लिया और तद्द्वारा अधिनियम की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 13(1)(ग) और भारतीय दंड संहिता की धारा 409 के अधीन पूर्वोक्त अपराध कारित किए ।

7. अभियोजन का यह पक्षकथन है कि अभियुक्त के विरुद्ध इन दो मामलों के रजिस्ट्रीकरण से पूर्व उसके विरुद्ध तीन अन्य मामले – 1999

का अपराध मामला सं. 12, 1999 का अपराध मामला सं. 13 और 1999 का अपराध मामला सं. 14 रजिस्ट्रीकृत किए गए थे । मई, 1994 में राज्य बीच फार्म, पेराम्ब्रा में एक औचक निरीक्षण किया गया था और निरीक्षण दल ने पाया कि रोकड़ बही को उचित रूप से बनाए नहीं रखा गया था और कृषि अधिकारी ने खजाने से रकम प्राप्त की थी । निरीक्षण रिपोर्ट कृषि निदेशक को प्रस्तुत की गई । उक्त रिपोर्ट के आधार पर सतर्कता विभाग द्वारा जांच की गई और अभियुक्त के विरुद्ध तारीख 5 फरवरी, 1996 को एक आपराधिक मामला रजिस्ट्रीकृत किया गया । अन्वेषण पूर्ण होने पर सतर्कता और भ्रष्टाचार निरोध ब्यूरो ने तीन रिपोर्टें प्रस्तुत कीं और अभियुक्त के विरुद्ध 1999 का आपराधिक मामला सं. 12 (तारीख 28 मार्च, 1994 और 2 अप्रैल, 1994 के बीच की अवधि में कारित किए गए अपराधों के लिए) ; 1999 का आपराधिक मामला सं. 13 (तारीख 15 दिसंबर, 1992 से 31 मार्च, 1993 की अवधि में कारित किए गए अपराधों के लिए) और 1999 का आपराधिक मामला सं. 14 (तारीख 5 मार्च, 1994 से 8 मार्च, 1994 की अवधि में कारित किए गए अपराधों के लिए) अधिनियम की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 13(1)(ग) और भारतीय दंड संहिता की धारा 409 और 477क के अधीन रजिस्ट्रीकृत किए । लेखाधिकारी ने राज्य बीज फार्म में तारीख 31 मई, 1991 से 31 मई, 1991 की अवधि से संबंधित लेखापरीक्षा की और एक रिपोर्ट दी । इस रिपोर्ट के आधार पर अपीलार्थी के विरुद्ध दो मामले रजिस्ट्रीकृत किए गए, जिनमें से यह अपील उद्भूत हुई है । वर्तमान मामलों के संबंध में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट तारीख 3 दिसंबर, 2001 को रजिस्ट्रीकृत की गई थी । अभियोजन का यह पक्षकथन है कि पुन: लेखापरीक्षा करने पर तीन दृष्टांत निकलकर आए और इसलिए अभियुक्त के विरुद्ध दो मामले, 2003 का आपराधिक मामला सं. 24 और 2003 का आपराधिक मामला सं. 25 रजिस्ट्रीकृत किए गए ।

8. अभियुक्त के विरुद्ध उक्त अपराधों के लिए तारीख 30 जून, 2007 को आरोप विरचित किए गए और उन्हें अभियुक्त को पढ़कर सुनाया गया और स्पष्ट किया गया, जिनके लिए अभियुक्त ने 'दोषी न

होने' का अभिवाक् किया और विचारण किए जाने का दावा किया । अभियुक्त ने संयुक्त विचारण के लिए एक आवेदन, जो 2008 का दांडिक प्रकीर्ण आवेदन सं. 1019 था, फाइल किया जिसे मंजूर किया गया और इसलिए दोनों मामलों का एक-साथ विचारण किया गया । अभियोजन पक्ष ने कुल 13 साक्षियों की परीक्षा की । उसके पश्चात् दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में 'दंड प्रक्रिया संहिता') की धारा 313 के अधीन अभियुक्त के कथन अभिलिखित किए गए । अभियुक्त ने अभिकथनों से इनकार किया और निवेदन किया कि वह निर्दोष है और मिथ्या रूप से फंसाया गया है ।

9. विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी का पक्षकथन यह था कि प्रश्नगत अवधि के दौरान उसके पास कुछ अन्य फार्मों का अतिरिक्त प्रभार था और राज्य बीज फार्म, पेराम्ब्रा के कार्यकलाप करने के लिए कार्यालय में अपने अधीनस्थों पर अत्यधिक निर्भर रहना पड़ता था । अपीलार्थी ने दलील दी कि उसने फार्म से किसी रकम का दुर्विनियोजन नहीं किया था और कोई अपराध कारित नहीं किया था, जैसा कि अभियोजन पक्ष द्वारा अभिकथन किया गया है ।

विचारण न्यायालय के निष्कर्ष :

10. विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर के साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् तारीख 27 अप्रैल, 2009 के निर्णय द्वारा अभियुक्त को अधिनियम की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 13(1)(ग) और भारतीय दंड संहिता की धारा 409 के अधीन अपराधों के लिए यह अभिनिर्धारित करते हुए दोषसिद्ध किया कि अभियुक्त ने तारीख 27 अप्रैल, 1992 से 25 अगस्त, 1992 और 1 मार्च, 1993 से 12 अप्रैल, 1994 तक की अवधि के दौरान 78,706/- रुपए की रकम जो नीलामी के आगम का दो-तिहाई थी, को कोषागार में विप्रेषित न करके इसका दुर्विनियोजन किया था । विचारण न्यायालय के प्रमुख निष्कर्षों का सार निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है :

i. हाजिरी रजिस्टर (प्रदर्श पी-22) से यह देखा जा सकता है कि अभियुक्त प्रश्नगत अवधि के दौरान राज्य बीज फार्म, पेराम्ब्रा में कृषि अधिकारी था । अभियुक्त ने भी दंड प्रक्रिया संहिता की

धारा 313 के अधीन अपने कथन में इस बात को स्वीकार किया है ।

ii. दस्तावेजों जैसे कृषि अधिकारी के रूप में अभियुक्त की तैनाती आदेश (प्रदर्श पी-2), अभियुक्त के प्रभार के स्थानांतरण की रिपोर्ट की प्रति (प्रदर्श पी-3) और अभियुक्त की तैनाती के ब्यौरे वाली फाइल (प्रदर्श पी-4) के परिशीलन से यह साबित होता है कि अभियुक्त तारीख 31 मई, 1991 से 31 मई, 1994 तक किसी युक्तियुक्त संदेह के परे राज्य बीज फार्म में कृषि अधिकारी के रूप में कार्यरत था ।

iii. अभियुक्त को आरोप पत्र फाइल करने के समय पर सेवा से हटा दिया गया था, इसलिए अधिनियम की धारा 19 के अधीन मंजूरी की कोई आवश्यकता नहीं थी ।

iv. अभियुक्त ने राज्य बीज फार्म, पेराम्ब्रा के कृषि उत्पादों की नीलामी की थी और नीलामी की तारीख को ही नीलामी रकम का एक-तिहाई प्राप्त किया था । उक्त रक्त की रसीद सफल बोलीदाता को जारी की गई थी । शेष दो-तिहाई रकम प्राप्त करने के पश्चात् वस्तुएं नीलामी क्रेता को परिदत्त की जानी थीं । तारीख 28 मई, 1998 को 5510 नारियलों की कटाई और नीलामी की गई थी । नीलामी रकम का दो-तिहाई 17,449/- रुपए था । अभियुक्त ने नीलामी क्रेता से उक्त रकम को प्राप्त करने के पश्चात् इसे विप्रेषित नहीं किया ।

v. उसी तारीख को नीलाम किए गए 1049 किलो ग्राम अध-भरे अनाज की नीलामी के दो-तिहाई आगम 2,098/- रुपए और तारीख 24 अगस्त, 1992 और 25 अगस्त, 1992 को कटाई किए गए 104 नारियलों की कीमत 488.80/- रुपए भी उप-कोषागार में विप्रेषित नहीं किए गए थे और अभियुक्त ने उक्त रकमों का स्वयं अपने लाभ के लिए दुर्विनियोग किया था । इसी प्रकार, अभियुक्त द्वारा 1 मार्च, 1993 से 12 अप्रैल, 1994 तक राज्य बीज फार्म, पेराम्ब्रा से कटाई किए गए नारियलों की नीलामी के आगम 58,671/- रुपए का दुर्विनियोजन किया गया था ।

vi. प्रस्तुत दो मामलों में लगाए गए आरोप तारीख 27 अप्रैल, 1992 से 25 अगस्त, 1992 और 1 मार्च, 1993 से 12 अप्रैल, 1994 तक की अवधि के थे । पूर्ववर्ती मामलों में, अभियुक्त ने स्वत्वधारी, कृषि विपणन निगम, कोझिकोड ; केरल राज्य कॉयर विपणन निगम, कोझिकोड को राज्य बीज फार्म, पेराम्ब्रा से संदत्त की जाने वाली कुछ रकम का अभिलेखों का मिथ्याकरण और कूटरचना करके दुर्विनियोजन किया था । अभियुक्त ने केरल राज्य सहकारी विपणन परिसंघ, कोझिकोड को संदत्त की जाने वाली कुछ रकमों का भी दुर्विनियोजन किया था । उक्त रकमों को न तो रोकड़ बही में हिसाब में लिया गया था और न ही वह हिताधिकारियों को संवितरित की गई थी । तथापि, प्रस्तुत मामले में नारियलों और अध-भरे अनाज की नीलामी करने के पश्चात् सफल बोलीदाताओं से प्राप्त किए गए दो-तिहाई नीलामी आगम कोषागार में विप्रेषित नहीं किए गए थे । इसलिए पूर्ववर्ती तीन मामलों में और वर्तमान दो मामलों में दुर्विनियोजन की अवधि और अभियुक्त द्वारा किए गए अपराधों की प्रकृति पूर्णतया भिन्न है । इस प्रकार, अभियुक्त को अधिनियम की धारा 13(1)(ग) के साथ पठित धारा 13(2) के अधीन दोषसिद्ध किया जाता है ।

vii. अभियुक्त राज्य बीज फार्म, पेराम्ब्रा का कृषि अधिकारी होने के नाते नकदी, नकदी की तिजोरी, रोकड़ बही और अन्य दस्तावेजों का अभिरक्षक था और अपने कार्यकाल के दौरान और लोक सेवक की हैसियत में उसने पूर्वोक्त रकम का स्वयं अपने लाभ के लिए दुर्विनियोजन किया था । इसलिए यह अभिनिर्धारित किया गया था कि अभियुक्त ने संपत्ति का न्यास भंग किया है और इस प्रकार भारतीय दंड संहिता की धारा 409 के अधीन दोषसिद्ध किया गया ।

11. विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय से व्यथित होकर अपीलार्थी-अभियुक्त ने विचारण न्यायालय के निर्णय को चुनौती देते हुए उच्च न्यायालय के समक्ष 2009 की दांडिक अपील सं. 947 और 948 फाइल की । उक्त अपीलों को तारीख 13

जून, 2016 के सामान्य आक्षेपित निर्णय द्वारा खारिज कर दिया गया और दोषसिद्धि को कायम रखा गया । तथापि, उच्च न्यायालय ने दो वर्ष के कठोर कारावास के दंडादेश को कम करके एक वर्ष का कठोर कारावास कर दिया । उच्च न्यायालय के महत्वपूर्ण निष्कर्षों का निम्नलिखित प्रकार से उल्लेख किया जा सकता है :–

i. स्वीकृत रूप से, इन दो मामलों में बताए गए दृष्टांत अपीलार्थी के विरुद्ध रजिस्ट्रीकृत पूर्ववर्ती तीन मामलों में सम्मिलित नहीं थे । तारीख 13 दिसंबर, 1997 से 27 दिसंबर, 1997 की अवधि के लिए लेखापरीक्षा के दौरान ही इन दृष्टांतों का पता चला था और वर्तमान मामले रजिस्ट्रीकृत किए गए थे ।

ii. यह स्वीकृत तथ्य है कि अभिलेखों से यह दर्शित नहीं होता है कि वर्तमान दो मामलों में अंतर्वलित रकम उप-कोषागार में विप्रेषित की गई थी ।

iii. अभि. सा. 11 के साक्ष्य से सिद्ध होता है कि उसने तारीख 4 जून, 1994 को कार्यभार ग्रहण किया था । कृषि भवन, कायन्ना में कृषि अधिकारी के रूप में कार्य करते हुए उसे कृषि अधिकारी, बीज फार्म, पेराम्ब्रा के रूप में अतिरिक्त कार्यभार ग्रहण करना था । उसके कथन के अनुसार, उस समय जब उसने संयुक्त कृषि निदेशक और उप कृषि निदेशक की मौजूदगी में कार्यभार ग्रहण किया था, तब उसने बीज फार्म, पेराम्ब्रा के कार्यालय के दस्तावेजों या संपत्तियों को कब्जे में नहीं लिया था चूंकि कार्यालय में ऐसे दस्तावेज उपलब्ध नहीं थे ।

iv. अभि. सा. 4 के अनुसार, जिसने तारीख 7 जून, 1994 से 24 अप्रैल, 1997 की अवधि तक राज्य बीज फार्म, पेराम्ब्रा में कृषि अधिकारी के रूप में प्रभार ग्रहण किया था, उसे तारीख 10 फरवरी, 1992 से 11 मार्च, 1993 की अवधि की कोई रोकड़ बही प्राप्त नहीं हुई थी । इस अपील में अपीलार्थी ने तारीख 12 मार्च, 1994 से 3 जून, 1994 तक की अवधि की रोकड़ बही और 2,763/- रुपए अतिशेष रोकड़ अभि. सा. 4 द्वारा कार्यभार ग्रहण करने के पश्चात् सौंपा था । अभि. सा. 4 के साक्ष्य से यह स्पष्ट है कि उसने

कार्यभार लेने के समय पर रोकड़ बही प्राप्त नहीं की थी और उसके द्वारा कार्यभार ग्रहण करने के पश्चात् ही अपीलार्थी ने उसे रोकड़ बही और अतिशेष रोकड़ सौंपा था । जब इस तथ्य के विषय में कोई चुनौती नहीं दी गई है कि अपीलार्थी ने तारीख 12 मार्च, 1994 से 3 जून, 1994 तक की अवधि के लिए ही रोकड़ बही सौंपी थी, यह स्पष्ट है कि उसने पूर्ववर्ती रोकड़ बही को कभी नहीं सौंपा था । किसी और सबूत की आवश्यकता नहीं है ।

v. एक उत्तरदायी राजपत्रित अधिकारी होने के नाते अपीलार्थी को अधिक सतर्क रहना चाहिए था और इसलिए यह कहकर अपनी जिम्मेदारी से नहीं बच सकता कि वह अपने अधीनस्थ कर्मचारिवृंद पर निर्भर था चूंकि उसके पास अन्य फार्मों का भी अतिरिक्त प्रभार था । उसे रोकड़ बही रखनी चाहिए थी और उसे उचित रूप से बनाए रखना चाहिए था और समय पर प्रविष्टियां करनी चाहिए थीं । अपीलार्थी ने स्पष्ट रूप से रोकड़ बही को हटा दिया था और तारीख 10 फरवरी, 1992 से 11 मार्च, 1994 तक की अवधि के लिए इसे वापस नहीं किया था ।

12. निचले न्यायालयों द्वारा पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय से व्यथित होकर अपीलार्थी ने वर्तमान अपीलें फाइल करके इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है ।

13. हमने अपीलार्थी-अभियुक्त की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री एडोल्फ मैथ्यू और प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री सी. के. सासी को सुना और अभिलेख पर सामग्री का परिशीलन किया ।

पक्षकारों की दलीलें

14. इस अपील में अपीलार्थी-अभियुक्त की ओर से विद्वान् काउंसेल ने आरंभ में यह दलील दी कि उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय की पुष्टि करके ठीक नहीं किया था और आक्षेपित निर्णय विधिक तथा तथ्यात्मक खामियों से ग्रसित हैं और इसमें निकाले गए निष्कर्ष अनुचित हैं तथा अपास्त किए जाने योग्य हैं और अपीलार्थी दोषमुक्त किए जाने योग्य हैं ।

अभियुक्त की ओर से विद्वान् काउंसेल की दलीलों का सारांश निम्नलिखित है :–

14.1 अभियुक्त एक लोक सेवक है दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 (1) में अभियुक्त जैसे लोक सेवकों के विरुद्ध संज्ञान लेने से पूर्व राज्य सरकार की मंजूरी अपेक्षित है ।

14.2 वर्तमान मामलों में संपूर्ण अभियोजन कार्यवाहियां दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 300 (1) द्वारा वर्जित हैं जिसमें दोहरे संकट के सिद्धांत को सम्मिलित किया गया है । अपीलार्थी को वर्ष 1992 में पहले ही उसे सौंपी गई लोक निधियों का दुर्विनियोजन करने के आरोपों के लिए अभियोजित किया गया था जब उसके विरुद्ध 1999 का अपराध मामला सं. 12 से 14 फाइल किया गया था । सभी पांचों मामलों में मुख्य अभिकथन एक-जैसा अर्थात् रोकड़ बही में मिथ्या प्रविष्टियां करना और धन का दुर्विनियोजन करना है ।

14.3 पहले तीन मामलों में आरोप तारीख 17 अगस्त, 1999 को विरचित किए गए थे जो कि लेखापरीक्षा से बहुत बाद की बात है और उक्त दिन अभियोजन पक्ष वर्तमान मामलों के संबंध में अभिकथित दुर्नियोजन की बात से भली-भांति भिज्ञ था । इसलिए प्रस्तुत मामलों में अभिकथन/अपराध पूर्वतन विचारण में विरचित किए जाने चाहिए थे और वर्तमान अभिकथनों के लिए अभियुक्त का विचारण उक्त मामलों में ही किया जा सकता था ।

14.4 विचारण न्यायालय ने तारीख 27 फरवरी, 2000 के निर्णय और आदेश द्वारा अपीलार्थी को 1999 के अपराध मामला सं. 13 में उसके विरुद्ध लगाए गए सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया था अर्थात् तारीख 15 दिसंबर, 1992 से 31 मार्च, 1993 की अवधि के दौरान उसके विरुद्ध लगाए गए सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया था । तथापि, अपीलार्थी को 1999 के अपराध मामला सं. 12 और 14 में लगाए गए आरोपों के लिए दोषसिद्ध किया गया था । इस अपील में अपीलार्थी को तारीख 2 मई, 2001 को सेवा

से पदच्युत कर दिया गया था । वर्तमान मामलों में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अपीलार्थी को सेवा से पदच्युत करने के पश्चात् और विचारण न्यायालय का निर्णय पारित होने के पश्चात् तारीख 3 दिसंबर, 2001 को फाइल की गई थी । वर्तमान दो मामलों में अभिकथनों/अपराधों को पूर्वतन विचारण में विरचित किया जा सकता था और अपीलार्थी का उनके लिए विचारण पूर्ववर्ती तीन मामलों के विचारण के साथ किया जा सकता था ।

14.5 यदि अभियुक्त का वर्तमान अपराधों के लिए पुन: विचारण किया जाना था, तो राज्य सरकार की पहले से मंजूरी लेना आवश्यक है, जैसा कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 300 की उपधारा (2) के अधीन आज्ञापक है ।

14.6 वर्तमान मामले में विरचित आरोप दुर्विनियोजन और लेखाओं के मिथ्याकरण के कई कृत्यों से संबंधित हैं । ये कृत्य अभिकथित रूप से एक ही संव्यवहार/कृत्यों की उसी श्रृंखला के अनुक्रम में कारित किए गए थे । कृत्यों की श्रृंखला को एक ही संव्यवहार समझे जाने के लिए वे अवश्य जुड़े होने चाहिएं । यह कि अभियुक्त के विरुद्ध अभिकथित दुर्विनियोजन के विभिन्न कृत्य समय और स्थान की निकटता तथा प्रयोजन और उद्देश्य के साथ परस्पर-संबद्ध, जुड़े हैं ।

14.7 प्रश्नगत अवधि के दौरान अपीलार्थी ने कुछ फार्मों का अतिरिक्त प्रभार संभाला था और इसलिए कार्यालय में अपने अधीनस्थों पर अत्यधिक निर्भर रहना पड़ा था ।

14.8 अपीलार्थी की भारतीय दंड संहिता की धारा 409 के अधीन दोषसिद्धि का कोई विधिक आधार नहीं है चूंकि अभियोजन पक्ष उक्त अपराध के सबसे महत्वपूर्ण संघटक अर्थात् माल का सौंपा जाना या संपत्ति का स्वामित्व को साबित नहीं कर सका था ।

14.9 अधिनियम की धारा 13(1)(ग) के अधीन दोषसिद्धि को सिद्ध नहीं किया गया है चूंकि अभियोजन पक्ष यह साबित करने में असफल रहा था कि संपत्ति उसे सौंपी गई थी या उसके नियंत्रणाधीन थी

और यह कि इसे उसके द्वारा कपटपूर्वक या बेइमानी से दुर्विनियोजित किया गया था ।

15. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए आक्षेपित निर्णय और विचारण न्यायालय के निर्णय का समर्थन किया और दलील दी कि निचले न्यायालयों ने अभिलेख पर के साक्ष्य को ठीक प्रकार से समझा था और निर्धारण किया था । निम्नलिखित दलीलें भी दी गईं :–

15.1 अभियुक्त ने तारीख 31 मई, 1991 से 31 मई, 1994 तक राज्य बीज फार्म, पेराम्ब्रा में कृषि अधिकारी के रूप में कार्य करते हुए लोक सेवक की हैसियत में तारीख 27 अप्रैल, 1992 से 25 अगस्त, 1992 की अवधि के दौरान 20,035/- रुपए की रकम का और तारीख 1 मार्च, 1994 से 12 अप्रैल, 1994 की अवधि के दौरान 58,671/- रुपए की रकम का दुर्विनियोजन किया था ।

15.2 अपीलार्थी ने नारियलों और अध-भरे अनाज की नीलामी की थी और अभि. सा. 5 और अभि. सा. 6 से नीलामी की तारीख को ही नीलामी रकम का एक-तिहाई प्राप्त किया था । पुष्टि के पश्चात् नीलामी रकम का दो-तिहाई भी प्राप्त किया था और रसीदें जारी की गई थीं किंतु उक्त दो-तिहाई रकम उप-कोषागार में विप्रेषित नहीं की गई थीं ।

15.3 कृषि अधिकारी चालान रसीदों, नकदी, रोकड़ बहियों इत्यादि का अभिरक्षक है और उक्त अवधि के दौरान जब निधियों का दुर्विनियोजन किया गया था तब अपीलार्थी राज्य बीज फार्म, पेराम्ब्रा में कृषि अधिकारी था । प्रदर्श पी-22 के रूप में चिह्नित हाजिरी रजिस्टर की सत्यापित प्रति से यह बात साबित होती है ।

16. संबंधित पक्षकारों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेलों को सुनने के पश्चात् हमारे विचार के लिए निम्नलिखित बिंदु उद्भूत होते हैं :–

(क) क्या उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय की पुष्टि करके न्यायोचित किया था ?

(ख) क्या उच्च न्यायालय के निर्णय में इस न्यायालय द्वारा किसी हस्तक्षेप या उपांतरण की आवश्यकता है ?

(ग) क्या आदेश किया जाना चाहिए ?

चर्चा

17. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि इन दो मामलों में अभियोजन के लिए वर्जन है अर्थात् चूंकि अपीलार्थी को पहले ही उन्हीं अपराधों के लिए उसी प्रकार के तथ्यों पर अभियोजित तथा दंडित किया जा चुका है । वर्तमान दोनों मामलों में अपीलार्थी को अभियोजित करना दोहरे संकट की कोटि में आता है । भारत में दोहरे संकट के विरुद्ध संरक्षण भारत के संविधान के अनुच्छेद 20(2) के अधीन प्रतिष्ठापित एक मूल अधिकार है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 300 भी उक्त सिद्धांत पर आधारित है ।

18. आगे अग्रसर होने से पूर्व दोहरे संकट की अवधारणा को समझना आवश्यक है । ब्लैक लॉ डिक्शनरी, 9वां संस्करण के अनुसार 'दोहरा संकट' को "सारभूत रूप से एक ही अपराध के लिए दो बार अभियोजित या दंडादिष्ट किए जाने" के रूप में परिभाषित किया गया है ।

19. 'संकट' (जियोपार्डी) शब्द उस दोषसिद्धि और दंड के खतरे को अभिहित करने के लिए प्रयुक्त किया जाता है जो किसी अभियुक्त को किसी दांडिक कार्रवाई में उपगत होता है । 'संकट' का तात्पर्य उस अपराध के लिए, जिसके लिए किसी व्यक्ति को पहले ही दोषमुक्त या दोषसिद्ध किया जा चुका है, एक विधिपूर्ण दोषसिद्धि की जोखिम में डालना है । विभिन्न संविधानों और कानूनों में प्रयुक्त 'दोहरा संकट' 'भूतपूर्व संकट', 'जीवन और अंग के लिए संकट', 'उसी अपराध के लिए संकट', 'दोबारा दंड के संकट में डालना' और अन्य इसी प्रकार की अभिव्यक्तियों का सारभूत रूप से इसी आशय का अर्थान्वयन किया जाता है । दूसरे शब्दों में, दोहरे संकट का प्रयोग अभियुक्त को प्राप्त उस संरक्षण को निर्दिष्ट करने के लिए किया जाता है जो उसे उसी अपराध के लिए एक ऋजु विचारण करने लिए प्राप्त है, जिसमें ऋजु

विचारण से अभिप्रेत है विधि और स्थापित विधिक प्रक्रिया के अनुसार विचारण ।

20. भारत के संविधान का भाग 3 मूल अधिकारों के संबंध में है । अनुच्छेद 20 से 22 नागरिकों की दैहिक स्वतंत्रता और अन्य के संबंध में है । अनुच्छेद 20(2) में अभिव्यक्त रूप से उपबंधित है कि किसी व्यक्ति को एक ही अपराध के लिए एक बार से अधिक अभियोजित और दंडित नहीं किया जाएगा । दोहरे संकट के विरुद्ध संरक्षण को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 300, भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 40, भारतीय दंड संहिता की धारा 71 और साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 26 में अंतर्विष्ट कानूनी उपबंधों द्वारा भी संपूरित किया गया है । भारतीय संविधान का अनुच्छेद 20(2) निम्नलिखित है :–

"**20. अपराधों के लिए दोषसिद्धि के संबंध में संरक्षण** –

(1) * * *

(2) किसी व्यक्ति को एक ही अपराध के लिए एक बार से अधिक अभियोजित और दंडित नहीं किया जाएगा ।

(3) * * *"

21. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 300 के महत्व पर भी चर्चा करना उपयोगी होगा । उक्त उपबंध को तुरंत संदर्भ के लिए इसमें नीचे उद्धृत किया गया है :–

"**300. एक बार दोषसिद्ध या दोषमुक्त किए गए व्यक्ति का उसी अपराध के लिए विचारण न किया जाना** – (1) जिस व्यक्ति का किसी अपराध के लिए सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय द्वारा एक बार विचारण किया जा चुका है और जो ऐसे अपराध के लिए दोषसिद्ध या दोषमुक्त किया जा चुका है, वह, जब तक ऐसी दोषसिद्धि या दोषमुक्ति प्रवृत्त रहती है तब तक न तो उसी अपराध के लिए विचारण का भागी होगा और न उन्हीं तथ्यों पर किसी ऐसे अन्य अपराध के लिए विचारण का भागी होगा जिसके लिए उसके विरुद्ध लगाए गए आरोप से भिन्न आरोप धारा 221 की उपधारा

(1) के अधीन लगाया जा सकता था या जिसके लिए वह उसकी उपधारा (2) के अधीन दोषसिद्ध किया जा सकता था ।

(2) किसी अपराध के लिए दोषमुक्त या दोषसिद्ध किए गए किसी व्यक्ति का विचारण, तत्पश्चात् राज्य सरकार की सम्मति से किसी ऐसे भिन्न अपराध के लिए किया जा सकता है जिसके लिए पूर्वगामी विचारण में उसके विरुद्ध धारा 220 की उपधारा (1) के अधीन पृथक् आरोप लगाया जा सकता था ।

(3) जो व्यक्ति किसी ऐसे कार्य से बनने वाले किसी अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है, जो ऐसे परिणाम पैदा करता है जो उस कार्य से मिलकर उस अपराध से, जिसके लिए वह दोषसिद्ध हुआ, भिन्न कोई अपराध बनाते हैं, उसका ऐसे अंतिम वर्णित अपराध के लिए तत्पश्चात् विचारण किया जा सकता है, यदि उस समय जब वह दोषसिद्ध किया गया था वे परिणाम हुए नहीं थे या उनका होना न्यायालय को ज्ञात नहीं था ।

(4) जो व्यक्ति किन्हीं कार्यों से बनने वाले किसी अपराध के लिए दोषमुक्त या दोषसिद्ध किया गया है, उस पर ऐसी दोषमुक्ति या दोषसिद्धि के होने पर भी, उन्हीं कार्यों से बनने वाले और उसके द्वारा किए गए किसी अन्य अपराध के लिए तत्पश्चात् आरोप लगाया जा सकता है और उसका विचारण किया जा सकता है, यदि वह न्यायालय, जिसके द्वारा पहले उसका विचारण किया गया था, उस अपराध के विचारण के लिए सक्षम नहीं था जिसके लिए बाद में उस पर आरोप लगाया जाता है ।

(5) धारा 258 के अधीन उन्मोचित किए गए व्यक्ति का उसी अपराध के लिए पुन: विचारण उस न्यायालय की, जिसके द्वारा वह उन्मोचित किया गया था, अन्य किसी ऐसे न्यायालय की, जिसके प्रथम वर्णित न्यायालय अधीनस्थ है, सम्मति के बिना नहीं किया जाएगा ।

(6) इस धारा की कोई बात साधारण खंड अधिनियम, 1897 (1897 का 10) की धारा 26 के या इस संहिता की धारा 188 के

उपबंधों पर प्रभाव न डालेगी ।

स्पष्टीकरण – परिवाद का खारिज किया जाना या अभियुक्त का उन्मोचन इस धारा के प्रयोजन के लिए दोषमुक्ति नहीं है ।"

22. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 300 में यह साधारण नियम सन्निविष्ट है जो आट्रिफायस एक्विट (पूर्व दोषमुक्ति) और आट्रिफायस कंविक्ट (पूर्व दोषसिद्धि) के अभिवाकों की विधिमान्यता की अभिपुष्टि करता है । धारा 300 की उपधारा (1) में दोहरे संकट का नियम अधिकथित है और उपधारा (2) से (5) इसके अपवादों के संबंध में है । तद्नुसार, जब तक सक्षम अधिकारिता के किसी न्यायालय का दोषमुक्ति या दोषसिद्धि का आदेश प्रवृत्त रहता है, तब तक उस व्यक्ति का उसी अपराध के लिए जिसके लिए उसका पूर्व में विचारण किया गया था या उसी तथ्यात्मक स्थिति से उद्भूत किसी अन्य अपराध के लिए, इस धारा की उपधारा (2) से (5) के अधीन उपबंधित दशाओं को छोड़कर, विचारण नहीं किया जा सकता ।

23. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 300 नेमो डेबर बिस वेक्सेरी, सि कोंस्टेट क्यूरिया क्यूओड सिट प्रो उना इट एडम कासा सूत्र पर आधारित है जिससे यह अभिप्रेत है कि किसी व्यक्ति का उस अपराध के लिए दूसरी बार विचारण नहीं किया जा सकता जो उस अपराध में अंतर्वलित है जिसके लिए उसे पहले आरोपित किया गया था । **विजयलक्ष्मी** बनाम **वासुदेवन**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय के अनुसार पहले ही विचारण किए गए किसी व्यक्ति के विचारण को वर्जित करने के लिए अवश्य यह दर्शित किया जाना चाहिए कि :–

(i) उसका किसी सक्षम न्यायालय द्वारा उसी अपराध के लिए विचारण किया जा चुका है या उस अपराध के लिए जिसके लिए उसे उन्हीं तथ्यों पर विचारण में आरोपित या दोषसिद्ध किया जा सकता था,

(ii) उसे विचारण में दोषसिद्ध या दोषमुक्त किया जा चुका है, और

---

[1] (1994) 4 एस. सी. सी. 656.

(iii) ऐसी दोषसिद्धि या दोषमुक्ति प्रवृत्त है ।

24. इस उपबंध के लिए संपूर्ण आधार यह है कि प्रथम विचारण सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय के समक्ष किया गया होना चाहिए । अभियुक्त का अवश्य विचारण किया गया हो अर्थात् मामले की सुनवाई और गुणागुण के आधार पर अवधारण या न्यायनिर्णयन किया गया होना चाहिए । जहां अभियुक्त का विचारण नहीं किया गया हो और दोषसिद्धि या दोषमुक्ति न हो, वहां धारा 300(1) लागू नहीं होगी ।

25. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 300 में किसी व्यक्ति के विचारण को न केवल उसी अपराध के लिए अपितु उन्हीं तथ्यों के आधार पर किसी अन्य अपराध के लिए विचारण को भी वर्जित किया गया है, **ठाकुर राम** बनाम **बिहार राज्य**[1] वाला मामला देखें ।

संविधान का अनुच्छेद 20

26. अनुच्छेद 20 के खंड (2) के अधीन, किसी व्यक्ति को एक ही अपराध के लिए एक बार से अधिक अभियोजित और दंडित नहीं किया जाएगा । भारत के संविधान का अनुच्छेद 20(2) अपनी परिधि में पूर्व दोषसिद्धि के अभिवाक् अर्थात् पहले की गई दोषसिद्धि, जैसा कि ब्रिटिश विधिशास्त्र में जाना जाता है, या दोहरे संकट के अभिवाक्, जैसा कि अमेरिका के संविधान में जाना जाता है, को सम्मिलित करता है । तथापि, उक्त अवधारणाओं को अनुच्छेद 20(2) में परिसीमित किया गया है जिसमें यह उपबंधित है कि इसे उसी अपराध के लिए किसी दूसरे अभियोजन और दंड के लिए वर्जन के रूप में लागू करने के लिए प्रथम बार में न केवल अभियोजन किया गया हो अपितु दंड भी दिया गया हो । अनुच्छेद 20 के उप खंड (2) के पठन मात्र से यह स्पष्ट है कि उक्त उपबंध किसी दूसरे अभियोजन को केवल वहां वर्जित करता है जहां अभियुक्त को पूर्व में उसी अपराध के लिए **अभियोजित** और **दंडित** दोनों किया गया हो । **एस. ए. वेंकटरमन** बनाम **भारत संघ**[2] वाला मामला देखें । किंतु यह खंड पश्चात्वर्ती विचारण को तब वर्जित नहीं करता है

---

[1] ए. आई. आर. 1966 एस. सी. 911.

[2] ए. आई. आर. 1954 एस. सी. 375.

यदि पूर्ववर्ती और पश्चात्वर्ती विचारणों में के अपराधों के संघटक भिन्न हैं । **मकबूल हुसैन** बनाम **बंबई राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि खंड (2) तब तक लागू नहीं होता है जब तक व्यक्ति को अभियोजित और दंडित दोनों न किया गया हो ।

27. इस खंड को लागू करने के लिए तीन शर्तें हैं । पहली, पूर्ववर्ती कार्यवाही किसी सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय या न्यायिक अधिकरण के समक्ष होनी चाहिए जिसमें व्यक्ति को अवश्य अभियोजित किया गया हो । उक्त अभियोजन अवश्य विधिमान्य होना चाहिए न कि शून्य और अकृत या विफल । दूसरी, उसी अपराध के संबंध में और उन्हीं तथ्यों के आधार पर, जिसके लिए उसे पहली कार्यवाही में अभियोजित और दंडित किया गया था, दूसरी कार्यवाही के समय पर पूर्ववर्ती कार्यवाही में दोषसिद्धि या दोषमुक्ति अवश्य प्रवृत्त होनी चाहिए । तीसरी, पश्चात्वर्ती कार्यवाही अवश्य एक नई कार्यवाही होनी चाहिए जहां उसका दूसरी बार उसी अपराध के लिए और उन्हीं तथ्यों के आधार पर अभियोजित और दंडित किए जाने की ईप्सा की गई है । दूसरे शब्दों में, इस खंड का तब कोई उपयोजन नहीं है जब पश्चात्वर्ती कार्यवाही पूर्ववर्ती कार्यवाही की मात्र एक निरंतरता है, उदाहरण के लिए, जहां कोई अपील ऐसी दोषमुक्ति या दोषसिद्धि से उद्भूत होती है । दोहरे संकट के अभिवाक् को कायम रखने के लिए अवश्य यह दर्शित किया जाना चाहिए कि इस खंड की सभी पूर्वोक्त शर्तों का समाधान किया गया है । **एस. ए. वेंकटरमन** (उपर्युक्त) वाला मामला देखें ।

28. यहां यह उल्लेखनीय है कि इन दोनों उपबंधों अर्थात् दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 300 और भारत के संविधान के अनुच्छेद 20 में 'उसी अपराध' शब्द का प्रयोग किया गया है । प्रस्तुत विवाद्यक पर विचार करने से पूर्व यह समझना आवश्यक है कि 'उसी अपराध' शब्द से क्या अभिप्रेत है और इसमें क्या सम्मिलित है । साधारण भाषा में 'उसी अपराध' शब्द से अभिप्रेत है, जहां अपराध भिन्न नहीं हैं और अपराधों के संघटक समान हैं । जहां भिन्न संघटकों से बने दो भिन्न अपराध हैं,

---

[1] ए. आई. आर. 1953 एस. सी. 355.

वहां भारत के संविधान के अनुच्छेद 20 के अधीन रोक का कोई उपयोजन नहीं है, यद्यपि अपराध कुछ अतिव्यापी विशेषता के हो सकते हैं । अनुच्छेद 20 की महत्वपूर्ण अपेक्षा यह है कि अपराध सभी प्रकार से वही और समान हैं । **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली)** बनाम **नवजोत संधु**[1] वाला मामला देखें ।

29. दोहरे संकट की अवधारणा को भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के निबंधनों के अनुसार भी समझा जा सकता है जिसमें यह कहा गया है कि किसी व्यक्ति को उसके प्राण या दैहिक स्वतंत्रता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जाएगा अन्यथा नहीं । संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन 'प्राण' मात्र सांस लेने की शारीरिक क्रिया नहीं है । यह मात्र पशु जीवन या जीवनभर चलने वाली नीरसता का द्योतक नहीं है । इसका अधिक व्यापक निहितार्थ है ; इसमें मानवीय गरिमा के साथ जीने का अधिकार सम्मिलित है । **मेनका गांधी** बनाम **भारत संघ**[2] वाले मामले में के प्रतिष्ठित निर्णय में इस न्यायालय ने अनुच्छेद 21 को एक नया आयाम दिया था, जिसमें उसने यह कहा था कि जीने के अधिकार में गरिमा के साथ जीने का अधिकार इसकी व्याप्ति में सम्मिलित है । अनुच्छेद 21 की व्यापप्ति में, मुफ्त विधिक सहायता का अधिकार, त्वरित विचारण का अधिकार, ऋजु विचारण का अधिकार इत्यादि जैसे विभिन्न अधिकारों को सम्मिलित किया गया है । इसी प्रकार, दोहरे संकट के विरुद्ध संरक्षण भी भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 की व्याप्ति में सम्मिलित है । किसी व्यक्ति को उन्हीं तथ्यों पर उसी अपराध के लिए अभियोजित करना, जिसके लिए उसे पूर्व में या तो दोषमुक्त या दोषसिद्ध किया जा चुका है और दंड भुगत लिया है, व्यक्ति के गरिमा के साथ जीने के अधिकार को प्रभावित करता है ।

30. दोहरे संकट को प्राय: दोहरा दंड समझा जाता है । दोनों के बीच बड़ा फर्क है । दोहरा दंड तब उद्भूत हो सकता है जब कोई व्यक्ति एक अभ्यारोपण में आरोपित दो या अधिक अपराधों के लिए दोषसिद्ध

---

[1] (2005) 11 एस. सी. सी. 600.

[2] [1979] 1 उम. नि. प. 243 = 1978 ए. आई. आर. 597.

किया जाता है, तथापि, दोहरे संकट का प्रश्न केवल तब उद्भूत होता है जब पूर्ववर्ती अभ्यारोपण के आधार पर दोषसिद्धि या दोषमुक्ति के पश्चात् किसी पश्चात्वर्ती अभ्यारोपण के आधार पर किसी दूसरे विचारण की ईप्सा की जाती है । यह सिद्धांत निश्चित रूप से दूसरे दंडादेश या दंड के जोखिम से व्यक्ति के लिए संरक्षण नहीं है, न ही एक अपराध के लिए कोई दंडादेश भुगतने लिए संरक्षण है अपितु उसी अपराध के लिए दोहरे संकट के विरुद्ध अर्थात् उसी अपराध के लिए दूसरे विचारण के विरुद्ध एक संरक्षण है ।

31. अपीलार्थी ने इस न्यायालय के समक्ष जोरदार रूप से यह दलील दी है कि वह तारीख 31 मई, 1994 की अवधि के दौरान राज्य बीज फार्म, पेराम्ब्रा में कृषि अधिकारी के रूप में नियोजित था । उसने तारीख 20 अक्तूबर, 1993 से 27 अक्तूबर, 1994 तक की अवधि के लिए कृषि भवन, पेराम्ब्रा में कृषि अधिकारी का अतिरिक्त प्रभार भी संभाला था । अपीलार्थी को कार्यालय संबंधी विभिन्न कार्यों को पूरा करने के लिए अपने अधीनस्थों पर निर्भर रहना पड़ता था । स्टॉक रजिस्टरों सहित फाइलें इत्यादि अधीनस्थ कर्मचारिवृंद द्वारा संभाली जाती थीं । कृषि अधिकारी की अनुपस्थिति में नकदी कृषि सहायक द्वारा प्राप्त की जाती थी । इस अपील में अपीलार्थी ने अभि. सा. 5 जो नारियल के कारबार में लगा उल्लीयेरी का निवासी था, अभि. सा. 11 जो थायन्ना में कृषि अधिकारी था, अभि. सा. 12 जो लेखाधिकारी था, प्रधान कृषि अधिकारी, कोझिकोड और अभि. सा. 13 जो पुलिस उप अधीक्षक, सतर्कता और भ्रष्टाचार निरोध ब्यूरो, उत्तरी अंचल, कोझिकोड था, के परिसाक्ष्यों को निर्दिष्ट किया ।

32. इस अपील में अपीलार्थी द्वारा अवलंब लिए गए इन साक्षियों के परिसाक्ष्यों को निर्दिष्ट करना सुसंगत होगा । अभि. सा. 5 उल्लीयेरी का निवासी था और 10 वर्षों से नारियल के कारबार में लगा था । उसने यह कथन किया था कि उसने वर्ष 1992-1993 के दौरान पेराम्ब्रा बीज फार्म से कई बार नारियल खरीदे थे । उसने यह कथन किया कि अपीलार्थी, जो तब कृषि अधिकारी था, ने उसे तारीख 28 मई, 1992 को 8,724/- रुपए की रकम की रसीद की कार्बन प्रति सौंपी थी । एक-तिहाई

रकम नीलामी की तारीख को जमा कर दी गई थी और शेष दो-तिहाई रकम का संदाय बाद में किया गया था और उसके द्वारा नारियल ले लिए गए थे । इस साक्षी ने यह कथन किया कि उसे स्मरण नहीं है कि क्या दो-तिहाई रकम के संदाय की रसीद दी गई थी या नहीं । इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया कि उसकी परीक्षा घटना की तारीख से आठ वर्ष पश्चात् की गई थी और उक्त कार्यालय में अन्य कर्मचारिवृंद भी थे । वह इस बारे में सटीक रूप से नहीं कह सकता कि उसने किस को रकम सौंपी थी और यह भी कि उसने रसीदें लेने पर जोर नहीं दिया था तथा यह स्मरण नहीं है कि क्या रसीदें दी गई थीं या नहीं ।

33. अभि. सा. 11 तारीख 21 दिसंबर, 1992 से 2 अप्रैल, 1996 तक थायन्ना में कृषि अधिकारी था । उसके पास राज्य बीज फार्म, पेराम्ब्रा के कृषि अधिकारी के रूप में अतिरिक्त प्रभार था । उसने अपने परिसाक्ष्य में यह कथन किया था कि जब उसने संयुक्त कृषि निदेशक और उप निदेशक की मौजूदगी में प्रभार लिया था, तब उसने उक्त कार्यालय की जंगम और स्थावर संपत्तियों को ग्रहण नहीं किया था । दस्तावेज ग्रहण नहीं किए गए थे क्योंकि कार्यालय में कोई दस्तावेज नहीं थे और उसने नकदी और रोकड़ बही के बारे में नहीं कहा था । इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया कि जब उसने प्रभार ग्रहण किया था, तब कार्यालय के कर्मचारिवृंद ने उक्त कार्यालय के मामलों के बारे में ब्रीफ किया था । इस साक्षी के अनुसार, बीज फार्म में बहुत-सारे नकद संव्यवहार किए गए थे और अधिकारियों की अनुपस्थिति में कर्मचारिवृंद नकदी संबंधी मामलों को संभालते थे । कृषि अधिकारी के पास क्षेत्र संबंधी कार्य भी होता था और कालिक सम्मेलनों के लिए भी बाहर जाना पड़ता था ।

34. अभि. सा. 12 तारीख 24 जनवरी, 1996 से 31 अगस्त, 1998 तक प्रधान कृषि कार्यालय का लेखाधिकारी था । उसने अपने परिसाक्ष्य में यह कथन किया था कि उस अवधि के दौरान उसने तारीख 1 अप्रैल, 1992 से 31 दिसंबर, 1994 तक की अवधि के लिए बीज फार्म की पुन: लेखापरीक्षा की थी । पुन: लेखापरीक्षा इसलिए की गई थी

चूंकि वहां यह अभ्यापत्तियां थीं कि फार्म की आय के ब्यौरे की विस्तार से जांच नहीं की गई थी । तारीख 1 अप्रैल, 1992 से 3 जून, 1994 तक की अवधि के लिए कृषि अधिकारी इस अपील में अपीलार्थी टी. पी. गोपालकृष्णन था ; तारीख 4 जून, 1994 से 6 जून, 1994 तक मिनी था ; और तारीख 7 जून, 1994 से विनोद कुमार था । चूंकि पूर्ववर्ती लेखापरीक्षा में अनियमितताएं थीं इसलिए पुन: लेखापरीक्षा की गई थी । अभि. सा. 12 ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया कि उसने वह विभागीय लेखापरीक्षा नहीं देखी थी जो पहले की गई थी । उसकी लेखापरीक्षा की अवधि के दौरान अभियुक्त निलंबनाधीन था । इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया कि वह रोकड़ बही और कार्यालय में अन्य दस्तावेजों के उपलब्ध न होने के कारणों की जानकारी नहीं है ।

35. अभि. सा. 13 सतर्कता और भ्रष्टाचार निरोध ब्यूरो, कोझिकोड का उप अधीक्षक है, जिसने वर्तमान मामले में तारीख 5 दिसंबर, 2001 को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की थी और दस्तावेज अभिगृहीत किए थे । इस साक्षी ने अन्वेषण किया था और अभियुक्त के विरुद्ध आरोप लगाए थे । वर्तमान मामले में अभियुक्त के विरुद्ध लंबित मामलों को दर्शित करने वाले दस्तावेजों की सत्यापित प्रतियां भी बरामद की गई थीं । अभि. सा. 13 ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया कि उसे पूर्ववर्ती तीन मामलों का पता चला था जिनमें अभियुक्त नामित था और उसे दो मामलों में दोषसिद्ध तथा एक मामले में दोषमुक्त किया गया था और उसने इस बारे में उच्च प्राधिकारियों को सूचित किया था ।

36. पूर्वोल्लिखित साक्षियों के परिसाक्ष्यों का परिशीलन करने पर जो प्रकट होता है वह यह है कि अभियोजन साक्षियों के परिसाक्ष्यों में महत्वपूर्ण फर्क और असंगतियां हैं । अभि. सा. 5 ने अपने परिसाक्ष्य में यह कथन किया था कि उसने इस अपील में अपीलार्थी को रकम दी थी जबकि अपनी प्रतिपरीक्षा में उसने यह कथन किया कि उसे ज्ञात नहीं है कि उसने किस को धनराशि सौंपी थी । अभि. सा. 11 द्वारा अपनी प्रतिपरीक्षा में किए गए कथन के अनुसार, बीज फार्म के कर्मचारिवृंद उसमें के अधिकारियों की अनुपस्थिति में मामलों को संभालते थे । इस

साक्षी के परिसाक्ष्य से इस अपील में अपीलार्थी के पक्षकथन का समर्थन होता है चूंकि अपीलार्थी ने भी इसी प्रकार का अभिवाक् किया था । अभि. सा. 12 ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह कहा था कि उसे उन कारणों की जानकारी नहीं है कि क्यों रोकड़ बही और अन्य दस्तावेज कार्यालय में नहीं थे । अभि. सा. 12 ने कहीं भी यह नहीं कहा था कि वे दस्तावेज इस अपील में अपीलार्थी की अभिरक्षा में थे ।

37. इस अपील में अपीलार्थी का यह भी पक्षकथन है कि पूर्ववर्ती तीन मामले, 1999 का अपराध मामला सं. 12, 13 और 14, क्रमश: तारीख 28 मार्च, 1994 से 2 अप्रैल, 1994, 15 दिसंबर, 1992 से 31 मार्च, 1993 और 5 मार्च, 1994 से 8 मार्च, 1994 तक की अवधि से संबंधित थे । स्वीकृत रूप से, 2003 के आपराधिक मामला सं. 24 में आरोप तारीख 27 अप्रैल, 1992 से 25 अगस्त, 1992 तक की अवधि के दौरान 20,035/- रुपए के दुर्विनियोजन का है ; 2003 के आपराधिक मामला सं. 25 में आरोप तारीख 1 मार्च, 1993 से 12 अप्रैल, 1994 तक की अवधि के दौरान अभिकथित रूप से दुर्विनियोजित की गई 58,671/- रुपए की रकम का है । अपीलार्थी का यह पक्षकथन है कि उसने पूर्ववर्ती तीन मामलों में पहले ही विचारण का सामना किया है और वर्तमान दो मामले उसी अवधि से संबंधित हैं । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 300 उन मामलों में वर्जन लगाती है जिनमें ऐसे किसी व्यक्ति का, जिसका उन्हीं तथ्यों से उद्भूत अपराध के लिए किसी सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय द्वारा पहले ही विचारण किया जा चुका है और या तो ऐसे अपराध के लिए दोषमुक्त या दोषसिद्ध किया जा चुका है, उसी अपराध के लिए तथा उन्हीं तथ्यों पर किसी अन्य अपराध के लिए तब तक पुन: विचारण नहीं किया जा सकता जब तक ऐसी दोषमुक्ति या दोषसिद्धि प्रवृत्त रहती है । इस अपील में अपीलार्थी को पहले अधिनियम की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 13(1)(ग) और भारतीय दंड संहिता की धारा 409 और 477क के अधीन अपराधों के लिए आरोपित किया गया था और दो मामलों में दोषसिद्ध किया गया था तथा एक मामले में दोषमुक्त कर दिया गया था । वर्तमान दो मामले उन्हीं तथ्यों और संव्यवहार से उद्भूत होते हैं जो पूर्ववर्ती तीन मामलों में थे, जिनमें

अपीलार्थी का विचारण किया गया था और क्रमश: दोषसिद्ध/दोषमुक्त किया गया था । जैसी कि पहले ऊपर चर्चा की गई है, किसी अपराध को अंतिम अपराध जैसा 'वही अपराध' के रूप में समझे जाने के लिए यह दर्शित करना आवश्यक है कि अपराध भिन्न नहीं हैं और अपराधों के संघटक समान हैं । पूर्ववर्ती आरोप तथा वर्तमान आरोप दुर्विनियोजन करने की उसी अवधि के लिए है । पूर्ववर्ती सभी तीनों मामलों और वर्तमान मामले में अपराधों का विषय एक-समान है और अपीलार्थी द्वारा कृषि अधिकारी के उसी पद को धारित करते हुए उसी संव्यवहार के अनुक्रम में कारित किए गए कहा जा सकता है ।

38. विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करके गलती की है कि पूर्ववर्ती मामले के तथ्य और अभियुक्त द्वारा कारित दुर्विनियोजन प्रस्तुत मामले के सुसंगत तथ्यों के समान नहीं हैं । विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि वर्तमान मामले में अभिकथन यह है कि नारियलों और अध-भरे अनाज की नीलामी करने के पश्चात् सफल बोलीदाताओं से प्राप्त दो-तिहाई रकम को कोषागार में विप्रेषित नहीं किया गया था, तथापि, पूर्ववर्ती मामलों में अभिकथन यह थे कि अभियुक्त ने राज्य बीज फार्म, पेराम्ब्रा से कृषि विपणन निगम, कोझिकोड, केरल राज्य कॉयर विपणन निगम, कोझिकोड के स्वत्वधारी को संदत्त की जाने वाली कुछ रकम का अभिलेखों की कूटरचना और मिथ्याकरण करके दुर्विनियोजन किया था । अभियोजन का यह स्वीकृत पक्षकथन है कि वर्तमान मामले अभि. सा. 9 - सहायक उप निरीक्षक, सतर्कता और भ्रष्टाचार निरोध ब्यूरो, कोझिकोड द्वारा की गई पुन: लेखापरीक्षा पर आधारित थे । पुन: लेखापरीक्षा तारीख 1 अप्रैल, 1992 से 31 दिसंबर, 1994 तक की अवधि के लिए की गई थी । वर्तमान मामले में आरोप तारीख 27 अप्रैल, 1992 से 25 अगस्त, 1992 और 1 मार्च, 1993 से 12 अप्रैल, 1994 तक की सुसंगत अवधि तक के लिए हैं जो समयावधि वही है जो पूर्ववर्ती तीन मामलों अर्थात् क्रमश: 28 मार्च, 1994 से 22 अप्रैल, 1994, 15 दिसंबर, 1992 से 31 मार्च, 1993 और 5 मार्च, 1994 से 8 मार्च, 1994 तक की थी । इस प्रकार, यह कहा जा सकता है कि वर्तमान मामले उन्हीं तथ्यों से संबंधित हैं

और उन्हीं अपराधों के संबंध में हैं, उसी अवधि के लिए हैं, उसी हैसियत में कारित किए गए थे जो पूर्ववर्ती तीन मामलों में थी जिनमें इस अपील में अपीलार्थी को पहले ही वर्ष 1999 में अभियोजित किया गया था । इन सभी पांचों मामलों में मुख्य अभिकथन रोकड़ बही में मिथ्या प्रविष्टियां करके दुर्विनियोजन करने के संबंध में हैं । अभियोजन पक्ष का यह अभिकथन कि नीलामी रकम का दो-तिहाई कोषागार में विप्रेषित नहीं किया गया था, निधियों का दुर्विनियोजन करने के अंतर्गत आएगा जिसके लिए अपीलार्थी को पहले ही वर्ष 1999 में अभियोजित किया जा चुका है । अपीलार्थी ने ठीक ही यह दलील दी है कि पहले तीन मामलों में आरोप तारीख 17 अगस्त, 1999 को विरचित किए गए थे जो लेखापरीक्षा के बहुत बाद का समय है और अभियोजन पक्ष को वर्तमान मामलों के संबंध में तारीख 17 अगस्त, 1999 को भली-भांति जानकारी रही होगी ।

39. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने इस न्यायालय का ध्यान दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 300 की उपधारा (2) की ओर भी दिलाया जिसमें यह कहा गया है कि किसी अपराध के लिए दोषमुक्त या दोषसिद्ध किए गए किसी व्यक्ति का विचारण तत्पश्चात् राज्य सरकार की सम्मति से किसी ऐसे भिन्न अपराध के लिए किया जा सकता है जिसके लिए पूर्वगामी विचारण में उसके विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 220 की उपधारा (1) के अधीन पृथक् आरोप लगाया जा सकता है । इसमें ऊपर पहले ही यह मत व्यक्त किया गया है कि प्रस्तुत मामलों में अभिकथन/अपराध पूर्ववर्ती तीन मामलों में अभिकथनों/अपराधों के समान हैं इसलिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 300 (2) के अधीन आदेश के अनुसार राज्य सरकार की सम्मति आवश्यक है । यदि दलील देने के लिए यह मान लिया जाए कि वर्तमान मामलों में अभिकथन पूर्ववर्ती मामलों में के अभिकथनों से भिन्न हैं, तो भी अभियोजन पक्ष अभियुक्त-अपीलार्थी को अभियोजित करने के लिए आवश्यक राज्य सरकार की पूर्व सम्मति अभिप्राप्त करने में असफल रहा है और इसलिए प्रस्तुत मामले में का विचारण अविधिपूर्ण है ।

40. यह कहना गलत नहीं होगा कि अभियुक्त के विरुद्ध विरचित आरोपों से यह प्रकट होता है कि दुर्विनियोजन और लेखाओं का मिथ्याकरण करने के कई कृत्य किए गए थे, तथापि, वे उसी संव्यवहार में किए गए थे जिसके लिए उसे वर्ष 1999 में अभियोजित किया गया था । उसके विरुद्ध अभिकथित कृत्य एक-दूसरे से जुड़े हैं ।

41. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 300 की उपधारा (2) में यह कहा गया है कि जब दूसरे विचारण में आरोप एक भिन्न अपराध के लिए है, तो विचारण वर्जित नहीं है । इससे यह अभिप्रेत है कि यदि किसी व्यक्ति को किसी अपराध में दोषमुक्त या दोषसिद्ध किया गया है, तो उसका एक भिन्न अपराध के लिए विचारण किया जा सकता है जिसके लिए बाद के विचारण में उसके विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 220 की उपधारा (1) के अधीन एक पृथक् आरोप लगाया जा सकता था किंतु यह इस पूर्ववर्ती शर्त के अध्यधीन है कि इससे पूर्व कि ऐसे व्यक्ति का विचारण किया जा सके राज्य सरकार की सम्मति की ईप्सा की जाए । प्रस्तुत मामले में उक्त उपबंध को लागू करते हुए यह पाया गया है कि अपीलार्थी का पूर्व में 1999 के आपराधिक मामला सं. 12, 1999 के आपराधिक मामला सं. 13 और 1999 के आपराधिक मामला सं. 14 में अधिनियम की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 13(1)(ग) तथा भारतीय दंड संहिता की धारा 409 और 477क के अधीन अपराधों के लिए विचारण किया गया था । अपीलार्थी का 2003 के आपराधिक मामला सं. 24 और 2003 के आपराधिक मामला सं. 25 में पुन: एक बार उसी अवधि के लिए अधिनियम की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 13(1)(ग) और भारतीय दंड संहिता की धारा 409 के अधीन अपराधों के लिए विचारण किया जा रहा है । अभिलेख पर यह प्रदर्शित करने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि 2003 का आपराधिक मामला 24 और 2003 का आपराधिक मामला सं. 25 राज्य सरकार की सम्मति के अनुसरण में आरंभ किए गए हैं । अभिलेख पर यह भी नहीं लाया गया है कि 2003 का आपराधिक मामला सं. 24 और 2003 का आपराधिक मामला सं. 25 उस किसी भिन्न अपराध के लिए है जिसके लिए अपीलार्थी के विरुद्ध एक पृथक् आरोप लगाया गया था और पूर्ववर्ती विचारण किए गए थे ।

(क) साक्षियों के साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करने और पक्षकारों की परस्पर विरोधी दलीलों पर विचार करने के पश्चात् हमारा निष्कर्ष है कि उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय की अभिपुष्टि करके न्यायोचित नहीं किया था ।

(ख) पूर्वोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, हमारा निष्कर्ष है कि विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय ने इस अपील में अपीलार्थी को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट करके सही नहीं किया था और इसलिए आक्षेपित निर्णय अपास्त किए जाने योग्य हैं ।

42. इन परिस्थितियों में, हमारा यह निष्कर्ष है कि 2003 के आपराधिक मामला सं. 24 और 2003 के आपराधिक मामला सं. 25 को आरंभ करना विधि के अनुसार नहीं है और इसलिए उक्त कार्यवाहियों को अभिखंडित किया जाता है । परिणामत:, 2003 के आपराधिक मामला सं. 24 और 2003 के आपराधिक मामला सं. 25 में विशेष न्यायाधीश, कोझिकोड और 2009 की दांडिक अपील सं. 947 और 948 में केरल उच्च न्यायालय, एर्नाकुलम के निर्णय अपास्त किए जाते हैं । ये अपीलें पूर्वोक्त निबंधनों के अनुसार मंजूर की जाती हैं । लंबित आवेदन (आवेदनों), यदि कोई है, निपटारा हो जाएगा ।

खर्चे के लिए कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

अपीलें मंजूर की गईं ।

जस.

[2022] 4 उम. नि. प. 428

कालीचरण और अन्य

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

[2021 की दांडिक अपील सं. 122]

14 दिसंबर, 2022

न्यायमूर्ति संजय किशन कौल और न्यायमूर्ति अभय एस. ओका

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 213 और 313 – अभियुक्तों के विरुद्ध विरचित आरोप में अपराध कारित करने की रीति का उल्लेख न किया जाना और उनकी परीक्षा करने के दौरान अपराध में आलिप्त करने वाली सभी परिस्थितियों को न बताया जाना – प्रभाव – जहां अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप में यह अभिकथन किया गया हो कि मृतक की मृत्यु अभियुक्तों में से एक अभियुक्त द्वारा पिस्तौल से चलाई गई गोलियों के कारण हुई थी जबकि अभियुक्तों के विरुद्ध अभिलेख पर साक्ष्य और मृतक की मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट में उल्लेख किया गया हो कि मृतक की मृत्यु धारदार आयुधों से कारित क्षतियों के कारण हुई थी और अभियुक्तों की धारा 313 के अधीन परीक्षा के दौरान उन्हें मृतक की मृत्यु गोलियों से पहुंची क्षतियों के कारण होना बताया गया हो, वहां विरचित आरोप न केवल भ्रामक होने अपितु अभियुक्तों के विरुद्ध साक्ष्य में प्रकट होने वाली महत्वपूर्ण परिस्थितियों को उन्हें न बताने से उन पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने और उचित रूप से अपनी प्रतिरक्षा करने का अवसर न मिलने के कारण उनकी दोषसिद्धि को कायम रखना न्यायोचित नहीं होगा ।

इस मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि इत्तिलाकर्ता (अभि. सा. 1) एक गली को समतल करने के लिए अपनी बैलगाड़ी से मिट्टी ले जा रहा था और जब वह गली में पहुंचा तो अभियुक्त सं. 1 कालीचरण और उसके पुत्रों याद प्रकाश (अभियुक्त सं. 2) और दिवान सिंह (अभियुक्त सं. 3) ने अभि. सा. 1 का विरोध किया और उसे अपनी बैलगाड़ी वापस

मोड़ने के लिए मजबूर किया । अभियुक्त सं. 1 से 3 और अभि. सा. 1 के बीच कहा-सुनी हुई । उक्त तीनों अभियुक्त अपने मकान पर गए और आयुधों के साथ वापस आए । अभिकथित रूप से अभियुक्त बंगाली एक छुरा (उस्तरा) के साथ आया । अभियुक्त सं. 1 एक लाठी लिए हुए था । अभियुक्त सं. 2 याद प्रकाश 315 बोर की देसी पिस्तौल लिए हुए था । अभियुक्त सं. 3 दिवान सिंह और अभियुक्त सं. 4 शकुंतला देवी अपने-अपने हाथों में कुल्हाड़ी लिए हुए थे । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में किया गया अभिकथन यह था कि अभियुक्त सं. 2 ने अपनी देसी पिस्तौल से 4 से 5 गोलियां चलाई जो मृतक हरपाल सिंह को लगीं और उसकी घटनास्थल पर ही मृत्यु हो गई । इस घटना के परिणामस्वरूप, संघर्ष शुरू हुआ और अभियुक्त बंगाली, जो एक उस्तरे से लैस था, ने अभि. सा. 1 की बहिन रानी पर आक्रमण किया, जिसकी बंगाली द्वारा कारित की गई क्षतियों के कारण मृत्यु हो गई । मलखान सिंह, राम अवतार, श्रीमती सरोज, श्रीमती रजनी और श्रीमती रानी देवी मृतका रानी को बचाने के लिए आए । तथापि, उक्त व्यक्तियों पर अभियुक्त सं. 1, 3 और 4 द्वारा अपने-अपने हाथों में लिए हुए आयुधों से आक्रमण किया गया । इन व्यक्तियों को उक्त तीन अभियुक्तों के हाथों क्षतियां पहुंचीं । अभियुक्त सं. 2 और 4 को भी लड़ाई में क्षतियां पहुंचीं । यद्यपि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में यह मामला बनाया गया था कि मृतक हरपाल सिंह की मृत्यु अभियुक्त सं. 2 याद प्रकाश द्वारा चलाई गई गोलियों से कारित गोली लगने से पहुंचीं क्षतियों के कारण हुई थी, तो भी साक्ष्य में अभियोजन साक्षियों, विशिष्ट रूप से अभि. सा. 1, ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि अभियुक्त सं. 2 द्वारा चलाई गई गोलियों से शोर-शराबा होने के कारण हरपाल सिंह नीचे गिर गया और बाद में अन्य अभियुक्तों द्वारा उस पर आक्रमण किया गया । धारदार आयुधों द्वारा कारित क्षतियों के परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हो गई । मृतक की मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट में भी यह उल्लेख किया गया था कि मृतक की मृत्यु धारदार आयधों से कारित क्षतियों के कारण हुई थी । विचारण न्यायालय द्वारा सभी अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 149 की सहायता से धारा 302 और 307 के अधीन तथा एक अभियुक्त को आयुध अधिनियम के अधीन भी दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया ।

अभियुक्तों द्वारा दोषसिद्धि के विरूद्ध उच्च न्यायालय में अपीलें फाइल की गईं जो खारिज कर दी गईं । एक अभियुक्त को छोड़कर अन्य अभियुक्तों द्वारा उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश के विरूद्ध उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई और मुख्य रूप से यह दलील दी गई विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों के विरूद्ध गलत आरोप विरचित किए गए थे जिससे वे उचित रूप से अपनी प्रतिपरीक्षा करने में समर्थ नहीं हो सके और इसके कारण उन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था । उच्च्तम न्यायालय द्वारा अपील को मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – जब तक दांडिक कानून की विनिर्दिष्ट धाराओं तथा अभिकथित अपराध कारित करने के समय और स्थान जैसी विशिष्टियों को आरोप में सम्मिलित नहीं किया जाता है, अभियुक्त उचित रूप से अपनी प्रतिरक्षा करने की स्थिति में नहीं होगा । यहां तक कि ये विशिष्टियां कई मामलों में अभियुक्त को उचित रूप से अपनी प्रतिरक्षा करने के लिए समर्थ बनाने हेतु पर्याप्त नहीं हो सकती हैं । यही कारण है कि धारा 213 में यह एक विनिर्दिष्ट अपेक्षा सम्मिलित है कि यदि धारा 211 और 212 में वर्णित विशिष्टियां अभियुक्त को उस बात की पर्याप्त सूचना नहीं देती, जिसका उस पर आरोप है, तब उस रीति की ऐसी विशिष्टियां भी, जैसी उस प्रयोजन के लिए पर्याप्त हैं, आरोप में अंतर्विष्ट होंगी, जिसमें अभिकथित अपराध किया गया था । धारा 213 के दृष्टांत (ड.) में यह उपबंधित है कि जब आरोप में यह अभिकथन अंतर्विष्ट है कि 'क' पर कथित समय पर और कथित स्थान में 'ख' की हत्या करने का अभियोग है, तब यह आवश्यक नहीं है कि आरोप में वह रीति कथित हो जिसमें 'क' ने 'ख' की हत्या की । इस मामले में विरचित आरोप पर विचार करने पर इसमें यह अभिकथित है कि वह अभियुक्त सं. 2 था जिसने अपनी पिस्तौल से गोलियां चलाकर मृतक हरपाल सिंह की हत्या की थी । यद्यपि अभियोजन का पक्षकथन, जैसा कि साक्ष्य से देखा जा सकता है, यह है कि अभियुक्त सं. 1, 3 और 4 ने अपने-अपने हाथों में लिए हुए धारदार आयुधों का प्रयोग करके हरपाल सिंह की हत्या की थी, तो भी अभियुक्त सं. 1, 3 और 4 के विरुद्ध यह अभिकथन करते हुए कोई आरोप विरचित नहीं किया गया है कि उन्होंने

हरपाल सिंह की हत्या की थी । क्योंकि अभियुक्त सं. 1, 3 और 4 के विरुद्ध हरपाल सिंह की हत्या करने का कोई आरोप विरचित नहीं किया गया है, इसलिए दृष्टांत (ड.) लागू नहीं होगा । अत: अभियुक्त सं. 1, 3 और 4 द्वारा हत्या का अपराध करने की रीति का उल्लेख करके धारा 213 के निबंधनों के अनुसार आरोप विरचित करना आवश्यक था । अभियोजन साक्षियों (अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2) द्वारा अभिलेख पर लाई गई सामग्री इस आशय की है कि हरपाल सिंह की मृत्यु अभियुक्त सं. 1, 3 और 4 द्वारा धारदार आयुधों से उस पर किए गए आक्रमण के परिणामस्वरूप पहुंचीं क्षतियों के कारण हुई थी । अभियुक्तों के विरुद्ध अभिलेख पर लाई गई इन तात्विक परिस्थितियों को, जिनके आधार पर उनकी दोषसिद्धि की गई है, कभी भी अभियुक्तों को नहीं बताया गया था । जो अभियुक्तों को बताया गया था वह अभियोजन पक्ष द्वारा साक्ष्य में बनाया गया मामला नहीं था । धारा 313 के कथन में हरपाल सिंह के शव की मरणोत्तर परीक्षा के बारे में कोई प्रश्न नहीं पूछे गए हैं । साक्षियों को यह नहीं बताया गया था कि हरपाल सिंह की मृत्यु धारदार आयुधों द्वारा कारित क्षतियों के परिणामस्वरूप रक्तस्राव और सदमे के कारण हुई थी । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन किसी अभियुक्त से प्रश्न पूछना एक कोरी औपचारिकता नहीं है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा की यह अपेक्षा है कि अभियुक्त को उसके विरुद्ध साक्ष्य में प्रकट होने वाली परिस्थितियों को स्पष्ट किया जाना चाहिए जिससे अभियुक्त स्पष्टीकरण दे सके । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभियुक्त से प्रश्न पूछने के पश्चात् वह प्रतिरक्षा साक्षियों की परीक्षा कराने के लिए बुलाने और अन्य साक्ष्य प्रस्तुत करने का हकदार है । यदि अभियुक्त को साक्ष्य में उसके विरुद्ध प्रकट होने वाली उन महत्वपूर्ण परिस्थितियों को स्पष्ट नहीं किया जाता है जिनके आधार पर उसकी दोषसिद्धि की ईप्सा की गई है, तो अभियुक्त अभिलेख पर उसके विरुद्ध लाई गई उक्त परिस्थितियों को स्पष्ट करने की स्थिति में नहीं होगा । वह स्वयं की उचित रूप से प्रतिरक्षा करने के लिए समर्थ नहीं होगा । इस मामले में न केवल इस अभिकथन के आधार पर कोई आरोप विरचित नहीं किया गया था कि हरपाल सिंह की मृत्यु अभियुक्तों

द्वारा किए गए व्यक्तिगत हमलों के कारण और विशिष्ट रूप से अभियुक्त सं. 1, 2 और 4 द्वारा धारदार आयुधों का प्रयोग करने के कारण हुई थी, अपितु एक भ्रामक आरोप विरचित किया गया था कि हरपाल सिंह की मृत्यु अभियुक्त सं. 2 द्वारा अपने हाथ में ली हुई पिस्तौल से चलाई गई गोलियों से पहुंचीं क्षतियों के कारण हुई थी । इस बात की पूरी संभावना है कि अभियुक्त ऐसा आरोप विरचित करने और सही आरोप विरचित करने में लोप के कारण भ्रमित हुए थे । अधिक गंभीर बात यह है कि यद्यपि विचारण के दौरान बनाए गए अभियोजन के पक्षकथन से स्पष्ट रूप से यह उपदर्शित होता है कि हरपाल सिंह की मृत्यु किसी गोली से पहुंची क्षति के कारण नहीं हुई थी, तो भी धारा 313 के अधीन सभी अभियुक्तों को जो परिस्थिति बताई गई थी वह यह थी कि हरपाल सिंह की मृत्यु अभियुक्त सं. 2 द्वारा एक देसी पिस्तौल से चलाई गई चार से पांच गोलियों के कारण हुई थी । वास्तव में, धारा 313 के अधीन अभियुक्तों के कथन में प्रश्न सं. 5 में स्पष्ट रूप से यह अभिलिखित है कि अभियुक्त सं. 2 द्वारा चलाई गई गोलियां हरपाल सिंह को लगी और उसकी घटनास्थल पर ही मृत्यु हो गई । जैसा कि मौखिक साक्ष्य, मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट और डाक्टर की परीक्षा से देखा जा सकता है, हरपाल सिंह को कोई गोली की क्षति नहीं पहुंची थी । फिर भी, उक्त अभिकथन को धारा 313 के अधीन परीक्षा में सभी अभियुक्तों को बताया गया था । इस प्रकार, न केवल विरचित किया गया आरोप भ्रामक था अपितु साक्ष्य में अभियुक्तों के विरुद्ध अभिलेख पर लाई गई इस अति तात्विक परिस्थिति को किसी भी अभियुक्त को नहीं बताया गया था कि हरपाल सिंह की मृत्यु अभियुक्त सं. 1, 3 और 4 द्वारा किए गए आक्रमण से कारित क्षतियों के कारण हुई थी । इस प्रकार, न केवल आरोप भ्रामक था अपितु अभियुक्तों को उस परिस्थिति को स्पष्ट करने का अवसर नहीं मिला था जिसमें अभिकथित रूप से हरपाल सिंह की हत्या हुई थी और जिसे विचारण के दौरान अभिलेख पर लाया गया था । अत: मामले के तथ्यों में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 213 के निबंधनों के अनुसार उचित आरोप विरचित करने में लोप के कारण और साक्ष्य में प्रकट होने वाली महत्वपूर्ण परिस्थितियों को धारा 313 के

अधीन कथन में न बताने के कारण अभियुक्तों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था । मामले के तथ्यों में इस प्रतिकूल प्रभाव से न्याय नहीं हुआ था । (पैरा 17, 22 और 23)

अत: इस न्यायालय का यह विचार है कि क्या मामले को उचित आरोप विरचित करने और धारा 313 के अधीन अभियुक्तों के अतिरिक्त कथन अभिलिखित करने के लिए प्रतिप्रेषित किया जा सकता है । किंतु घटना दिसंबर, 2000 की है । इसलिए अभियुक्तों के लिए यह अनुचित होगा यदि उन्हें उस घटना के बारे में जो 22 वर्ष से अधिक समय पहले घटित हुई थी, के बारे में साक्ष्य में उनके विरुद्ध प्रकट होने वाली परिस्थितियों का उत्तर देने के लिए बुलाया जाए । वास्तव में, ऐसी प्रक्रिया से अभियुक्तों पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा । इन परिस्थितियों में, अभियुक्त सं. 1, 2 और 4 के विरुद्ध हरपाल सिंह की हत्या करने के आरोप को प्रमाणित नहीं किया जा सकता । अभियुक्त सं. 1, 2 और 4 को भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 307 के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया था । तथापि, धारा 149 इस मामले में लागू नहीं होगी । यह न्यायालय यह उल्लेख कर सकता है कि अभियुक्त सं. 1, 2 और 4 तारीख 19 अगस्त, 2019 से जेल में थे । इसलिए उन सभी ने तीन वर्ष और चार माह से अधिक का दंडादेश भुगत लिया था । अभियुक्त सं. 2 को आयुध अधिनियम की धारा 25 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दो वर्ष का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था, जो उसने पहले ही भुगत लिया है । (पैरा 24 और 25)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1985]	[1985] 1 उम. नि. प. 995 = (1984) 4 एस. सी. सी. 116 : **शरद बिरधीचंद सारदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	22
[1963]	[1963] 3 एस. सी. आर. 489 : **जयदेव** बनाम **पंजाब राज्य** ।	22

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2021 की दांडिक अपील सं. 122.

2003 की दांडिक अपील सं. 2181 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के तारीख 24 मई, 2019 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से सर्वश्री राजेश प्रसाद सिंह, राकेश के. खन्ना, सुश्री सैफाली जैन, सामंत सिंह, आदित्य पुष्कल खन्ना, सुश्री राम्या खन्ना परीजा नायर और राजीव सिंह

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री विनोद दिवाकर, अपर महाधिवक्ता, सर्वेश सिंह बघेल और बी. एन. दूबे

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति अभय एस. ओका ने दिया ।

न्या. ओका – इस अपील में मुख्य रूप से दो विवाद्यक उद्भूत होते हैं । पहला विवाद्यक दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 ('दंड प्रक्रिया संहिता') की धारा 213 के अनुसार उचित आरोप विरचित करने में लोप के संबंध में है । दूसरा विवाद्यक अभियोजन साक्ष्य में अभिलेख पर लाई गई तात्विक परिस्थितियों को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभियुक्तों के कथनों में विद्वान् विचारण न्यायाधीश द्वारा उनके समक्ष प्रस्तुत करने में असफलता से संबंधित है । संक्षेप में, यह न्यायालय यह परीक्षा करेगा कि क्या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 213 और 313 की अपेक्षाओं का अनुपालन नहीं किया गया है । यदि उक्त प्रश्न का उत्तर सकारात्मक है, तो अगला प्रश्न यह होगा कि क्या पूर्वोक्त उपबंधों का अनुपालन करने में असफलता के कारण अभियुक्त पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है और क्या इससे न्याय की हानि हुई है ।

2. वर्तमान अपील त्वरित सेशन न्यायालय, बुलंदशहर के निर्णय और आदेश से उद्भूत हुई है । त्वरित न्यायालय ने अभियुक्त बंगाली को, जो इस न्यायालय के समक्ष नहीं है, भारतीय दंड संहिता की धारा 148, धारा 149 के साथ पठित धारा 302 तथा धारा 307 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया था । त्वरित न्यायालय ने कालीचरण (अभियुक्त सं. 1), याद प्रकाश (अभियुक्त सं. 2), दिवान सिंह

(अभियुक्त सं. 3) और श्रीमती शकुंतला देवी (अभियुक्त सं. 4) को भारतीय दंड संहिता की धारा 148, धारा 149 के साथ पठित धारा 302 और धारा 149 के साथ पठित धारा 307 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया था । याद प्रकाश (अभियुक्त सं. 2) को आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 25 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए भी दोषसिद्ध किया गया था । इलाहाबाद उच्च न्यायालय के समक्ष दो अलग-अलग अपीलें फाइल की गई थीं । एक अपील अभियुक्त बंगाली द्वारा और दूसरी अभियुक्त सं. 1 से 4 द्वारा फाइल की गई थी । आक्षेपित निर्णय द्वारा ये अपीलें खारिज कर दी गई थीं ।

3. अभियुक्त बंगाली ने आक्षेपित निर्णय को चुनौती नहीं दी । अभियुक्त सं. 1 से 4 ने यह अपील फाइल की है । हमें यहां यह उल्लेख करना होगा कि अपीलार्थी सं. 3 दिवान सिंह (अभियुक्त सं. 3) ने वर्तमान अपील में यह अभिवाक् किया कि अभिकथित अपराध कारित करने की तारीख को वह विधि का उल्लंघन करने वाला किशोर था । तद्नुसार, इस न्यायालय ने तारीख 8 फरवरी, 2021 के आदेश द्वारा विद्वान् जिला और सेशन न्यायाधीश को उक्त अभिवाक् की जांच करने का निदेश दिया । विद्वान् जिला और सेशन न्यायाधीश द्वारा यह अभिनिर्धारित करते हुए एक निष्कर्ष निकाला गया कि अपराध कारित करने की तारीख को अपीलार्थी सं. 3 दिवान सिंह (अभियुक्त सं. 3) विधि का उल्लंघन करने वाला किशोर था । अत: तारीख 1 जुलाई, 2021 के आदेश द्वारा अपीलार्थी सं. 3 की दोषसिद्धि को अपास्त कर दिया गया और वर्तमान अपील को उस सीमा तक मंजूर किया गया ।

4. हम यहां यह उल्लेख कर सकते हैं कि उसी घटना के लिए दो अलग-अलग प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई थीं । पहली प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सभी भारतीय दंड संहिता के अधीन अपराधों के लिए सभी पांचों अभियुक्तों के विरुद्ध थी और दूसरी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अपीलार्थी सं. 2 (अभियुक्त सं. 2) के विरुद्ध आयुध अधिनियम की धारा 25 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए थी ।

5. अभियोजन का पक्षकथन, संक्षेप में, यह है कि तारीख 6 दिसंबर, 2000 को लगभग 1.30 बजे पूर्वाह्न में इत्तिलाकर्ता अतर सिंह

(अभि. सा. 1) एक गली को समतल करने के लिए अपनी बैलगाड़ी से मिट्टी ले जा रहा था । जब वह शंकर के मकान के निकट पहुंचा, तो अभियुक्त सं. 1 कालीचरण और उसके पुत्रों याद प्रकाश (अभियुक्त सं. 2) और दिवान सिंह (अभियुक्त सं. 3) ने अभि. सा. 1 का विरोध किया और उसे अपनी बैलगाड़ी वापस मोड़ने के लिए मजबूर किया । अभियुक्त सं. 1 से 3 और अभि. सा. 1 के बीच कहा-सुनी हुई । उक्त तीनों अभियुक्त अपने मकान पर गए और आयुधों के साथ वापस आए । यह अभिकथन है कि अभियुक्त बंगाली एक छुरा (उस्तरा) के साथ आया । अभियुक्त सं. 1 एक लाठी लिए हुए था । अभियुक्त सं. 2 याद प्रकाश 315 बोर की देसी पिस्तौल लिए हुए था । अभियुक्त सं. 3 दिवान सिंह और अभियुक्त सं. 4 शकुंतला देवी अपने-अपने हाथों में कुल्हाड़ी लिए हुए थे । अभियुक्त सं. 4 शकुंतला देवी अभियुक्त सं. 1 की पत्नी और अभियुक्त सं. 2 और 3 की माता है । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में किया गया अभिकथन यह है कि अभियुक्त सं. 2 ने अपनी देसी पिस्तौल से 4 से 5 गोलियां चलाई जो मृतक हरपाल सिंह को लगीं और उसकी घटनास्थल पर ही मृत्यु हो गई । इस घटना के परिणामस्वरूप, संघर्ष शुरू हुआ और अभियुक्त बंगाली, जो एक उस्तरे से लैस था, ने अभि. सा. 1 की बहिन रानी पर आक्रमण किया, जिसकी बंगाली द्वारा कारित की गई क्षतियों के कारण मृत्यु हो गई । मलखान सिंह, राम अवतार, श्रीमती सरोज, श्रीमती रजनी और श्रीमती रानी देवी मृतका रानी को बचाने के लिए आए । तथापि, उक्त व्यक्तियों पर अभियुक्त सं. 1, 3 और 4 द्वारा अपने-अपने हाथों में लिए हुए आयुधों से आक्रमण किया गया । इन व्यक्तियों को उक्त तीन अभियुक्तों के हाथों क्षतियां पहुंचीं । अभियुक्त सं. 2 और 4 को भी लड़ाई में क्षतियां पहुंचीं । यहां यह उल्लेख करना आवश्यक है कि यद्यपि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में यह मामला बनाया गया था कि मृतक हरपाल सिंह की मृत्यु अभियुक्त सं. 2 याद प्रकाश द्वारा चलाई गई गोलियों से कारित गोली लगने से पहुंचीं क्षतियों के कारण हुई थी, तो भी साक्ष्य में अभियोजन साक्षियों, विशिष्ट रूप से अभि. सा. 1, ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि अभियुक्त सं. 2 द्वारा चलाई गई गोलियों से शोर-शराबा होने के कारण हरपाल सिंह नीचे गिर गया और बाद में अन्य अभियुक्तों द्वारा उस पर आक्रमण किया गया ।

धारदार आयुधों द्वारा कारित क्षतियों के परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हो गई । अभियोजन पक्ष ने बरामदगी के साक्ष्य के अतिरिक्त मुख्य रूप से प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों अभि. सा. 1 अतर सिंह और अभि. सा. 2 मलखान सिंह के साक्ष्य का अवलंब लिया, जिन्हें अभिकथित रूप से अभियुक्तों के हाथों क्षतियां पहुंची थीं ।

दलीलें

6. अपीलार्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री राकेश खन्ना ने आरंभ में यह बताया कि पांच अभियुक्तों में से एक दिवान सिंह को इस न्यायालय द्वारा दोषमुक्त कर दिया है और इसलिए घटना में केवल चार अभियुक्त अंतर्ग्रस्त थे । अत: उन्होंने यह दलील दी कि अभियोजन पक्ष द्वारा बनाए गए विधिविरुद्ध जमाव के अभिकथन को स्वीकार नहीं किया जा सकता क्योंकि पांच या अधिक व्यक्तियों का कोई जमाव नहीं था । अत: उन्होंने दलील दी कि भारतीय दंड संहिता की धारा 148 और 149 का अवलंब नहीं लिया जा सकता । उन्होंने अभियुक्तों के विरुद्ध विरचित चौथे आरोप की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया । उन्होंने बताया कि उक्त आरोप में यह अभिकथित है कि अभियुक्त सं. 2 याद प्रकाश ने एक देसी रिवाल्वर से गोली चलाई थी और गोली से पहुंची क्षति के कारण हरपाल सिंह की मृत्यु हो गई थी । उन्होंने बताया कि ऐसा कोई आरोप विरचित नहीं किया गया था कि अभियुक्तों ने हरपाल सिंह की हत्या उसके नीचे गिर जाने के पश्चात् अपने हाथों में लिए हुए आयुधों का प्रयोग करके की थी । उन्होंने दलील दी कि जैसा कि सेशन न्यायालय और उच्च न्यायालय के निर्णयों से देखा जा सकता है, यह अभिनिर्धारित किया गया है कि हरपाल सिंह को कोई अग्न्यायुध की क्षति नहीं पहुंची थी अपितु उसे अभियुक्त सं. 1, 2 और 4 द्वारा अपने हाथों में लिए हुए आयुधों से हमला करने के कारण क्षतियां पहुंची थीं । उन्होंने दलील दी कि अभियुक्त उचित आरोप विरचित न करने के कारण भ्रमित हुए थे । उन्होंने दलील दी कि यद्यपि अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 ने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि हरपाल सिंह अभियुक्त सं. 2 द्वारा प्रयुक्त किए गए अग्न्यायुध द्वारा कारित गोली की क्षति का शिकार नहीं हुआ था, जबकि धारा 313 के

अधीन अभियुक्तों के कथनों को अभिलिखित करते समय अभियुक्तों को केवल यह परिस्थिति बताई गई थी कि हरपाल सिंह की मृत्यु अभियुक्त सं. 2 याद प्रकाश द्वारा चलाई गई चार से पांच गोलियों के कारण हुई थी । उन्होंने यह बताया कि अभियुक्तों को यह परिस्थिति नहीं बताई गई थी कि अभियुक्तों ने अपने हाथों में लिए हुए आयुधों से हरपाल सिंह पर आक्रमण किया था और जिससे अंततोगत्वा हरपाल सिंह की मृत्यु हो गई थी । उन्होंने दलील दी कि उचित आरोप विरचित करने में असफल रहने के कारण और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभियुक्तों के कथनों के समय उन्हें तात्विक परिस्थितियों को न बताने से अभियुक्तों पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है । अत: उन्होंने दलील दी कि अपीलार्थी सं. 1, 2 और 4 की दोषसिद्धि दूषित हो जाती है और उन्हें दोषमुक्त किया जाना चाहिए । उन्होंने यह भी बताया कि अभ्यर्पण करने से छूट प्रदान करने के लिए अपीलार्थियों द्वारा किए गए आवेदन इस न्यायालय द्वारा तारीख 29 जुलाई, 2019 के आदेश द्वारा नामंजूर कर दिए गए थे । अभिरक्षा प्रमाणपत्रों से दर्शित होता है कि अपीलार्थी सं. 1, 2 और 4 तारीख 19 अगस्त, 2019 से अभिरक्षा में हैं ।

7. उत्तर प्रदेश राज्य की ओर से विद्वान् अपर महाधिवक्ता श्री विनोद दिवाकर ने प्रथमत: यह दलील दी कि अभियुक्तों की ओर से अधिवक्ता ने अभियोजन के इस पक्षकथन पर कि हरपाल सिंह की मृत्यु अपीलार्थी सं. 1, 2 और 4 द्वारा अपने हाथों में लिए हुए आयुधों से किए गए हमले के कारण हुई थी, दो प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों सहित तात्विक अभियोजन साक्षियों की प्रतिपरीक्षा की थी । इसलिए न्यायालय द्वारा उचित आरोप विरचित करने में असफलता से उन पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा था । इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के साक्ष्य में परिलक्षित अभियोजन के पक्षकथन से अवगत थे और इसलिए विद्वान् विचारण न्यायाधीश द्वारा धारा 313 के अधीन उनके कथनों में उन्हें इस परिस्थिति को न बताना कतई घातक नहीं है । उन्होंने दलील दी कि दोनों न्यायालयों ने अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के परिसाक्ष्य को विश्वसनीय पाया था । उन्होंने दलील दी कि मृतक हरपाल सिंह के शरीर पर पाई गई क्षतियां और अभि. सा. 1 और

अभि. सा. 2 सहित क्षतिग्रस्त व्यक्तियों के शरीर पर पाई गई क्षतियां अभियोजन के पक्षकथन के अनुरूप थीं । अत: उन्होंने यह दलील दी कि इस अपील में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है क्योंकि दो व्यक्तियों की बर्बरतापूर्वक हत्या कर दी गई थी और कई अन्य व्यक्ति क्षतिग्रस्त हुए थे ।

दलीलों पर विचार

भारतीय दंड संहिता की धारा 148 व 149 की प्रयोज्यता

8. हमने दलीलों पर सावधानीपूर्वक विचार किया है । जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, वर्तमान अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 148 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया था । उन सभी को भारतीय दंड संहिता की धारा 149 की सहायता से धारा 302 और 307 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए भी दोषसिद्ध किया गया था । धारा 148 और 149 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए पूर्ववर्ती शर्त यह है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 141 में उपबंधित अनुसार एक "विधिविरुद्ध जमाव" होना चाहिए । भारतीय दंड संहिता की धारा 141 में परिभाषित "विधिविरुद्ध जमाव" से पांच या अधिक व्यक्तियों का जमाव अभिप्रेत है । इस मामले में, चारों अपीलार्थियों और अभियुक्त बंगाली को आरोप पत्र में नामित किया गया था । जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, अपीलार्थी सं. 3 अभियुक्त सं. 3 को इस न्यायालय द्वारा उसके विरुद्ध दोषसिद्धि को अपास्त करते हुए तारीख 1 जुलाई, 2021 के आदेश द्वारा दोषमुक्त कर दिया गया था । अत: इस प्रश्न पर विचार करने के लिए कि क्या कोई विधिविरुद्ध जमाव था, अपीलार्थी सं. 3 दिवान सिंह को विचारणा से बाहर रखना होगा । फिर केवल चार अभियुक्त रह जाते हैं । इसलिए भारतीय दंड संहिता की धारा 148 और 149 के अधीन आरोप को कायम नहीं रखा जा सकता ।

<u>उचित आरोप विरचित करने में लोप और अभियुक्तों के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन उनके कथन में सुसंगत परिस्थितियों को प्रस्तुत करने में लोप का प्रभाव</u>

9. अब हम विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों के विरुद्ध विरचित आरोप पर आते हैं । मृतक हरपाल सिंह के संबंध में भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए विरचित आरोप तीसरा और चौथा आरोप था । उच्च न्यायालय द्वारा उक्त दो आरोपों का किया गया शासकीय अंग्रेजी अनुवाद निम्न प्रकार से है :–

> "तीसरा : यह कि उपर्युक्त तारीख, समय और स्थान पर आप अभियुक्त याद प्रकाश ने शिकायतकर्ता अतर सिंह और उसके परिवार के सदस्यों पर अपने हाथ में ली हुई देसी पिस्तौल से उनकी हत्या करने के आशय से चार-पांच गोलियां चलाईं, जो शिकायतकर्ता के चचेरे भाई अर्थात् हरपाल सिंह को लगीं । इस प्रकार, आप अभियुक्त यादराम ने हरपाल सिंह की हत्या कारित की । इस प्रकार, आपने भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध कारित किया है जो इस न्यायालय के संज्ञान में है ।
>
> चौथा : यह कि उपुर्यक्त तारीख, समय और स्थान पर अभियुक्त व्यक्तियों में से आप अभियुक्त याद प्रकाश ने देसी पिस्तौल से हरपाल सिंह पर अपने सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करते हुए गोलियां दागी थीं और घटनास्थल पर ही हरपाल सिंह की हत्या कारित की थी जो भारतीय दंड संहिता की धारा 302/149 के अधीन दंडनीय अपराध है और इस न्यायालय के संज्ञान में है ।"
>
> (बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

10. इस प्रकार, दोनों आरोपों में यह अभिकथन किया गया है कि अपीलार्थी सं. 2 याद प्रकाश (अभियुक्त सं. 2) ने अपनी देसी पिस्तौल से 4-5 गोलियां चलाई थीं जो हरपाल सिंह को लगीं और इसलिए अभियुक्त सं. 2 द्वारा हरपाल सिंह की हत्या की गई थी । यह विचारण न्यायालय द्वारा विरचित तीसरा आरोप है । चौथा आरोप पुन: इस अभिकथन के आधार पर था कि जिस क्षति के कारण हरपाल सिंह की मृत्यु हुई थी वह अभियुक्त सं. 2 की देसी पिस्तौल से चलाई गई गोलियों से कारित क्षति थी । चौथे आरोप से यह उपदर्शित होता है कि

अन्य अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की केवल धारा 149 की सहायता से आलिप्त किया गया था ।

11. प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अभि. सा. 1 अतर सिंह द्वारा की गई लिखित रिपोर्ट के आधार पर दर्ज की गई थी जिसे एक पुलिस कांस्टेबल मुरारी लाल द्वारा लेखबद्ध किया गया था । उक्त लिखित रिपोर्ट में किए गए अभिकथनों के तात्विक भाग का शासकीय अनुवाद निम्न प्रकार से है :–

> "..... उसके पश्चात्, अभियुक्त व्यक्ति अपने घर गए और फिर कालीचरण लाठी से लैस होकर, उसके पुत्र अर्थात् याद प्रकाश देसी पिस्तौल (315) लैस होकर, बंगाली छुरे से लैस होकर और दिवान सिंह चाकू से लैस होकर तथा कालीचरण की पत्नी श्रीमती शकुंतला देवी कुल्हाड़ी से लैस होकर सामान्य उद्देश्य से घटनास्थल पर आए । शोर-शराबा होने पर, हमारे परिवार के हरपाल पुत्र श्रीराम, श्रीमती रानी देवी पुत्री महिपाल, मलखान सिंह, रामअवतार पुत्र महिलाल, श्रीमती सरोज पत्नी धावल सिंह, श्रीमती रजनी पत्नी वेद प्रकाश, श्रीमती रानी देवी पत्नी अतर सिंह, श्रीराम पुत्र मेवा राम, वेद प्रकाश पुत्र महिपाल, सतपाल पुत्र छितर सिंह और अमर सिंह पुत्र श्रीराम वहां पहुंचें । तदुपरांत, अभियुक्त कालीचरण ने यह कहते हुए उत्प्रेरित किया कि 'देखते क्या हो सालों को जान से मार डालो (क्या देख रहे हो, हरामजादों को मार डालो) ।' तदुपरांत, अभियुक्त याद प्रकाश ने अपनी देसी पिस्तौल से हमारे ऊपर जान से मारने के आशय से 4-5 गोलियां चलाईं, जो मेरे चचेरे भाई हरपाल सिंह को लगी । इसके कारण घटनास्थल पर ही हरपाल सिंह की मृत्यु हो गई .....।"
>
> (बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

12. जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, अभियोजन पक्ष द्वारा केवल दो प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों अर्थात् अभि. सा. 1 अतर सिंह, इत्तिलाकर्ता और अभि. सा. 2 मलखान सिंह की परीक्षा की गई थी । अभि. सा. 1 ने न्यायालय के समक्ष अपने अभिसाक्ष्य में उस लिखित

कथन को साबित किया जिसके आधार पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई थी । उसकी मुख्य परीक्षा के तात्विक भाग का अंग्रेजी अनुवाद निम्न प्रकार से है :–

> "कालीचरण के हाथ में लाठी थी, याद प्रकाश के पास देसी पिस्तौल थी, बंगाली के पास छुरा था । दिवान सिंह के पास चाकू था और शकुंतला देवी के पास कुल्हाड़ी थी । जैसे ही वे पहुंचें, कालीचरण ने उनको गोली चलाने के लिए उत्प्रेरित किया । तदुपरांत, अभियुक्त याद प्रकाश ने 4-5 गोलियां चलाईं और गोलियां चलने की आवाज सुनकर मेरे परिवार के सदस्य अर्थात् मलखान सिंह, रामअवतार, सरोज, रजनी, मेरी बहिन रानी देवी और मेरी पत्नी रानी, हरपाल सिंह और अन्य आए । जब गोली चलने के कारण भगदड़ मची तो हरपाल सिंह नीचे गिर गया और पूर्वोक्त अभियुक्त व्यक्तियों ने अपने-अपने आयुधों से हरपाल पर हमला किया जिसके परिणामस्वरूप हरपाल की घटनास्थल पर ही मृत्यु हो गई ।"

13. अभि. सा. 1 ने प्रतिपरीक्षा में कथन किया कि चूंकि अभियुक्त सं. 2 ने 4-5 गोलियां चलाई थीं जिससे भगदड़ मच गई थी । उसने यह कथन किया कि हरपाल नीचे गिर गया किंतु उसे पता नहीं था कि क्या उसे गोलियां लगी हैं या नहीं । तथापि, उसने स्वीकार किया कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में उसने यह कहा था कि अभियुक्त सं. 2 द्वारा चलाई गई गोलियां हरपाल सिंह को लगी थीं, जिसकी घटनास्थल पर मृत्यु हो गई थी ।

14. अभि. सा. 2 मलखान सिंह केवल अन्य प्रत्यक्षदर्शी साक्षी है । उसने भी अपनी मुख्य परीक्षा में ऐसा ही बयान दिया था । उसने प्रतिपरीक्षा में यह कहा कि उसे पता नहीं था कि क्या हरपाल सिंह गोली की क्षति के कारण नीचे गिर गया था ।

15. हमने ऊपर तीसरे आरोप को उद्धृत किया है जो प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में के इस अभिकथन पर आधारित है कि हरपाल सिंह को अभियुक्त सं. 2 द्वारा चलाई गई गोलियों के कारण क्षतियां पहुंची थीं

और उसकी गोलियों से पहुंची क्षतियों के कारण मृत्यु हो गई थी । ऐसा कोई आरोप विरचित नहीं किया गया है कि हरपाल सिंह की मृत्यु अभियुक्त सं. 1, 2 और 4 (वर्तमान अपीलार्थियों) द्वारा किए गए हमले के कारण हुई थी । जैसा कि दोनों न्यायालयों द्वारा उल्लेख किया गया है, अभि. सा. 3 डा. आर. के. डावरे, जिसने मृतक हरपाल सिंह के शव की मरणोत्तर परीक्षा की थी, ने यह कथन किया था कि उसे चाकुओं और छुरे जैसे धारदार आयुधों से कारित क्षतियां पहुंची थीं । उसने न तो यह अभिसाक्ष्य दिया था कि गोली से पहुंची क्षतियां थीं और न ही मरणोत्तर परीक्षा के टिप्पण में ऐसी क्षतियों को अभिलिखित किया गया था ।

16. आरोप विरचित करने के संबंध में दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 17 में उपबंध किए गए हैं । उक्त उपबंधों का उद्देश्य स्पष्ट रूप से अभियुक्त को उसके विरुद्ध लगाए गए उन अभियोगों से अवगत कराना है जिनके आधार पर अभियोजन पक्ष उसे दोषसिद्ध करने की ईप्सा कर रहा है । आरोप विरचित करने से संबंधित उपबंधों का उद्देश्य यह है कि अभियुक्त अपनी प्रभावी रूप से प्रतिरक्षा करने की स्थिति में हो जाए । कोई अभियुक्त स्वयं की उचित रूप से तब प्रतिरक्षा कर सकता है बशर्ते उसे वास्तव में विचारण आरंभ होने से पूर्व उसके विरुद्ध किए गए अभिकथनों की प्रकृति के बारे में स्पष्ट रूप से सूचित किया जाए । यही कारण है दंड प्रक्रिया संहिता में इस बाबत विस्तृत उपबंध हैं । धारा 212 की उपधारा (1) हमारे विचार के लिए तात्विक है, जो निम्नलिखित है :–

> "**212. समय, स्थान और व्यक्ति के बारे में विशिष्टियां** – (1) अभिकथित अपराध के समय और स्थान के बारे में और जिस व्यक्ति के (यदि कोई हो) विरुद्ध अथवा जिस वस्तु के (यदि कोई हो) विषय में वह अपराध किया गया, उस व्यक्ति या वस्तु के बारे में ऐसी विशिष्टियां जैसी अभियुक्त को उस बात की जिसका उस पर आरोप है, सूचना देने के लिए उचित रूप से पर्याप्त हैं, आरोप में अंतर्विष्ट होंगी ।"

इस मामले के लिए जो अधिक महत्वपूर्ण है वह धारा 213 है, जो

निम्नलिखित है :–

> "**213. कब अपराध किए जाने की रीति कथित की जानी चाहिए –** जब मामला इस प्रकार का है कि धारा 211 और 212 में वर्णित विशिष्टियां अभियुक्त को उस बात की, जिसका उस पर आरोप है, पर्याप्त सूचना नहीं देती तब उस रीति की, जिसमें अभिकथित अपराध किया गया, ऐसी विशिष्टियां भी, जैसी उस प्रयोजन के लिए पर्याप्त हैं, आरोप में अंतर्विष्ट होंगी ।"

17. अपराध करने की रीति का ब्यौरा देने की बात पर जोर दिया गया है । जब तक दांडिक कानून की विनिर्दिष्ट धाराओं तथा अभिकथित अपराध कारित करने के समय और स्थान जैसी विशिष्टियों को आरोप में सम्मिलित नहीं किया जाता है, अभियुक्त उचित रूप से अपनी प्रतिरक्षा करने की स्थिति में नहीं होगा । यहां तक कि ये विशिष्टियां कई मामलों में अभियुक्त को उचित रूप से अपनी प्रतिरक्षा करने के लिए समर्थ बनाने हेतु पर्याप्त नहीं हो सकती हैं । यही कारण है कि धारा 213 में यह एक विनिर्दिष्ट अपेक्षा सम्मिलित है कि यदि धारा 211 और 212 में वर्णित विशिष्टियां अभियुक्त को उस बात की पर्याप्त सूचना नहीं देती, जिसका उस पर आरोप है, तब उस रीति की ऐसी विशिष्टियां भी, जैसी उस प्रयोजन के लिए पर्याप्त हैं, आरोप में अंतर्विष्ट होंगी, जिसमें अभिकथित अपराध किया गया था । धारा 213 के दृष्टांत (ड.) में यह उपबंधित है कि जब आरोप में यह अभिकथन अंतर्विष्ट है कि 'क' पर कथित समय पर और कथित स्थान में 'ख' की हत्या करने का अभियोग है, तब यह आवश्यक नहीं है कि आरोप में वह रीति कथित हो जिसमें 'क' ने 'ख' की हत्या की । इस मामले में विरचित आरोप पर विचार करने पर इसमें यह अभिकथित है कि वह अभियुक्त सं. 2 था जिसने अपनी पिस्तौल से गोलियां चलाकर मृतक हरपाल सिंह की हत्या की थी । यद्यपि अभियोजन का पक्षकथन, जैसा कि साक्ष्य से देखा जा सकता है, यह है कि अभियुक्त सं. 1, 3 और 4 ने अपने-अपने हाथों में लिए हुए धारदार आयुधों का प्रयोग करके हरपाल सिंह की हत्या की थी, तो भी अभियुक्त सं. 1, 3 और 4 के विरुद्ध यह अभिकथन करते हुए कोई आरोप विरचित नहीं किया गया है कि उन्होंने

हरपाल सिंह की हत्या की थी । क्योंकि अभियुक्त सं. 1, 3 और 4 के विरुद्ध हरपाल सिंह की हत्या करने का कोई आरोप विरचित नहीं किया गया है, इसलिए दृष्टांत (ड.) लागू नहीं होगा । अत: अभियुक्त सं. 1, 3 और 4 द्वारा हत्या का अपराध करने की रीति का उल्लेख करके धारा 213 के निबंधनों के अनुसार आरोप विरचित करना आवश्यक था ।

18. दंड प्रक्रिया संहिता में ऐसे दो उपबंध हैं जो आरोप विरचित करने में गलतियों या लोप के संबंध में है । उक्त उपबंध धारा 215 और 464 में हैं जो निम्नलिखित हैं :–

> "**215. गलतियों का प्रभाव** – अपराध के या उन विशिष्टियों के, जिनका आरोप में कथन होना अपेक्षित है, कथन करने में किसी गलती को और उस अपराध या उन विशिष्टियों के कथन करने में किसी लोप को मामले के किसी प्रक्रम में तब ही तात्विक माना जाएगा जब ऐसी गलती या लोप से अभियुक्त वास्तव में भ्रमित हुआ है और उसके कारण न्याय नहीं हो पाया है, अन्यथा नहीं ।
>
> **464. आरोप विरचित न करने या उसके अभाव या उसमें गलती का प्रभाव** – (1) किसी सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय का कोई निष्कर्ष, दंडादेश या आदेश केवल इस आधार पर कि कोई आरोप विरचित नहीं किया गया अथवा इस आधार पर कि आरोप में कोई गलती, लोप या अनियमितता थी, जिसके अंतर्गत आरोपों का कुसंयोजन भी है, उस दशा में भी अविधिमान्य समझा जाएगा जब अपील, पुष्टिकरण या पुनरीक्षण न्यायालय की राय में उसके कारण वस्तुत: न्याय नहीं हो पाया है ।
>
> (2) यदि अपील, पुष्टिकरण या पुनरीक्षण न्यायालय की यह राय है कि वस्तुत: न्याय नहीं हो पाया है तो वह –
>
> (क) आरोप विरचित न किए जाने की दशा में यह आदेश कर सकता है कि आरोप विरचित किया जाए और आरोप की विरचना के ठीक पश्चात् से विचारण पुन: प्रारंभ किया जाए ;

(ख) आरोप में किसी गलती, लोप या अनियमितता वाली दशा में यह निदेश दे सकता है कि किसी ऐसी रीति से, जिसे वह ठीक समझे, विरचित आरोप पर नया विचारण किया जाए :

परंतु यदि न्यायालय की राय यह है कि मामले के तथ्य ऐसे हैं कि साबित तथ्यों की बाबत अभियुक्त के विरुद्ध कोई विधिमान्य आरोप नहीं लगाया जा सकता तो वह दोषसिद्धि को अभिखंडित कर देगा ।"

19. धारा 215 में अधिकथित किया गया है कि कब उन विशिष्टियों में गलतियों को, जिनका आरोप में कथन होना अपेक्षित है, तात्विक समझा जा सकता है । इसमें यह अधिकथित किया गया है कि गलती को तब तक तात्विक नहीं कहा जा सकता जब तक अभियुक्त ऐसी गलती या लोप से भ्रमित न हुआ हो और ऐसी गलती या लोप के कारण न्याय नहीं हो पाया है । धारा 464 सक्षम न्यायालय के निष्कर्ष और दंडादेश पर आरोप विरचित करते समय की गई गलती या लोप के प्रभाव के संबंध में है । इस धारा में यह उपबंधित है कि न्यायालय के निष्कर्ष और दंडादेश को केवल आरोप विरचित करने में गलती के आधार पर या आरोप विरचित करने में लोप के आधार पर अविधिमान्य नहीं समझा जाएगा । निष्कर्ष और दंडादेश केवल तब अविधिमान्य होंगे यदि अपीली न्यायालय की राय में गलती या लोप के कारण न्याय नहीं हो पाया है ।

20. जब अपीली न्यायालय से यह विनिश्चय करने का आह्वान किया जाता है कि क्या कोई आरोप विरचित करने में लोप के कारण या आरोप में गलती के कारण कोई न्याय नहीं हो पाया है, तो न्यायालय सभी प्रदर्शित दस्तावेजों, अभिसाक्ष्यों और धारा 313 के अधीन अभिलिखित अभियुक्त के कथनों सहित विचारण के संपूर्ण अभिलेख की परीक्षा करने के लिए कर्तव्यबद्ध है ।

21. इस प्रक्रम पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभियुक्त की परीक्षा करने की आवश्यकता को निर्दिष्ट करना होगा ।

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 निम्नलिखित है :–

"**313. अभियुक्त की परीक्षा करने की शक्ति** – (1) प्रत्येक जांच या विचारण में, इस प्रयोजन से कि अभियुक्त अपने विरुद्ध साक्ष्य में प्रकट होने वाली किन्हीं परिस्थितियों का स्वयं स्पष्टीकरण कर सके, न्यायालय –

(क) किसी प्रक्रम में, अभियुक्त को पहले से चेतावनी दिए बिना उससे ऐसे प्रश्न कर सकता है जो न्यायालय आवश्यक समझे ;

(ख) अभियोजन के साक्षियों की परीक्षा किए जाने के पश्चात् और अभियुक्त से अपनी प्रतिरक्षा करने की अपेक्षा किए जाने के पूर्व उस मामले के बारे में उससे साधारणतया प्रश्न करेगा :

परंतु किसी समन-मामले में, जहां न्यायालय ने अभियुक्त को वैयक्तिक हाजिरी से अभिमुक्ति दे दी है, वहां वह खंड (ख) के अधीन उसकी परीक्षा से भी अभिमुक्ति दे सकता है ।

(2) जब अभियुक्त की उपधारा (1) के अधीन परीक्षा की जाती है तब उसे कोई शपथ नहीं दिलाई जाएगी ।

(3) अभियुक्त ऐसे प्रश्नों के उत्तर देने से इनकार करने से या उसके मिथ्या उत्तर देने से दंडनीय नहीं हो जाएगा ।

(4) अभियुक्त द्वारा दिए गए उत्तरों पर उस जांच या विचारण में विचार किया जा सकता है और किसी अन्य ऐसे अपराध की, जिसका उसके द्वारा किया जाना दर्शाने की उन उत्तरों की प्रवृत्ति हो, किसी अन्य जांच या विचारण में ऐसे उत्तरों को उसके पक्ष में या उसके विरुद्ध साक्ष्य के तौर पर रखा जा सकता है ।

(5) न्यायालय उन सुसंगत प्रश्नों को, जो अभियुक्त से पूछे जाने हैं, तैयार करने में लोक अभियोजक और प्रतिरक्षा पक्ष के

काउंसेल की सहायता ले सकता है और न्यायालय अभियुक्त द्वारा ऐसा लिखित कथन फाइल करने की अनुज्ञा दे सकता है जो इस धारा के पर्याप्त अनुपालन में हो ।"

विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित किए गए अभियुक्त सं. 1 से 4 के अलग-अलग कथनों में पूछे गए प्रश्न लगभग तद्रूप हैं । प्रश्न सं. 5 उनसे पूछा गया केवल ऐसा प्रश्न है जो हरपाल सिंह की मृत्यु के आरोप पर उनके विरुद्ध प्रस्तुत किए गए साक्ष्य के बारे में है । अभियुक्त सं. 3 से पूछा गया प्रश्न सं. 5 निम्न प्रकार से है :–

"प्रश्न सं. 5 – अभियोजन साक्ष्य में यह बात आई है कि अभियुक्त कालीचरण के उत्प्रेरित करने पर <u>अभियुक्त याद प्रकाश ने शिकायतकर्ता अतर सिंह और उसके परिवार के सदस्यों पर अपनी देसी पिस्तौल से उनकी हत्या करने के आशय से 4-5 गोलियां चलाईं, जो शिकायतकर्ता के चचेरे भाई हरपाल सिंह को लगी और उसकी घटनास्थल पर मृत्यु हो गई</u> । आपको इस बाबत क्या कहना है ?"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

22. अभियोजन पक्ष द्वारा न्यायालय के समक्ष साक्ष्य में कतई ऐसा कोई मामला नहीं बनाया गया था । अभियोजन साक्षियों (अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2) द्वारा अभिलेख पर लाई गई सामग्री इस आशय की है कि हरपाल सिंह की मृत्यु अभियुक्त सं. 1, 3 ओर 4 द्वारा धारदार आयुधों से उस पर किए गए आक्रमण के परिणामस्वरूप पहुंचीं क्षतियों के कारण हुई थी । अभियुक्तों के विरुद्ध अभिलेख पर लाई गई इन तात्विक परिस्थितियों को, जिनके आधार पर उनकी दोषसिद्धि की गई है, कभी भी अभियुक्तों को नहीं बताया गया था । जो अभियुक्तों को बताया गया था वह अभियोजन पक्ष द्वारा साक्ष्य में बनाया गया मामला नहीं था । धारा 313 के कथन में हरपाल सिंह के शव की मरणोत्तर परीक्षा के बारे में कोई प्रश्न नहीं पूछे गए हैं । साक्षियों को यह नहीं बताया गया था कि हरपाल सिंह की मृत्यु धारदार आयुधों द्वारा कारित क्षतियों के परिणामस्वरूप रक्तस्राव और सदमे के कारण

हुई थी । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन किसी अभियुक्त से प्रश्न पूछना एक कोरी औपचारिकता नहीं है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा की यह अपेक्षा है कि अभियुक्त को उसके विरुद्ध साक्ष्य में प्रकट होने वाली परिस्थितियों को स्पष्ट किया जाना चाहिए जिससे अभियुक्त स्पष्टीकरण दे सके । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभियुक्त से प्रश्न पूछने के पश्चात् वह प्रतिरक्षा साक्षियों की परीक्षा कराने के लिए बुलाने और अन्य साक्ष्य प्रस्तुत करने का हकदार है । यदि अभियुक्त को साक्ष्य में उसके विरुद्ध प्रकट होने वाली उन महत्वपूर्ण परिस्थितियों को स्पष्ट नहीं किया जाता है जिनके आधार पर उसकी दोषसिद्धि की ईप्सा की गई है, तो अभियुक्त अभिलेख पर उसके विरुद्ध लाई गई उक्त परिस्थितियों को स्पष्ट करने की स्थिति में नहीं होगा । वह स्वयं की उचित रूप से प्रतिरक्षा करने के लिए समर्थ नहीं होगा । **जयदेव** बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय के पैरा 21 में यह अभिनिर्धारित किया गया था :–

> "21. श्री एंथनी ने अपनी इस दलील के समर्थन में कि अपीलार्थी हरि सिंह के विरुद्ध सुसंगत बिंदु को रखने में असफलता से उच्च न्यायालय का अंतिम निष्कर्ष प्रभावित होगा, हाते सिंह भगत सिंह **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य [1951 एस. सी. सी. 1060 = ए. आई. आर. 1953 एस. सी. 468] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब लिया । उस मामले में, इस न्यायालय ने निस्संदेह इस तथ्य का उल्लेख किया था कि अभियुक्त को उस प्रत्येक तात्विक तथ्य को बताना महत्वपूर्ण था जिसको उसके विरुद्ध प्रयुक्त किया जाना आशयित है और उसे इसका स्पष्टीकरण देने का अवसर, यदि वह स्पष्टीकरण दे सकता है, दिया जाना चाहिए । किंतु इन मताभिव्यक्तियों को अवश्य इस न्यायालय द्वारा उस मामले में निकाले गए अन्य निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए पढ़ा जाना चाहिए । हमारा विचार है कि यह सुझाव देना गलत होगा कि इन मताभिव्यक्तियों का आशय एक साधारण और कठोर नियम

---

[1] [1963] 3 एस. सी. आर. 489.

अधिकथित करना है कि जहां कहीं यह पाया जाता है कि अभियुक्त व्यक्ति के विरुद्ध प्रयुक्त किए गए बिंदुओं में से कोई बिंदु उसे नहीं बताया गया है, तो इससे या तो विचारण दूषित हो जाता है या उसकी दोषसिद्धि दूषित हो जाती है । धारा 342 के अधीन अभियुक्त व्यक्ति की परीक्षा का आशय निस्संदेह उसके विरुद्ध साक्ष्य में प्रकट होने वाली किसी परिस्थिति का स्पष्टीकरण देने के लिए अवसर देना है । धारा 342 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए न्यायालय को साक्ष्य में प्रकट होने वाली सभी सुसंगत परिस्थितियों को अभियुक्त व्यक्ति को बताने में सावधानी बरतनी चाहिए । अभियुक्त को कुछेक साधारण और व्यापक प्रश्नों को प्रस्तुत करना पर्याप्त नहीं होगा क्योंकि ऐसी प्रक्रिया अपनाने से हो सकता है अभियुक्त को सभी सुसंगत परिस्थितियों को स्पष्ट करने का अवसर न मिल सके । दूसरी ओर, यह उचित और सही नहीं होगा कि न्यायालय अभियुक्त व्यक्ति को ऐसे विस्तृत पश्न प्रस्तुत करे जो उसकी प्रतिपरीक्षा करने की कोटि में आते हों । यह अवधारण करने के लिए कि क्या अभियुक्त की धारा 342 के अधीन उचित रूप से परीक्षा की गई है या नहीं, अंतिम परीक्षण यह जांच करने का होगा कि क्या उसे प्रस्तुत किए गए सभी प्रश्नों को ध्यान में रखते हुए वह अपने विरुद्ध अभियोजन के पक्षकथन के संबंध में जो कहना चाहता है उसे वह कहने का अवसर नहीं मिला था । यदि यह प्रतीत होता है कि अभियुक्त व्यक्ति की परीक्षा त्रुटिपूर्ण थी और तद्द्वारा उस पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था, तो निस्संदेह यह एक गंभीर खामी होगी । यह स्पष्ट है कि उस रीति के बारे में कोई साधारण नियम अधिकथित नहीं किया जा सकता जिसमें अभियुक्त व्यक्ति की धारा 342 के अधीन परीक्षा की जानी चाहिए । तथापि, मोटे तौर पर कहा जाए, तो सही प्रश्न यह प्रतीत होता है कि इतने संक्षिप्त प्रश्न पूछने का जनून जिससे कुछेक बहु-प्रयोजनात्मक साधारण प्रश्न पूछने तक संतोष हो जाए, धारा 342 की अपेक्षाओं से उतना असंगत है जितना कि संपूर्ण रूप से ऐसे असम्यक् विस्तृत और व्यापक संख्या में प्रश्न पूछने की उत्कंठा

होना जो अभियुक्त व्यक्ति की प्रतिपरीक्षा करने की कोटि में आते हों । इसके अतिरिक्त, प्रस्तुत मामले में, जैसा कि हमें पहले ही दर्शित किया है, दूरस्थ प्रश्न पूछने में असफलता वास्तव में अधिक तात्विक नहीं है ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

शरद बिरधीचंद सारदा बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के सुविख्यात विनिश्चय के पैरा 145 में यह अभिनिर्धारित किया गया था :–

"145. हमारे लिए इस बिंदु पर नजीरों पर नजीरें देना आवश्यक नहीं है क्योंकि यह प्रश्न अब इस न्यायालय के कई विनिश्चयों द्वारा स्थिर किया गया है । मामले की दृष्टि से, वे परिस्थितियां जो दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 313 के अधीन अपीलार्थी को उसकी परीक्षा में नहीं बताई गई थी, पूरी तरह से विचार से अपवर्जित करनी होंगी ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

23. अब इस मामले के तथ्यों पर आते हैं, न केवल इस अभिकथन के आधार पर कोई आरोप विरचित नहीं किया गया था कि हरपाल सिंह की मृत्यु अभियुक्तों द्वारा किए गए व्यक्तिगत हमलों के कारण और विशिष्ट रूप से अभियुक्त सं. 1, 2 और 4 द्वारा धारदार आयुधों का प्रयोग करने के कारण हुई थी, अपितु एक भ्रामक आरोप विरचित किया गया था कि हरपाल सिंह की मृत्यु अभियुक्त सं. 2 द्वारा अपने हाथ में ली हुई पिस्तौल से चलाई गई गोलियों से पहुंचीं क्षतियों के कारण हुई थी । इस बात की पूरी संभावना है कि अभियुक्त ऐसा आरोप विरचित करने और सही आरोप विरचित करने में लोप के कारण भ्रमित हुए थे । अधिक गंभीर बात यह है कि यद्यपि विचारण के दौरान बनाए गए अभियोजन के पक्षकथन से स्पष्ट रूप से यह उपदर्शित होता है कि हरपाल सिंह की मृत्यु किसी गोली से पहुंची क्षति के कारण नहीं हुई थी,

[1] [1985] 1 उम. नि. प. 995 = (1984) 4 एस. सी. सी. 116.

तो भी धारा 313 के अधीन सभी अभियुक्तों को जो परिस्थिति बताई गई थी वह यह थी कि हरपाल सिंह की मृत्यु अभियुक्त सं. 2 द्वारा एक देसी पिस्तौल से चलाई गई चार से पांच गोलियों के कारण हुई थी । वास्तव में, धारा 313 के अधीन अभियुक्तों के कथन में प्रश्न सं. 5 में स्पष्ट रूप से यह अभिलिखित है कि अभियुक्त सं. 2 द्वारा चलाई गई गोलियां हरपाल सिंह को लगी और उसकी घटनास्थल पर ही मृत्यु हो गई । जैसा कि मौखिक साक्ष्य, मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट और डाक्टर की परीक्षा से देखा जा सकता है, हरपाल सिंह को कोई गोली की क्षति नहीं पहुंची थी । फिर भी, उक्त अभिकथन को धारा 313 के अधीन परीक्षा में सभी अभियुक्तों को बताया गया था । इस प्रकार, न केवल विरचित किया गया आरोप भ्रामक था अपितु साक्ष्य में अभियुक्तों के विरुद्ध अभिलेख पर लाई गई इस अति तात्विक परिस्थिति को किसी भी अभियुक्त को नहीं बताया गया था कि हरपाल सिंह की मृत्यु अभियुक्त सं. 1, 3 और 4 द्वारा किए गए आक्रमण से कारित क्षतियों के कारण हुई थी । इस प्रकार, न केवल आरोप भ्रामक था अपितु अभियुक्तों को उस परिस्थिति को स्पष्ट करने का अवसर नहीं मिला था जिसमें अभिकथित रूप से हरपाल सिंह की हत्या हुई थी और जिसे विचारण के दौरान अभिलेख पर लाया गया था । अत: मामले के तथ्यों में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 213 के निबंधनों के अनुसार उचित आरोप विरचित करने में लोप के कारण और साक्ष्य में प्रकट होने वाली महत्वपूर्ण परिस्थितियों को धारा 313 के अधीन कथन में न बताने के कारण अभियुक्तों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था । मामले के तथ्यों में इस प्रतिकूल प्रभाव से न्याय नहीं हुआ था ।

24. अत: हमारा यह विचार है कि क्या मामले को उचित आरोप विरचित करने और धारा 313 के अधीन अभियुक्तों के अतिरिक्त कथन अभिलिखित करने के लिए प्रतिप्रेषित किया जा सकता है । किंतु घटना दिसंबर, 2000 की है । इसलिए अभियुक्तों के लिए यह अनुचित होगा यदि उन्हें उस घटना के बारे में जो 22 वर्ष से अधिक समय पहले घटित हुई थी, के बारे में साक्ष्य में उनके विरुद्ध प्रकट होने वाली परिस्थितियों का उत्तर देने के लिए बुलाया जाए । वास्तव में, ऐसी

प्रक्रिया से अभियुक्तों पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा ।

25. इन परिस्थितियों में, अभियुक्त सं. 1, 2 और 4 के विरुद्ध हरपाल सिंह की हत्या करने के आरोप को प्रमाणित नहीं किया जा सकता । अभियुक्त सं. 1, 2 और 4 को भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 307 के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया था । तथापि, धारा 149 इस मामले में लागू नहीं होगी । हम यह उल्लेख कर सकते हैं कि अभियुक्त सं. 1, 2 और 4 तारीख 19 अगस्त, 2019 से जेल में थे । इसलिए उन सभी ने तीन वर्ष और चार माह से अधिक का दंडादेश भुगत लिया था । अभियुक्त सं. 2 को आयुध अधिनियम की धारा 25 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दो वर्ष का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था, जो उसने पहले ही भुगत लिया है ।

26. अभियुक्त बंगाली ने कोई अपील फाइल नहीं की है । हम यहां यह उल्लेख कर सकते हैं अभियुक्त बंगाली को रानी की हत्या करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन धारा 149 की सहायता के बिना दोषसिद्ध किया गया था ।

27. अत: यह अपील सफल होती है । हम सेशन न्यायालय तथा उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णयों को उस सीमा तक अपास्त करते हैं जिस सीमा तक अभियुक्त सं. 1 कालीचरण, अभियुक्त सं. 2 याद प्रकाश और अभियुक्त सं. 4 श्रीमती शकुंतला देवी को दोषसिद्ध किया गया था । यदि उन्हें किसी अन्य अपराध के संबंध में निरुद्ध किया जाना अपेक्षित नहीं है तो उन्हें तुरंत स्वतंत्र किया जाएगा । जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, अभियुक्त सं. 3 दिवान सिंह को पहले ही तारीख 1 जुलाई, 2021 के आदेशाधीन दोषमुक्त कर दिया गया है ।

28. तद्नुसार, यह अपील मंजूर की जाती है ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

[2022] 4 उम. नि. प. 454

राजाराम

बनाम

मध्य प्रदेश राज्य और अन्य

[2022 की दांडिक अपील सं. 2311]

16 दिसंबर, 2022

न्यायमूर्ति एस. रविन्द्र भट और न्यायमूर्ति सुधांशु धुलिया

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) – धारा 32 [सपठित भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 498क] – मृत्युकालिक कथन – विपदग्रस्त-मृतका को जली हुई हालत में उसके पति (अपीलार्थी) द्वारा अस्पताल लाया जाना – मृतका द्वारा अपनी मृत्यु से पूर्व दो मृत्युकालिक कथन किया जाना – तहसीलदार द्वारा अभिलिखित किए गए पहले कथन में अपने पति को अभियुक्त के रूप में नामित न किया जाना किंतु पुलिस अधिकारी द्वारा अभिलिखित किए गए दूसरे मृत्युकालिक कथन में अन्य अभियुक्तों के साथ पति को भी नामित किया जाना – पति-अपीलार्थी को अन्य अभियुक्तों के साथ धारा 498क के अधीन दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – अपील में उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि की अभिपुष्टि किया जाना किंतु मृतका के दूसरे मृत्युकालिक कथन को त्यक्त किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा मृतका के दूसरे मृत्युकालिक कथन को त्यक्त कर दिए जाने और अपीलार्थी की दोषसिद्धि को संधार्य रखने के लिए कोई अन्य सामग्री न होने के कारण उसकी दोषसिद्धि को कायम नहीं रखा जा सकता ।

इस अपील के तथ्यों के अनुसार तारीख 23 अप्रैल, 2009 को 10.00 बजे पूर्वाह्न में अस्पताल से पुलिस थाने में एक सूचना प्राप्त हुई कि एक स्त्री को उसके पति (अपीलार्थी) द्वारा जली हुई हालत में लाया गया है । पुलिस के अनुरोध पर क्षतिग्रस्त का चिकित्सा विधिक प्रमाणपत्र (एमएलसी) जारी किया गया । डाक्टर द्वारा प्रमाणित करने पर नायब तहसीलदार द्वारा उसका मृत्युकालिक कथन अभिलिखित

किया गया जिसमें उसने अपीलार्थी का अभियुक्त के रूप में नाम नहीं लिया । बाद में उसका दूसरा मृत्युकालिक कथन पुलिस अधिकारी द्वारा अभिलिखित किया गया जिसमें उसके द्वारा अपीलार्थी-पति को भी नामित किया गया । यह कथन अभिलिखित करने से पूर्व डाक्टर की यह राय अभिप्राप्त नहीं की गई थी क्या वह कथन करने के लिए सही मानसिक हालत में है या नहीं । क्षतिग्रस्त की तारीख 10 मई, 2009 को उसे पहुंचीं क्षतियों के कारण मृत्यु हो गई । पुलिस ने अन्वेषण पूर्ण करने के पश्चात् अपीलार्थियों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302, 307, 304ख, 498क/34 और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3 और 4 के अधीन आरोप पत्र फाइल किया । विचारण न्यायालय ने तारीख 30 सितंबर, 2009 के आदेश द्वारा शांतिबाई के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 498क, 302 या अनुकल्पत: धारा 304ख के अधीन आरोप विरचित किए जबकि शेष अभियुक्तों अर्थात् अपीलार्थी, रामदयाल, राम सिंह, कमलाबाई और सुशीला बाई **उर्फ** हल्की के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 498क, 304ख के अधीन आरोप विरचित किए । अभियुक्तों ने दोषी न होने का अभिवाक् किया । अभियोजन पक्ष ने 15 साक्षियों की परीक्षा की । सुशीला बाई **उर्फ** हल्की आरंभ में विचारण न्यायालय के समक्ष उपसंजात हुई और उसके पश्चात् अनुपस्थित रही; उसे फरार घोषित किया गया और गिरफ्तारी का एक शाश्वत् वारंट जारी किया गया । विचारण न्यायालय द्वारा शांतिबाई को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए और अन्य अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया । अपीलार्थी और अन्य अभियुक्तों ने अपनी दोषसिद्धि और दंडादेश को उच्च न्यायालय में चुनौती दी । उच्च न्यायालय द्वारा मृतका के दूसरे मृत्युकालिक कथन को सुरक्षित न समझते हुए त्यक्त कर दिया किंतु पहले कथन के आधार पर उनकी दोषसिद्धि की अभिपुष्टि करते हुए अपीलों को नामंजूर कर दिया । परिणामत:, अपीलार्थी की भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन दोषसिद्धि और दंडादेश की अभिपुष्टि की गई । अपीलार्थी द्वारा व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – किसी दांडिक विचारण के दौरान प्रस्तुत किए गए, विशेष रूप से जहां मृतका जलने का शिकार हुई है और दाह क्षतियों के कारण उसकी मृत्यु हो गई है और मृत्यु से पूर्व एक से अधिक कथन किए गए हैं, वहां इस न्यायालय के विनिश्चय विशेष रूप से लक्ष्मण वाले मामले में के विनिश्चय द्वारा और अनेक मृत्युकालिक कथनों से संबंधित विनिश्चयों द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों में यह उपदर्शित किया गया है कि विश्वसनीयता की कसौटी अभिलेख पर के संपूर्ण तथ्यों को ध्यान में रखते हुए अपनाई जानी चाहिए । इस न्यायालय ने यह पाया है कि प्रस्तुत मामला ऐसा है जहां उच्च न्यायालय द्वारा दूसरे मृत्युकालिक कथन को पूर्णतया नामंजूर कर दिया गया था । इन परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय द्वारा अवलंब लिए गए साक्ष्य के संचयी महत्व की यह अभिनिश्चित करने के लिए परीक्षा किए जाने की आवश्यकता है कि क्या अपीलार्थी उस अपराध अर्थात् भारतीय दंड संहिता की धारा 498क का दोषी है जिसके लिए उसे दोषसिद्ध किया गया है । केवल दूसरा मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श पी-26 ही ऐसा साक्ष्य है जिसमें अन्य अभियुक्तों के साथ-साथ अपीलार्थी को भी मृतका के साथ क्रूरता करने के अपराधी के रूप में नामित किया गया है । दोनों निचले न्यायालयों ने यह पाया था कि पहला मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श पी-11 में अपीलार्थी को नामित नहीं किया गया है बल्कि वह अपने पिता के साथ मृतका को नाजुक रूप से क्षतिग्रस्त हालत में अस्पताल लेकर गया था । निस्संदेह, पहले मृत्युकालिक कथन का केंद्रबिंदु मृतका पर मिट्टी का तेल छिड़कने और आग लगा देने की घटना है । दूसरे मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श पी-26 में ही क्रूरता करने के कृत्यों का विस्तार से उल्लेख किया गया है । अभियुक्त के विरूद्ध केवल यही अपराध में आलिप्त करने वाला साक्ष्य है । जहां तक न्यायालय द्वारा विचार की गई रिपोर्ट में वस्तुओं की बरामदगी और उनसे मिट्टी के तेल की गंद आने का संबंध है, वे मृतका को आग लगाने की घटना से संबंधित परिस्थितियां हैं । उनसे अपीलार्थी के विरूद्ध धारा 498क के अधीन अभियोजन का पक्षकथन अग्रसर नहीं होता है । उपरोक्त परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, विशेष रूप से इस तथ्य को कि अपीलार्थी के विरूद्ध एकमात्र साक्ष्य अर्थात् प्रदर्श पी-26 पर उच्च न्यायालय द्वारा

विश्वास नहीं किया गया था, दोषसिद्धि को कायम रखने के लिए कोई अन्य सामग्री नहीं है । इन कारणों से, आक्षेपित निर्णय और अपीलार्थी की दोषसिद्धि तथा दंडादेश को तद्द्वारा अपास्त किया जाता है । (पैरा 19, 20 और 21)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2019]	(2019) 8 एस. सी. सी. 779 : **जगबीर सिंह** बनाम **राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली राज्य** ;	16
[2010]	[2010] 9 एस. सी. आर. 705 : **लखन** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	15
[2002]	[2002] 1 सप्ली. एस. सी. आर. 697 : **लक्ष्मण** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ।	14

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2022 की दांडिक अपील सं. 2311.

2011 की दांडिक अपील सं. 148 में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, ग्वालियर के तारीख 18 अप्रैल, 2022 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री दिव्यकांत लाहोटी, (सुश्री) मधुर झावर, परीक्षित आहूजा, (सुश्री) विंध्या मेहरा और (सुश्री) प्रवीना बिष्ट

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री यशराज सिंह बुंदेला, गौरव चौधरी और गोपाल झा

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एस. रविन्द्र भट ने दिया ।

न्या. भट – विशेष इजाजत दी गई । अपीलार्थी (मृतका का पति) भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपनी दोषसिद्धि और उस पर अधिरोपित दंडादेश से व्यथित है । उस अपराध के संबंध में दोषसिद्धि और दंडादेश के विरुद्ध उसकी अपील को मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय द्वारा खारिज कर दिया गया था ।

2. अभियोजन का यह अभिकथन है कि तारीख 23 अप्रैल, 2009 को 10.00 बजे पूर्वाह्न में अस्पताल से सूचना प्राप्त हुई कि एक स्त्री को उसके पति (अपीलार्थी) द्वारा जली हुई हालत में लाया गया है । पुलिस थाना, अशोक नगर जिला अशोक नगर, गुना, मध्य प्रदेश के अनुरोध पर क्षतिग्रस्त पुष्पा का चिकित्सा विधिक प्रमाणपत्र (एमएलसी) जारी किया गया । उसका मृत्युकालिक कथन अभिलिखित किया गया ।

3. तारीख 23 अप्रैल, 2009 को कुछ जले हुए वस्त्र जिनमें से मिट्टी के तेल की गंध आ रही थी, एक चिमनी, एक टूट हुआ मंगलसूत्र, जिसमें से मिट्टी के तेल की गंध आ रही थी, "आनंद" की एक दियासलाई जिसमें 3-4 तिलियां थीं, अभिगृहीत किए गए । एक स्थल-नक्शा भी तैयार किया गया । साक्षियों के कथन अभिलिखित किए गए । क्षतिग्रस्त पुष्पा की जिला अस्पताल, गुना में तारीख 10 मई, 2009 को उसे पहुंचीं क्षतियों के कारण मृत्यु हो गई । मरणोत्तर परीक्षा की गई । अभिगृहीत की गई वस्तुएं न्यायालयिक प्रयोगशाला भेजी गईं । पुलिस ने अन्वेषण पूर्ण करने के पश्चात् अपीलार्थियों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302, 307, 304ख, 498क/34 और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3 और 4 के अधीन आरोप पत्र फाइल किया । विचारण न्यायालय ने तारीख 30 सितंबर, 2009 के आदेश द्वारा शांतिबाई के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 498क, 302 या अनुकल्पत: धारा 304ख के अधीन आरोप विरचित किए जबकि शेष अभियुक्तों अर्थात् अपीलार्थी, रामदयाल, राम सिंह, कमलाबाई और सुशीलाबाई **उर्फ** हल्की के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 498क, 304ख के अधीन आरोप विरचित किए । अभियुक्तों ने दोषी न होने का अभिवाक् किया । अभियोजन पक्ष ने 15 साक्षियों की परीक्षा की । सुशीला बाई **उर्फ** हल्की आरंभ में विचारण न्यायालय के समक्ष उपसंजात हुई और उसके पश्चात् अनुपस्थित रही; उसे फरार घोषित किया गया और गिरफ्तारी का एक शाश्वत् वारंट जारी किया गया । विचारण न्यायालय ने आक्षेपित निर्णयों द्वारा शांतिबाई को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए और अन्य अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया ।

4. अपीलार्थी और अन्य अभियुक्तों ने अपनी दोषसिद्धि और दंडादेश को चुनौती दी । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश द्वारा उनकी अपीलों को नामंजूर कर दिया । परिणामत:, अपीलार्थी की भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन दोषसिद्धि और दंडादेश की अभिपुष्टि की गई ।

5. अपीलार्थी राजाराम की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री दिव्यकांत लाहोटी ने दलील दी कि निचले न्यायालयों ने उसकी पत्नी, मृतका के मृत्युकालिक कथन का अवलंब लेकर गलती की थी । यह दलील दी गई कि जहां किसी व्यक्ति द्वारा अपनी मृत्यु के कारण के बारे में या उस संव्यवहार की किसी परिस्थिति के बारे में किया गया है जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, तो वहां वह कथन सुसंगत होगा । यह दलील दी गई कि इसलिए मृतका द्वारा अभियुक्त अर्थात् अपीलार्थी राजाराम के विरुद्ध अपने मृत्युकालिक कथन में किए गए अभिकथन अग्राह्य होंगे क्योंकि वे उस संव्यवहार की परिस्थिति के बारे में नहीं थे जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई थी ।

6. आगे यह दलील दी गई कि मृतका का भाई दशरथ रैकवार (अभि. सा. 1), मृतका का पिता फूलचंद्र (अभि. सा. 2), मृतका की बहिन मायाबाई (अभि. सा. 3) और मृतका के जीजा रामचरण (अभि. सा. 4) ने मृतका के साथ की गई क्रूरता के बारे में अभियोजन पक्ष के वृत्तांत का समर्थन नहीं किया था । इन परिस्थितियों में अपीलार्थी की दोषसिद्धि असंधार्य है ।

7. विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी कि निचले न्यायालयों ने तथाकथित मृत्युकालिक कथनों, प्रदर्श पी-11 और प्रदर्श पी-26 के बीच महत्वपूर्ण विरोधाभासों को महत्व न देकर गलती की थी । यह दलील दी गई कि अभि. सा. 7, जिसने प्रदर्श पी-11 अभिलिखित किया था और अभि. सा. 10, डाक्टर के परिसाक्ष्य इस दस्तावेज के समझे जा सकने वाले समय के विषय में असंगत और अनधिसंभाव्य हैं । इसके अतिरिक्त, पश्चात्वर्ती कथन प्रदर्श पी-26 संदेहास्पद है ; इसे स्वर्गीया पुष्पा के होश में होने के बारे में किसी डाक्टर से निर्बाधन प्राप्त करके अभिलिखित नहीं किया गया था । इस तथ्य पर विचार करते हुए कि

सभी तात्विक साक्षियों ने, जो दहेज की मांग के संबंध में अभिकथित क्रूरता करने का अभिकथन कर सकते थे, प्रदर्श पी-11 में अपीलार्थी को छोड़कर, नामित किया था इसलिए पश्चात्वर्ती मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श पी-26) में अपीलार्थी को सम्मिलित करने की बात अविश्वसनीय है । जब कथन अभिलिखित किया गया था उस समय डाक्टर की अनुपस्थिति और इस तथ्य से कि प्रथम मृत्युकालिक कथन में अपीलार्थी को नामित नहीं किया गया था किंतु दूसरे मृत्युकालिक कथन में नामित किया गया था, दोनों मृत्युकालिक कथन अविश्वसनीय हो जाते हैं । यह दलील दी गई कि उच्च न्यायालय ने वास्तव में दूसरे मृत्युकालिक कथन को त्यक्त कर दिया था ।

8. अपीलार्थी की ओर से अंत में यह दलील दी गई कि चूंकि अभियोजन पक्ष धारा 304ख के अधीन आरोप सिद्ध नहीं कर सका था इसलिए उसे मृत्युकालिक कथन के आधार पर दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता था क्योंकि साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 केवल उन परिस्थितियों से संबंधित कथनों को सुसंगत बनाती है जो कथन करने वाले व्यक्ति की मृत्यु के आस-पास की परिस्थितियों से संबंधित हों और प्रस्तुत मामले में मृत्युकालिक कथन प्रदर्श पी-11 में ही कहीं भी अपीलार्थी पर आरोप्य क्रूरता के किसी कृत्य का उल्लेख नहीं है ।

9. राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री यशराज सिंह बुंदेला द्वारा यह दलील दी गई कि निचले न्यायालयों के समवर्ती निष्कर्षों में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है और इस अपील में साक्ष्य का मूल्यांकन किया जाना अंतर्वलित है । ऐसा कुछ नहीं है जिसे इन निष्कर्षों के संबंध में अनुचित या अयुक्तियुक्त कहा जा सके जो कि प्रस्तुत किए गए साक्ष्य पर आधारित हैं, इसलिए इस न्यायालय को इन निष्कर्षों को उलटने या इनमें हस्तक्षेप करने के लिए अपनी विवेकाधिकार अधिकारिता का प्रयोग नहीं करना चाहिए ।

10. यह दलील दी गई कि यह तथ्य कि साक्षी पक्षद्रोही हो गए थे, निस्संदेह एक सुसंगत पहलू हो सकता है । तो भी, इस पर अन्य बातों के साथ विचार किया जाना चाहिए जिनमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रदर्श पी-26 के रूप में अभिलिखित किया गया मृत्युकालिक कथन है । काउंसेल

ने यह दलील दी कि पहले मृत्युकालिक कथन अर्थात् प्रदर्श पी-11 में अपराध के उन वास्तविक अपराधियों को सूचीबद्ध किया गया है, जो मृतका पर मिट्टी का तेल छिड़कने और उसे आग लगाने के लिए उत्तरदायी हैं, जबकि प्रदर्श पी-26 में उसके साथ क्रूरता करने का विवरण अंतर्विष्ट है चूंकि वह नि:शक्त थी और उसकी एक लड़की थी । ये बातें और जो लोग उसके साथ क्रूरता करते थे, उसे ताने मारते थे और दहेज की मांग करते थे, उन सभी को नामित किया गया था । उनमें अपीलार्थी, मृतका का पति भी सम्मलित था । पहले और दूसरे मृत्युकालिक कथनों के बीच निकट सामीप्य था । यह दलील दी गई कि कथन अभिलिखित करने के लिए किसी डाक्टर द्वारा मानसिक हालत या उपयुक्तता के बारे में किसी पृष्ठांकन के अभाव में या यह कि इसे एक पुलिस वाले द्वारा अभिलिखित किया गया था, इसके परिणामस्वरूप स्वत: इसे वर्जित नहीं किया जा सकता ।

विश्लेषण और निष्कर्ष

11. जैसा कि तथ्यात्मक चर्चा से समझा जा सकता है इस घटना में अर्थात् मृतका को आग लगाया जाना, उसे बाद में अस्पताल ले जाया जाना जहां उसके दो कथन अभिलिखित किए गए जिनमें से एक नायब तहसीलदार द्वारा जिसका सत्यापन डाक्टर द्वारा किया गया था और दूसरा पुलिस द्वारा अभिलिखित किया गया कथन इस मामले में विचार करने के लिए महत्वपूर्ण हैं । डाक्टर द्वारा विपदग्रस्त का परीक्षण किए जाने के पश्चात् अभि. सा. 7 द्वारा अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन प्रदर्श पी-11 में मृतका ने घटना अर्थात् उसे कैसे आग लगी थी, की परिवर्ती परिस्थितियों का वर्णन किया था:

> "मैं सवेरे बरामदे में बैठी थी । लड़ाई हो रही थी । मेरी दोनों बड़ी जेठानी लड़ रही थीं । वहां एक बड़ी अड़ी लगी थी और उनमें से एक ने मिट्टी का तेल छिड़क दिया । मेरी जेठानी किरण और शांति ने मेरे ऊपर मिट्टी का तेल छिड़क दिया और माचिस की तिल्ली से आग लगा दी । मेरी बड़ी सास वहीं खड़ी-खड़ी देख रही थी । मेरी सास घर पर नहीं थी । मेरा पति घर से बाहर था ।"

बाद में कथन अभिलिखित करने के दौरान उसने यह भी कहा :

"दो जेठ हैं, वास्तव में वे तीन जेठ हैं, दो सास हैं, तीसरी जेठानी का नाम सुशीला है । वह उस समय घर पर नहीं थी । वह मुझसे लड़ाई करती रहती थी और मेरी पिटाई करती रहती थी । मेरा छोटा बेटा 6-7 माह का है । सभी मेरी पिटाई करते रहते थे । सास भी मेरी पिटाई करती रहती थी । सभी तीनों जेठ मेरे साथ लड़ाई करते रहते थे । वे मुझे लंगड़ी कहते रहते थे । वे मुझ से दहेज की मांग करते रहते थे ।"

12. प्रदर्श पी-11 को अभिलिखित करना 10.35 बजे आरंभ हुआ था और 10.50 बजे समाप्त हुआ था । अपीलार्थी ने साक्षियों के कथन में विरोधाभास सिद्ध करने की ईप्सा की । तथापि, यह न्यायालय इस बात से प्रेरित नहीं है कि ऐसा विरोधाभास तात्विक है । साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि दूसरा कथन प्रदर्श पी-26 बाद में अभि. सा. 15, भारसाधक अधिकारी द्वारा अभिलिखित किया गया था । मृतका ने उन परिस्थितियों का उल्लेख करने के पश्चात् जिनमें घटना घटी थी और जो प्रदर्श पी-11 की अंतर्वस्तुओं के अनुरूप थीं, आगे यह कथन किया :

"..... मैं जलने लगी और बचाने के लिए चिल्लाई । फिर वे दोनों मुझे जलता हुआ छोड़कर भाग गईं, फिर डुकरा, मेरे बड़े ससुर ने आकर मुझे बचाया, उसकी मुझ पर पानी फेंकते समय आग लगने से मृत्यु हो गई । मैं पूरी तरह से जल गई थी । मेरे शरीर पर के सभी वस्त्र जल गए । मेरा चेहरा, वक्षस्थल, जांघ, टांगें, हाथ पूरी तरह से जल गए । मुझे बहुत अधिक पीड़ा हो रही है । फिर मेरा पति और पड़ोसी उपचार के लिए अशोक नगर लेकर आए । मैं उस समय बेहोश हो गई थी । मेरे सास-ससुर, पति, बड़े जेठ बीरन, हल्ले **उर्फ** रामसिंह, प्राणसिंह **उर्फ** रामदयाल, बड़ी जेठानी सुशीला, किरणबाई, शांतिबाई और सास कमलाबाई प्राय: दहेज के लिए ताने देकर दहेज की मांग के लिए मेरी पिटाई करते रहते थे । वे मुझे लंगड़ी कहकर चिढ़ाते रहते थे । वे दहेज में रुपए, मोटरसाइकिल की मांग करते रहते थे । इन लोगों ने पिछली रात्रि में भी मेरी पिटाई की थी जिसके बारे में मैंने फोन पर मेरी छोटी बहिन मायाबाई को बताया था और मेरी हालत खराब है ।"

13. साक्ष्य अधिनियम की धारा 32, जो इस अपील के प्रयोजन के लिए सुसंगत है, निम्नलिखित है :–

"32. वे दशाएं जिनमें उस व्यक्ति द्वारा सुसंगत तथ्य का किया गया कथन सुसंगत है, जो मर गया है या मिल नहीं सकता, इत्यादि – सुसंगत तथ्यों के लिखित या मौखिक कथन, जो ऐसे व्यक्ति द्वारा किए गए थे, जो मर गया है या मिल नहीं सकता है या जो साक्ष्य देने के लिए असमर्थ हो गया है या जिसकी हाजिरी इतने विलंब या व्यय के बिना उपाप्त नहीं की जा सकती, जितना मामले की परिस्थितियों में न्यायालय को अयुक्तियुक्ति प्रतीत होता है, निम्नलिखित दशाओं में स्वयमेव सुसंगत है –

(1) जबकि वह मृत्यु के कारण से संबंधित है – जबकि वह कथन किसी व्यक्ति द्वारा अपनी मृत्यु के कारण के बारे में या उस संव्यवहार की किसी परिस्थिति के बारे में किया गया है जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, तब उन मामलों में, जिनमें उस व्यक्ति की मृत्यु का कारण प्रश्नगत हो ।

ऐसे कथन सुसंगत हैं चाहे उस व्यक्ति को, जिसने उन्हें किया गया है, उस समय जब वे किए गए थे मृत्यु की प्रत्याशंका थी या नहीं और चाहे उस कार्यवाही की जिसमें उस व्यक्ति की मृत्यु का कारण प्रश्नगत होता है, प्रकृति कैसी ही क्यों न हो ।

(2) अथवा कारबार के अनुक्रम में किया गया है – जबकि वह कथन ऐसे व्यक्ति द्वारा कारबार के मामूली अनुक्रम में किया गया था तथा विशेषत: जबकि वह, उसके द्वारा कारबार के मामूली अनुक्रम में या वृत्तिक कर्तव्य के निर्वहन में रखी जाने वाली पुस्तकों में उसके द्वारा की गई किसी प्रविष्टि या किए गए ज्ञापन के रूप में है, अथवा उसके द्वारा धन, माल, प्रतिभूतियों या किसी भी किस्म की संपत्ति की प्राप्ति की लिखित या हस्ताक्षरित अभिस्वीकृति है, अथवा वाणिज्य में उपयोग में आने वाली उसके द्वारा लिखित या हस्ताक्षरित

किसी दस्तावेज के रूप में है अथवा किसी पत्र या अन्य दस्तावेज की तारीख के रूप में है, जो कि उसके द्वारा प्राय: दिनांकित, लिखित या हस्ताक्षरित की जाती थी ।

(3) अथवा करने वाले के हित के विरुद्ध है – जबकि वह कथन उसे करने वाले व्यक्ति के धन संबंधी या साम्पत्तिक हित के विरुद्ध है या जबकि, यदि वह सत्य हो, तो उसके कारण उस पर दांडिक अभियोजन या नुकसानी का वाद लाया जा सकता है या लाया जा सकता था ।

(4) अथवा लोक अधिकार या रूढ़ी के बारे में या साधारण हित के विषयों के बारे में कोई राय देता है – जबकि उस कथन में उपर्युक्त व्यक्ति की राय किसी ऐसे लोक अधिकार या रूढ़ी अथवा लोक या साधारण हित के विषय के अस्तित्व के बारे में है, जिसके अस्तित्व से, यदि वह अस्तित्व में होता तो उससे उस व्यक्ति का अवगत होना संभाव्य होता और जबकि ऐसा कथन ऐसे किसी अधिकार, रूढ़ी या बात के बारे में किसी संविवाद के उत्पन्न होने से पहले किया गया था ।

(5) अथवा नातेदारी के अस्तित्व से संबंधित है – जबकि वह कथन किन्हीं ऐसे व्यक्तियों के बीच (रक्त, विवाह या दत्तकग्रहण पर आधारित) किसी नातेदारी के अस्तित्व के संबंध में है, जिन व्यक्तियों की (रक्त विवाह या दत्तकग्रहण पर आधारित) नातेदारी के बारे में उस व्यक्ति के पास, जिसने वह कथन किया है, ज्ञान के विशेष साधन थे और जबकि वह कथन विवादग्रस्त प्रश्न के उठाए जाने से पूर्व किया गया था ।

(6) अथवा कौटुम्बिक बातों से संबंधित बिल या विलेख में किया गया है – जबकि वह कथन मृत व्यक्तियों के बीच (रक्त, विवाह या दत्तकग्रहण पर आधारित) किसी नातेदारी के अस्तित्व के संबंध में है और उस कुटुंब की बातों से, जिसका

ऐसा मृत व्यक्ति अंग था, संबंधित किसी बिल या विलेख में या किसी कुटुंब-वंशावली में या किसी समाधिप्रस्तर, कुटुंब-चित्र या अन्य चीज पर जिस पर ऐसे कथन प्राय: किए जाते हैं, किया गया है, और जबकि ऐसा कथन विवादग्रस्त प्रश्न के उठाए जाने से पूर्व किया गया था ।

(7) अथवा धारा 13, खंड (क) में वर्णित संव्यवहार से संबंधित दस्तावेज में किया गया है – जबकि वह कथन किसी ऐसे विलेख, बिल या अन्य दस्तावेज में अंतर्विष्ट है, जो किसी ऐसे संव्यवहार से संबंधित है जैसा धारा 13, खंड (क) में वर्णित है ।

(8) अथवा कई व्यक्तियों द्वारा किया गया है और प्रश्नगत बात से सुसंगत भावनाएं अभिव्यक्त करता है – जबकि वह कथन कई व्यक्तियों द्वारा किया गया था और प्रश्नगत बात से सुसंगत उनकी भावनाओं या धारणाओं को अभिव्यक्त करता है ।"

14. इस न्यायालय ने उपरोक्त उपबंध पर अनेक विनिश्चयों में विचार किया है और यह अभिनिर्धारित किया है कि किसी मृत्युकालिक कथन का महत्व और इसकी उपयोगिता परिवर्ती परिस्थितियों और उस विश्वसनीयता पर निर्भर करती है जो न्यायालय अपने समक्ष पेश किए गए साक्ष्य को ध्यान में रखते हुए इसे देना चाहता है । इसलिए क्या कथन अभिलिखित किए जाने से पूर्व चिकित्सीय प्रमाणन का होना, कौन इसे अभिलिखित करता है आदि आवश्यक है, यह सब बातें तथ्यों पर निर्भर करती हैं और न्यायालयों द्वारा कोई रूढ़िवादी दृष्टिकोण नहीं अपनाया जा सकता । **लक्ष्मण** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय की एक पांच सदस्यों की न्यायपीठ ने विधि में इस स्थिति को निम्नलिखित प्रकार से स्पष्ट किया था :–

"मृत्युकालिक कथन मौखिक या लिखित हो सकता है और संसूचना की कोई पर्याप्त पद्धति, चाहे शब्दों में हो या चिह्नों में या

[1] [2002] 1 सप्ली. एस. सी. आर. 697.

अन्यथा हो, पर्याप्त होगी बशर्ते संकेत सकारात्मक और निश्चित हो । तथापि, अधिकांश मामलों में मृत्यु होने से पूर्व ऐसे कथन मौखिक रूप से किए जाते हैं और किसी मजिस्ट्रेट या डाक्टर या पुलिस अधिकारी जैसे किसी व्यक्ति द्वारा लेखबद्ध किया जाता है । जब इसे अभिलिखित किया जाता है, किसी शपथ का होना आवश्यक नहीं है और न ही मजिस्ट्रेट की मौजूदगी नितांत रूप से आवश्यक है । यद्यपि प्रमाणिकता सुनिश्चित करने के लिए किसी मजिस्ट्रेट को, यदि मर रहे व्यक्ति का कथन अभिलिखित करने के लिए उपलब्ध हो, बुलाना एक प्रथा है ।

विधि की कोई अपेक्षा नहीं है कि कोई मृत्युकालिक कथन आवश्यक रूप से किसी मजिस्ट्रेट के समक्ष किया जाना चाहिए और जब ऐसा कथन किसी मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किया जाता है, तो ऐसे अभिलेखन के लिए कोई विनिर्दिष्ट कानूनी प्ररूप नहीं है । परिणामत: ऐसे कथन को क्या साक्ष्यिक महत्व दिया जाना चाहिए, आवश्यक रूप से प्रत्येक विशिष्ट मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है । आवश्यक यह है कि जो व्यक्ति मृत्युकालिक कथन अभिलिखित करता है उसका यह समाधान हो जाना चाहिए कि मृतक सही मानसिक हालत में है ।

जहां मजिस्ट्रेट के परिसाक्ष्य द्वारा यह साबित किया जाता है कि कथन करने वाला डाक्टर द्वारा परीक्षण किए बिना भी कथन करने के सही हालत में था, वहां ऐसे कथन के आधार पर कार्यवाही की जा सकती है बशर्ते न्यायालय अंततोगत्वा इसे स्वैच्छिक और सत्य होना अभिनिर्धारित करे । डाक्टर द्वारा प्रमाणन आवश्यक रूप से एक सतर्कता का नियम है और इसलिए स्वैच्छिक और सत्य प्रकृति के कथन को अन्यथा सिद्ध किया जा सकता है ।"

15. **लखन** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में के विनिश्चय में इस न्यायालय ने उस दृष्टिकोण पर विचार और उपदर्शित किया था जो वहां अपनाया जा सकता है जहां साक्ष्य में अनेक मृत्युकालिक कथन

[1] [2010] 9 एस. सी. आर. 705.

सम्मिलित हों जिनमें विसंगत तथ्य अंतर्विष्ट हो सकते हैं :–

> "उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, मृत्युकालिक कथन के मुद्दे पर विधि का यह सारांश दिया जा सकता है कि यदि न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि मृत्युकालिक कथन सत्य और विश्वसनीय है, किसी व्यक्ति द्वारा उस समय अभिलिखित किया गया है जब मृतक कथन करने के लिए शारीरिक और मानसिक रूप से ठीक था और इसे किसी सिखाने-पढ़ाने/दबाव/उत्प्रेरित करके नहीं किया गया है, तो यह दोषसिद्धि अभिलिखित करने के लिए एकमात्र आधार हो सकता है । ऐसी स्थिति में किसी संपुष्टि की आवश्यकता नहीं है । यदि अनेक मृत्युकालिक कथन हैं और उनके बीच विसंगतियां हैं, तो साधारणतया किसी मजिस्ट्रेट जैसे उच्चतर अधिकारी द्वारा अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन का अवलंब लिया जा सकता है, बशर्ते इसकी सत्यता के बारे में कोई संदेह पैदा करने वाली कोई परिस्थिति न हो । यदि ऐसी परिस्थितियां हैं जिनमें किया गया कथन स्वैच्छिक नहीं है और अन्यथा भी अन्य साक्ष्य द्वारा इसका समर्थन नहीं होता है, तो न्यायालय को हर मामले की अति सावधानीपूर्वक संवीक्षा करनी चाहिए और यह भी विनिश्चय करना चाहिए कि इन कथनों में से कौन सा अवलंब लेने योग्य है ।"

16. हाल ही में, **जगबीर सिंह** बनाम **राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने ऐसे कई पूर्ववर्ती विनिश्चयों का पुनर्विलोकन किया जिनमें अनेक मृत्युकालिक कथन अंतर्वलित थे और विधि का इन शब्दों में पुन: निश्चित किया :–

> "30. इन विनिश्चयों के सर्वेक्षण से यह दर्शित होता है कि निम्नलिखित सिद्धांत प्रतिपादित किए जा सकते हैं –
>
> क. किसी व्यक्ति की दोषसिद्धि एकमात्र रूप से किसी ऐसे मृत्युकालिक कथन के आधार पर की जा सकती है जिससे न्यायालय का विश्वास प्रेरित होता हो ;

---

[1] (2019) 8 एस. सी. सी. 779.

ख. यदि कथन के बारे में कुछ भी संदेहास्पद नहीं है, तो किसी संपुष्टि की आवश्यकता नहीं हो सकेगी ;

ग. निस्संदेह, न्यायालय का अवश्य यह समाधान हो जाना चाहिए कि कोई सिखाने-पढ़ाने या उत्प्रेरित करने की बात नहीं थी ;

घ. न्यायालय को अवश्य यह भी विश्लेषण करना चाहिए और निष्कर्ष पर पहुंचना चाहिए कि मृतक ने कथन करने में कल्पना का प्रयोग तो नहीं किया था । इस संबंध में, न्यायालय को मृत्युकालिक कथन की संपूर्ण भाषा पर विचार करना चाहिए ;

ङ. न्यायालय का उसके समक्ष, मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य के रूप में, सामग्री पर विचार करते हुए अवश्य यह समाधान हो जाना चाहिए कि वृत्तांत उस वास्तविकता और सच्चाई के संगत है जो सिद्ध किए गए तथ्यों से जुटाई जा सकती है ;

च. तथापि, ऐसे मामले हो सकते हैं जहां एक से अधिक मृत्युकालिक कथन हों । यदि एक से अधिक मृत्युकालिक कथन हैं, तो ये मृत्युकालिक कथन समग्र रूप से एक-दूसरे से मेल खाने चाहिएं । ऐसे मृत्युकालिक कथन हो सकते हैं जहां इन कथनों में विसंगतियां प्रकट हो सकती हैं । न्यायालय द्वारा फिर इन विसंगतियों की सीमा पर विचार किया जाना चाहिए । ये विसंगतियां सामंजस्यपूर्ण हो सकती हैं ।

छ. ऐसे मामलों में, जहां विसंगतियां किसी ब्यौरे या वर्णन के बारे में हों किंतु अभियुक्त के संबंध में अपराध में आलिप्त करने की प्रकृति की हैं, तो न्यायालय यह निष्कर्ष निकालने के लिए अभिलेख पर की सामग्री पर विचार करेगा कि कौन से मृत्युकालिक कथन का अवलंब लिया जाना चाहिए जब तक यह दर्शित न किया जाए कि वे अविश्वसनीय हैं ;

ज. तीसरे प्रवर्ग का मामला वह है जहां एक से अधिक

मृत्युकालिक कथन हैं और इन कथनों के बीच विसंगतियां असीम हैं और मृत्युकालिक कथन एक-दूसरे के विरुद्ध होने के कारण असामंजस्यपूर्ण हैं । किसी मृत्युकालिक कथन में हो सकता है अभियुक्त को कतई दोष न दिया गया हो और मृत्यु का कारण कोई दुर्भाग्यपूर्ण घटना बताई गई हो । इसके पश्चात् एक अन्य मृत्युकालिक कथन किया गया हो जो पहले किए गए मृत्युकालिक कथन से पूर्णत: भिन्न हो । वास्तव में, उस परिदृश्य में एक विसंगत मृत्युकालिक कथन होने का प्रश्न नहीं हो सकता अपितु प्रश्न यह हो सकता है कि जो मृत्युकालिक कथन पहले किया गया है वह उस मृत्युकालिक कथन से पूर्णतया विपरीत है । दो से अधिक मृत्युकालिक कथन भी हो सकते हैं ;

झ. तीसरे परिदृश्य में, न्यायालय का क्या कर्तव्य है ? क्या न्यायालय को किसी अन्य बात पर विचार किए बिना यह निष्कर्ष निकालना चाहिए कि पूरी तरह से विसंगति होने की बात को ध्यान में रखते हुए दूसरा और तीसरा मृत्युकालिक कथन, जिसका अभियोजन पक्ष द्वारा अवलंब लिया गया है, पूर्ववर्ती मृत्युकालिक कथन या मृत्युकालिक कथनों द्वारा ध्वस्त हो गया है या क्या न्यायालय का यह कर्तव्य है कि न केवल मृत्युकालिक कथनों पर सावधानीपूर्वक विचार करे अपितु न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत साक्ष्य के रूप में शेष सामग्री की भी परीक्षा करे और फिर यह निष्कर्ष निकाले कि अपराध में आलिप्त करने वाला मृत्युकालिक कथन अवलंब लिए जाने योग्य है ?"

17. उपरोक्त सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, उस मृत्युकालिक कथन के साक्ष्यिक महत्व पर विचार करना आवश्यक है, जिसका अपीलार्थी को दोषसिद्ध करने के लिए अभियोजन पक्ष द्वारा अवंलब लिया गया था ।

18. विचारण न्यायालय ने दो मृत्युकालिक कथनों (प्रदर्श पी-11 और प्रदर्श पी-26) के अतिरिक्त मिट्टी का तेल मौजूद होने, मृतका को

पहुंची दाह क्षतियों, वस्तुएं जैसे माचिस जिससे मिट्टी के तेल की गंद आ रही थी और एक टूटा हुआ मंगलसूत्र होने जैसी परिस्थितियों का अवलंब लिया था । मृतका के नातेदारों के परिसाक्ष्य ज्यादा मायने नहीं रखते क्योंकि उनमें से किसी ने भी अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन नहीं किया था । उच्च न्यायालय ने अपने आक्षेपित निर्णय में अभि. सा. 7, नायब तहसीलदार यश राय द्वारा अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श पी-11) का अवलंब लिया था । तथापि, उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि अभि. सा. 15, भारसाधक अधिकारी द्वारा अभिलिखित किए गए दूसरे मृत्युकालिक कथन का अवलंब नहीं लिया जा सकता । न्यायालय की यह राय थी कि यद्यपि अभि. सा. 15 के लिए डाक्टर से आरोग्य प्रमाणपत्र अभिप्राप्त करना आवश्यक नहीं था, तो भी मृत्युकालिक कथन में इस अंतिम पंक्ति को देखते हुए कि उसकी हालत खराब थी, पुलिस द्वारा अभिलिखित किए गए ऐसे कथन का अवलंब लेना सुरक्षित नहीं है । इस पहलू पर उच्च न्यायालय के निष्कर्ष निम्नलिखत हैं :–

> "39. अपीलार्थियों की ओर से काउंसेल द्वारा दी गई दलीलों पर विचार करने से पूर्व यह न्यायालय इस बारे में विचार करना चाहेगा कि क्या क्षतिग्रस्त पुष्पा का पुलिस को किया गया कथन, प्रदर्श पी-26 विश्वसनीय है या नहीं ?
>
> 40. जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, एस. के. चतुर्वेदी (अभि. सा. 15), जिसने क्षतिग्रस्त पुष्पा का पुलिस कथन अभिलिखित किया था, की अपीलार्थी सुशीला बाई **उर्फ** हल्की की पुन: गिरफ्तारी के पश्चात् परीक्षा नहीं की गई थी और क्योंकि एस. के. चतुर्वेदी (अभि. सा. 15) का साक्ष्य सुशीला बाई **उर्फ** हल्की की अनुपस्थिति में अभिलिखित किया गया था इसलिए उसके साक्ष्य को न तो अपीलार्थी सुशीला बाई **उर्फ** हल्की के पक्ष में और न हीं उसके विरुद्ध पढ़ा जा सकता है । इस प्रकार, अपीलार्थी सुशीला बाई **उर्फ** हल्की के विरुद्ध केवल एक मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श पी-11 है ।
>
> 41. एस. के. चतुर्वेदी (अभि. सा. 15) ने यह कथन किया था कि उसने क्षतिग्रस्त/मृतका पुष्पा सहित साक्षियों के कथन

अभिलिखित किए थे । यदि क्षतिग्रस्त/मृतका पुष्पा के पुलिस कथन पर विचार किया जाए तब कथन के अंत में यह उल्लेख किया है कि उसकी हालत बहुत खराब है । इसलिए यह स्पष्ट नहीं है कि क्या क्षतिग्रस्त/मृतका पुष्पा की मानसिक हालत ठीक थी या नहीं । अन्यथा भी, इस साक्षी ने यह स्पष्ट नहीं किया है कि किस तारीख को उसने क्षतिग्रस्त/मृतका पुष्पा का कथन अभिलिखित किया था । यह सही है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन पुलिस कथन अभिलिखित करते समय इस साक्षी के लिए डाक्टर से आरोग्य प्रमाणपत्र अभिप्राप्त करना आवश्यक नहीं था, किंतु उसके (मृतका) कथन की इस अंतिम पंक्ति को देखते हुए कि 'उसकी हालत बहुत खराब है', इस न्यायालय की यह सुविचारित राय है कि क्षतिग्रस्त/मृतका पुष्पा के पुलिस कथन, प्रदर्श पी-26 का अवलंब लेना सुरक्षित नहीं होगा ।

42. तद्नुसार, क्षतिग्रस्त/मृतका पुष्पा बाई के पुलिस कथन, प्रदर्श पी-26 को तद्द्वारा अविश्वसनीय ठहराया जाता है ।"

19. किसी दांडिक विचारण के दौरान प्रस्तुत किए गए, विशेष रूप से जहां मृतका जलने का शिकार हुई है और दाह क्षतियों के कारण उसकी मृत्यु हो गई है और मृत्यु से पूर्व एक से अधिक कथन किए गए हैं, वहां इस न्यायालय के विनिश्चय विशेष रूप से लक्ष्मण वाले मामले में के विनिश्चय द्वारा और अनेक मृत्युकालिक कथनों से संबंधित विनिश्चयों द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों में यह उपदर्शित किया गया है कि विश्वसनीयता की कसौटी अभिलेख पर के संपूर्ण तथ्यों को ध्यान में रखते हुए अपनाई जानी चाहिए ।

20. इस न्यायालय ने यह पाया है कि प्रस्तुत मामला ऐसा है जहां उच्च न्यायालय द्वारा दूसरे मृत्युकालिक कथन को पूर्णतया नामंजूर कर दिया गया था । इन परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय द्वारा अवलंब लिए गए साक्ष्य के संचयी महत्व की यह अभिनिश्चित करने के लिए परीक्षा किए जाने की आवश्यकता है कि क्या अपीलार्थी उस अपराध अर्थात् भारतीय दंड संहिता की धारा 498क का दोषी है जिसके लिए उसे दोषसिद्ध किया गया है । केवल दूसरा मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श पी-26

ही ऐसा साक्ष्य है जिसमें अन्य अभियुक्तों के साथ-साथ अपीलार्थी को भी मृतका के साथ क्रूरता करने के अपराधी के रूप में नामित किया गया है । दोनों निचले न्यायालयों ने यह पाया था कि पहला मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श पी-11 में अपीलार्थी को नामित नहीं किया गया है बल्कि वह अपने पिता के साथ मृतका को नाजुक रूप से क्षतिग्रस्त हालत में अस्पताल लेकर गया था । निस्संदेह, पहले मृत्युकालिक कथन का केंद्रबिंदु मृतका पर मिट्टी का तेल छिड़कने और आग लगा देने की घटना है । दूसरे मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श पी-26 में ही क्रूरता करने के कृत्यों का विस्तार से उल्लेख किया गया है । अभियुक्त के विरुद्ध केवल यही अपराध में आलिप्त करने वाला साक्ष्य है । जहां तक न्यायालय द्वारा विचार की गई रिपोर्ट में वस्तुओं की बरामदगी और उनसे मिट्टी के तेल की गंद आने का संबंध है, वे मृतका को आग लगाने की घटना से संबंधित परिस्थितियां हैं । उनसे अपीलार्थी के विरुद्ध धारा 498क के अधीन अभियोजन का पक्षकथन अग्रसर नहीं होता है ।

21. उपरोक्त परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, विशेष रूप से इस तथ्य को कि अपीलार्थी के विरुद्ध एकमात्र साक्ष्य अर्थात् प्रदर्श पी-26 पर उच्च न्यायालय द्वारा विश्वास नहीं किया गया था, दोषसिद्धि को कायम रखने के लिए कोई अन्य सामग्री नहीं है । इन कारणों से, आक्षेपित निर्णय और अपीलार्थी की दोषसिद्धि तथा दंडादेश को तद्द्वारा अपास्त किया जाता है । यह अपील किंतु खर्चे के बारे में कोई आदेश किए बिना मंजूर की जाती है ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

संसद् के अधिनियम

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986

(1986 का अधिनियम संख्यांक 29)

[23 मई, 1986]

पर्यावरण के संरक्षण और सुधार का और उनसे संबंधित विषयों का उपबंध करने के लिए अधिनियम

संयुक्त राष्ट्र के मानवीय पर्यावरण सम्मेलन में, जो जून, 1972 में स्टाकहोम में हुआ था और जिसमें भारत ने भाग लिया था, यह विनिश्चय किया गया था कि मानवीय पर्यावरण के संरक्षण और सुधार के लिए समुचित कदम उठाए जाएं ;

यह आवश्यक समझा गया है कि पूर्वोक्त निर्णयों को, जहां तक उनका संबंध पर्यावरण संरक्षण और सुधार से तथा मानवों, अन्य जीवित प्राणियों, पादपों और संपत्ति को होने वाले परिसंकट के निवारण से है, लागू किया जाए ;

भारत गणराज्य के सैंतीसवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :–

अध्याय 1

प्रारंभिक

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारंभ – (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 है ।

(2) इसका विस्तार सम्पूर्ण भारत पर है ।

(3) यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा, जो केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नियत करे और इस अधिनियम के भिन्न-भिन्न उपबंधों के लिए और भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के लिए भिन्न-भिन्न तारीखें नियत की जा सकेंगी ।

2. परिभाषाएं – इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, –

(क) "पर्यावरण" के अंतर्गत जल, वायु और भूमि हैं और वह अंतर-संबंध है जो जल, वायु और भूमि तथा मानवों, अन्य जीवित प्राणियों, पादपों और सूक्ष्मजीव और संपत्ति के बीच विद्यमान है ;

(ख) "पर्यावरण प्रदूषक" से ऐसा ठोस, द्रव या गैसीय पदार्थ अभिप्रेत है जो ऐसी सांद्रता में विद्यमान है जो पर्यावरण के लिए क्षतिकर हो सकता है या जिसका क्षतिकर होना संभाव्य है ;

(ग) "पर्यावरण प्रदूषण" से पर्यावरण में पर्यावरण प्रदूषकों का विद्यमान होना अभिप्रेत है ;

(घ) किसी पदार्थ के संबंध में, "हथालना" से ऐसे पदार्थ का विनिर्माण, प्रसंस्करण, अभिक्रियान्वयन, पैकेज, भंडारकरण, परिवहन, उपयोग, संग्रहण, विनाश, संपरिवर्तन, विक्रय के लिए प्रस्थापना, अंतरण या वैसी ही संक्रिया अभिप्रेत है ;

(ङ) "परिसंकटमय पदार्थ" से ऐसा पदार्थ या निर्मिति अभिप्रेत है जो अपने रासायनिक या भौतिक-रासायनिक गुणों के या हथालने के कारण मानवों, अन्य जीवित प्राणियों, पादपों, सूक्ष्मजीव, संपत्ति या पर्यावरण को अपहानि कारित कर सकती है ;

(च) किसी कारखाने या परिसर के संबंध में, "अधिष्ठाता" से कोई ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जिसका कारखाने या परिसर के कामकाज पर नियंत्रण है और किसी पदार्थ के संबंध में ऐसा व्यक्ति इसके अंतर्गत है जिसके कब्जे में वह पदार्थ भी है ;

(छ) "विहित" से इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है ।

अध्याय 2

केन्द्रीय सरकार की साधारण शक्तियां

3. केन्द्रीय सरकार की पर्यावरण के संरक्षण और सुधार के लिए उपाय करने की शक्ति – (1) इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते

हुए, केन्द्रीय सरकार को ऐसे सभी उपाय करने की शक्ति होगी जो वह पर्यावरण के संरक्षण और उसकी क्वालिटी में सुधार करने तथा पर्यावरण प्रदूषण के निवारण, नियंत्रण और उपशमन के लिए आवश्यक समझे ।

(2) विशिष्टतया और उपधारा (1) के उपबंधों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे उपायों के अंतर्गत निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के संबंध में उपाय हो सकेंगे, अर्थात् :–

(i) राज्य सरकारों, अधिकारियों और अन्य प्राधिकरणों की, –

(क) इस अधिनियम या इसके अधीन बनाए गए नियमों के अधीन ; या

(ख) इस अधिनियम के उद्देश्यों से संबंधित तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के अधीन,

कार्रवाइयों का समन्वय ;

(ii) पर्यावरण प्रदूषण के निवारण, नियंत्रण और उपशमन के लिए राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम की योजना बनाना और उसको निष्पादित करना ;

(iii) पर्यावरण के विभिन्न आयामों के संबंध में उसकी क्वालिटी के लिए मानक अधिकथित करना ;

(iv) विभिन्न स्रोतों से पर्यावरण प्रदूषकों के उत्सर्जन या निस्सारण के मानक अधिकथित करना :

परन्तु ऐसे स्रोतों से पर्यावरण प्रदूषकों के उत्सर्जन या निस्सारण की क्वालिटी या सम्मिश्रण को ध्यान में रखते हुए, भिन्न-भिन्न स्रोतों से उत्सर्जन या निस्सारण के लिए इस खंड के अधीन भिन्न-भिन्न मानक अधिकथित किए जा सकेंगे ;

(v) उन क्षेत्रों का निर्बन्धन जिनमें कोई उद्योग संक्रियाएं या प्रसंस्करण या किसी वर्ग के उद्योग, संक्रियाएं या प्रसंस्करण नहीं चलाए जाएंगे या कुछ रक्षोपायों के अधीन रहते हुए चलाए जाएंगे ;

(vi) ऐसी दुर्घटनाओं के निवारण के लिए प्रक्रिया और रक्षोपाय अधिकथित करना जिनसे पर्यावरण प्रदूषण हो सकता है और ऐसी दुर्घटनाओं के लिए उपचारी उपाय अधिकथित करना ;

(vii) परिसंकटमय पदार्थों को हथालने के लिए प्रक्रिया और रक्षोपाय अधिकथित करना ;

(viii) ऐसी विनिर्माण प्रक्रियाओं, सामग्री औऱ पदार्थों की परीक्षा करना जिनसे पर्यावरण प्रदूषण होने की संभावना है ;

(ix) पर्यावरण प्रदूषण की समस्याओं के संबंध में अन्वेषण और अनुसंधान करना और प्रायोजित करना ;

(x) किसी परिसर, संयंत्र, उपस्कर, मशीनरी, विनिर्माण या अन्य प्रक्रिया सामग्री या पदार्थों का निरीक्षण करना और ऐसे प्राधिकरणों, अधिकारियों या व्यक्तियों को, आदेश द्वारा, ऐसे निदेश देना जो वह पर्यावरण प्रदूषण के निवारण, नियंत्रण और उपशमन के लिए कार्यवाही करने के लिए आवश्यक समझे ;

(xi) ऐसे कृत्यों को कार्यान्वित करने के लिए पर्यावरण प्रयोग-शालाओं और संस्थाओं की स्थापना करना या उन्हें मान्यता देना, जो इस अधिनियम के अधीन ऐसी पर्यावरण प्रयोगशालाओं और संस्थाओं को सौंपे जाएं ;

(xii) पर्यावरण प्रदूषण से संबंधित विषयों की बाबत जानकारी एकत्र करना और उसका प्रसार करना ;

(xiii) पर्यावरण प्रदूषण के निवारण, नियंत्रण और उपशमन से संबंधित निर्देशिकाएं, संहिताएं या पथप्रदर्शिकाएं तैयार करना ;

(xiv) ऐसे अन्य विषय जो केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के उपबंधों का प्रभावपूर्ण कार्यान्वयन सुनिश्चित करने के प्रयोजन के लिए आवश्यक या समीचीन समझे ।

(3) यदि केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए ऐसा करना आवश्यक या समीचीन समझती है तो वह, राजपत्र में प्रकाशित

आदेश द्वारा, इस अधिनियम के अधीन केन्द्रीय सरकार को ऐसी शक्तियों और कृत्यों के (जिनके अंतर्गत धारा 5 के अधीन निदेश देने की शक्ति भी है) प्रयोग और निर्वहन के प्रयोजनों के लिए और उपधारा (2) में निर्दिष्ट ऐसे विषयों की बाबत उपाय करने के लिए जो आदेश में उल्लिखित किए जाएं, प्राधिकरण या प्राधिकरणों का ऐसे नाम या नामों से गठन कर सकेगी जो आदेश में विनिर्दिष्ट किए जाएं और केन्द्रीय सरकार के अधीक्षण और नियंत्रण तथा ऐसे आदेश के उपबंधों के अधीन रहते हुए, ऐसा प्राधिकरण या ऐसे प्राधिकरण ऐसी शक्तियों का प्रयोग या ऐसे कृत्यों का निर्वहन कर सकेंगे या ऐसे आदेश में इस प्रकार उल्लिखित उपाय ऐसे कर सकेंगे मानों ऐसा प्राधिकरण या ऐसे प्राधिकरण उन शक्तियों का प्रयोग या उन कृत्यों का निर्वहन करने या ऐसे उपाय करने के लिए इस अधिनियम द्वारा सशक्त किए गए हों ।

4. अधिकारियों की नियुक्ति तथा उनकी शक्तियां और कृत्य – (1) धारा 3 की उपधारा (3) के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, केन्द्रीय सरकार, इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए, ऐसे पदाभिधानों सहित ऐसे अधिकारियों की नियुक्ति कर सकेगी और उन्हें इस अधिनियम के अधीन ऐसी शक्तियां और कृत्य सौंप सकेगी जो वह ठीक समझे ।

(2) उपधारा (1) के अधीन नियुक्त अधिकारी, केन्द्रीय सरकार के या यदि उस सरकार द्वारा इस प्रकार निदेश दिया जाए तो, धारा 3 की उपधारा (3) के अधीन गठित प्राधिकरण या प्राधिकरणों, यदि कोई हों, के अथवा किसी अन्य प्राधिकरण या अधिकारी के भी साधारण नियंत्रण और निदेशन के अधीन होंगे ।

5. निदेश देने की शक्ति – केन्द्रीय सरकार, किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी, किन्तु इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, इस अधिनियम के अधीन अपनी शक्तियों के प्रयोग और अपने कृत्यों के निर्वहन में किसी व्यक्ति, अधिकारी या प्राधिकरण को निदेश दे सकेगी और ऐसा व्यक्ति, अधिकारी या प्राधिकरण ऐसे निदेशों का अनुपालन करने के लिए आबद्ध होगा ।

स्पष्टीकरण – शंकाओं को दूर करने के लिए यह घोषित किया जाता है कि इस धारा के अधीन निदेश देने की शक्ति के अंतर्गत, –

(क) किसी उद्योग, संक्रिया या प्रक्रिया को बन्द करने, उसका प्रतिषेध या विनियमन करने का निदेश देने की शक्ति है ; या

(ख) विद्युत या जल या किसी अन्य सेवा के प्रदाय को रोकने या विनियमन करने का निदेश देने की शक्ति है ।

[1][**5क. राष्ट्रीय हरित अधिकरण को अपील** – कोई व्यक्ति जो, राष्ट्रीय हरित अधिकरण अधिनियम, 2010 (2010 का 19) के प्रारंभ होने पर या उसके पश्चात् धारा 5 के अधीन जारी किन्हीं निदेशों से व्यथित है, वह राष्ट्रीय हरित अधिकरण अधिनियम, 2010 की धारा 3 के अधीन स्थापित राष्ट्रीय हरित अधिकरण को, उस अधिनियम के उपबंधों के अनुसार, अपील फाइल कर सकेगा ।]

6. पर्यावरण प्रदूषण का विनियमन करने के लिए नियम – (1) इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, धारा 3 में निर्दिष्ट सभी या किन्हीं विषयों की बाबत नियम बना सकेगी ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियमों में निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध किया जा सकेगा, अर्थात् :–

(क) विभिन्न क्षेत्रों और प्रयोजनों के लिए वायु, जल या मृदा की क्वालिटी के मानक ;

(ख) भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के लिए विभिन्न पर्यावरण प्रदूषकों की (जिनके अंतर्गत शोर भी है) सांद्रता की अधिकतम अनुज्ञेय सीमा ;

(ग) परिसंकटमय पदार्थों के हथालने के लिए प्रक्रिया और रक्षोपाय ;

---

[1] 2010 के अधिनियम सं. 19 की धारा 36 और अनुसूची 3 द्वारा अंत:स्थापित ।

(घ) भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में परिसंकटमय पदार्थों के हथालने पर प्रतिषेध और निर्बन्धन ;

(ङ) भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में प्रक्रिया और संक्रियाएं चलाने वाले उद्योगों के अवस्थान पर प्रतिषेध और निर्बन्धन ;

(च) ऐसी दुर्घटनाओं के निवारण के लिए जिससे पर्यावरण प्रदूषण हो सकता है और ऐसी दुर्घटनाओं के लिए उपचार उपायों का उपबंध करने के लिए प्रक्रिया और रक्षोपाय ।

अध्याय 3

पर्यावरण प्रदूषण का निवारण, नियंत्रण और उपशमन

7. उद्योग चलाने, संक्रिया, आदि करने वाले व्यक्तियों द्वारा मानकों से अधिक पर्यावरण प्रदूषकों का उत्सर्जन या निस्सारण न होने देना – कोई ऐसा व्यक्ति, जो कोई उद्योग चलाता है या कोई संक्रिया या प्रक्रिया करता है, ऐसे मानकों से अधिक जो विहित किए जाएं, किसी पर्यावरण प्रदूषक का निस्सारण या उत्सर्जन नहीं करेगा अथवा निस्सारण या उत्सर्जन करने की अनुज्ञा नहीं देगा ।

8. परिसंकटमय पदार्थों को हथालने वाले व्यक्तियों द्वारा प्रक्रिया संबंधी रक्षोपायों का पालन किया जाना – कोई व्यक्ति किसी परिसंकटमय पदार्थ को ऐसी प्रक्रिया के अनुसार और ऐसे रक्षोपायों का अनुपालन करने के पश्चात् ही, जो विहित किए जाएं, हथालेगा या हथालने देगा, अन्यथा नहीं ।

9. कुछ मामलों में प्राधिकरणों और अभिकरणों को जानकारी का दिया जाना – (1) जहां किसी दुर्घटना या अन्य अप्रत्याशित कार्य या घटना के कारण किसी पर्यावरण प्रदूषक का निस्सारण विहित मानकों से अधिक होता है या होने की आशंका है वहां ऐसे निस्सारण के लिए उत्तरदायी व्यक्ति और उस स्थान का, जहां ऐसा निस्सारण होता है या होने की आशंका है, भारसाधक व्यक्ति, ऐसे निस्सारण के परिणामस्वरूप हुए पर्यावरण प्रदूषण का निवारण करने या उसे कम करने के लिए आबद्ध होगा, और ऐसे प्राधिकरणों को या अभिकरणों को जो विहित किए जाएं, –

(क) ऐसी घटना के तथ्य की या ऐसी घटना होने की आशंका की जानकारी तुरन्त देगा ; और

(ख) यदि अपेक्षा की जाए तो, सभी सहायता देने के लिए आबद्ध होगा ।

(2) उपधारा (1) में निर्दिष्ट प्रकार की किसी घटना के तथ्य की या उसकी आशंका के संबंध में सूचना की प्राप्ति पर, चाहे ऐसी सूचना उस उपधारा के अधीन जानकारी द्वारा मिले या अन्यथा, उपधारा (1) में निर्दिष्ट प्राधिकरण या अभिकरण, यावत्साध्य शीघ्र, ऐसे उपचारी उपाय कराएंगे जो पर्यावरण प्रदूषण का निवारण करने या उसे कम करने के लिए आवश्यक हैं ।

(3) उपधारा (2) में निर्दिष्ट उपचारी उपाय करने के संबंध में किसी प्राधिकरण या अभिकरण द्वारा उपगत व्यय, यदि कोई हों, उस तारीख से जब व्ययों के लिए मांग की जाती है उस तारीख तक के लिए जब उनका संदाय कर दिया जाता है, ब्याज सहित (ऐसी उचित दर पर जो सरकार, आदेश द्वारा, नियत करे) ऐसे प्राधिकरण या अभिकरण द्वारा संबंधित व्यक्ति से भू-राजस्व की बकाया या लोक मांग के रूप में वसूल किए जा सकेंगे ।

10. प्रवेश और निरीक्षण की शक्तियां – (1) इस धारा के उपबंधों के अधीन रहते हुए, केन्द्रीय सरकार द्वारा इस निमित्त सशक्त किसी व्यक्ति को यह अधिकार होगा कि वह सभी युक्तियुक्त समयों पर ऐसी सहायता के साथ जो वह आवश्यक समझे किसी स्थान में निम्नलिखित प्रयोजन के लिए प्रवेश करे, अर्थात् :–

(क) उसे सौंपे गए केन्द्रीय सरकार के कृत्यों में से किसी का पालन करना ;

(ख) यह अवधारित करने के प्रयोजन के लिए कि क्या ऐसे किन्हीं कृत्यों का पालन किया जाना है और यदि हां तो किस रीति से किया जाना है या क्या इस अधिनियम या इसके अधीन बनाए गए नियमों के किन्हीं उपबंधों का या इस अधिनियम के अधीन

तामील की गई सूचना, निकाले गए आदेश, दिए गए निर्देश या अनुदत्त प्राधिकार का पालन किया जा रहा है या किया गया है ;

(ग) किसी उपस्कर, औद्योगिक संयंत्र, अभिलेख, रजिस्टर, दस्तावेज या किसी अन्य सारवान् पदार्थ की जांच या परीक्षा करने के प्रयोजन के लिए अथवा किसी ऐसे भवन की तलाशी लेने के लिए, जिसके संबंध में उसके पास यह विश्वास करने का कारण है कि उसके भीतर इस अधिनियम या इसके अधीन बनाए गए नियमों के अधीन कोई अपराध किया गया है या किया जा रहा है या किया जाने वाला है और ऐसे किसी उपस्कर, औद्योगिक संयंत्र, अभिलेख, रजिस्टर, दस्तावेज या अन्य सारवान् पदार्थ का उस दशा में अभिग्रहण करने के लिए, जब उसके पास यह विश्वास करने का कारण है कि उससे इस अधिनियम या इसके अधीन बनाए गए नियमों के अधीन दंडनीय किसी अपराध के किए जाने का साक्ष्य दिया जा सकेगा अथवा ऐसा अभिग्रहण पर्यावरण प्रदूषण का निवारण करने या उसे कम करने के लिए आवश्यक है ।

(2) प्रत्येक व्यक्ति जो कोई उद्योग चलाता है, कोई संक्रिया या प्रक्रिया करता है या कोई परिसंकटमय पदार्थ हथालता है, ऐसे व्यक्ति को सभी सहायता देने के लिए आबद्ध होगा, जिसे उपधारा (1) के अधीन केन्द्रीय सरकार ने उस उपधारा के अधीन कृत्यों को करने के लिए सशक्त किया है और यदि वह किसी युक्तियुक्त कारण या प्रतिहेतु के बिना ऐसा करने में असफल रहेगा तो वह इस अधिनियम के अधीन अपराध का दोषी होगा ।

(3) यदि कोई व्यक्ति उपधारा (1) के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा सशक्त किसी व्यक्ति को, उसके कृत्यों के निर्वहन में जानबूझकर विलम्ब करेगा या बाधा पहुंचाएगा तो वह इस अधिनियम के अधीन अपराध का दोषी होगा ।

(4) दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के उपबन्ध या जम्मू-कश्मीर राज्य या किसी ऐसे क्षेत्र में जिसमें वह संहिता प्रवृत्त नहीं है, उस राज्य या क्षेत्र में प्रवृत्त किसी तत्स्थानी विधि के उपबन्ध, जहां

तक हो सके, इस धारा के अधीन किसी तलाशी या अभिग्रहण को वैसे ही लागू होंगे जैसे वे, यथास्थिति, उक्त संहिता की धारा 94 के अधीन या उक्त विधि के तत्स्थानी उपबन्ध के अधीन जारी किए गए वारण्ट के प्राधिकार के अधीन की गई किसी तलाशी या अभिग्रहण को लागू होते हैं ।

11. नमूने लेने की शक्ति और उसके संबंध में अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया – (1) केन्द्रीय सरकार या उसके द्वारा इस निमित्त सशक्त किसी अधिकारी को विश्लेषण के प्रयोजन के लिए किसी कारखाने, परिसर या अन्य स्थान से वायु, जल, मृदा या अन्य पदार्थ के नमूने ऐसी रीति से लेने की शक्ति होगी, जो विहित की जाए ।

(2) उपधारा (1) के अधीन लिए गए किसी नमूने के किसी विश्लेषण का परिणाम किसी विधिक कार्यवाही में साक्ष्य में तब तक ग्राह्य नहीं होगा जब तक उपधारा (3) और उपधारा (4) के उपबंधों का अनुपालन नहीं किया जाता है ।

(3) उपधारा (4) के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, उपधारा (1) के अधीन नमूना लेने वाला व्यक्ति –

(क) इस प्रकार विश्लेषण कराने के अपने आशय की सूचना की ऐसे प्ररूप में जो विहित किया जाए, अधिष्ठाता या उसके अभिकर्ता या उस स्थान के भारसाधक व्यक्ति पर तुरन्त तामील करेगा ;

(ख) अधिष्ठाता या उसके अभिकर्ता या व्यक्ति की उपस्थिति में विश्लेषण के लिए नमूना लेगा ;

(ग) नमूने को आधान या आधानों में रखवाएगा जिसे चिह्नित और सील बन्द किया जाएगा और उस पर नमूना लेने वाला व्यक्ति और अधिष्ठाता या उसका अभिकर्ता या व्यक्ति दोनों हस्ताक्षर करेंगे ;

(घ) आधान या आधानों को धारा 12 के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थापित या मान्यताप्राप्त प्रयोगशाला को अविलम्ब भेजेगा ।

(4) जब उपधारा (1) के अधीन विश्लेषण के लिए कोई नमूना लिया जाता है और नमूना लेने वाला व्यक्ति अधिष्ठाता या उसके अभिकर्ता या व्यक्ति पर उपधारा (3) के खंड (क) के अधीन सूचना की तामील करता है तब –

(क) ऐसे मामले में जहां अधिष्ठाता, उसका अभिकर्ता या व्यक्ति जानबूझकर अनुपस्थित रहता है वहां नमूना लेने वाला व्यक्ति विश्लेषण के लिए नमूना आधान या आधानों में रखवाने के लिए लेगा, जिसे चिह्नित और सील बन्द किया जाएगा और नमूना लेने वाला व्यक्ति भी उस पर हस्ताक्षर करेगा ; और

(ख) ऐसे मामले में जहां नमूना लिए जाने के समय अधिष्ठाता या उसका अभिकर्ता या व्यक्ति उपस्थित रहता है, किन्तु उपधारा (3) के खंड (ग) के अधीन अपेक्षित रूप में नमूने के चिह्नित और सील बन्द आधान या आधानों पर हस्ताक्षर करने से इनकार करता है वहां चिह्नित और सील बन्द आधान या आधानों पर नमूना लेने वाला व्यक्ति हस्ताक्षर करेगा,

और नमूना लेने वाला व्यक्ति आधान और आधानों को धारा 12 के अधीन स्थापित या मान्यताप्राप्त प्रयोगशाला को विश्लेषण के लिए अविलम्ब भेजेगा और ऐसा व्यक्ति धारा 13 के अधीन नियुक्त या मान्यताप्राप्त सरकारी विश्लेषक को अधिष्ठाता या उसके अभिकर्ता या व्यक्ति के, यथास्थिति, जानबूझकर अनुपस्थित रहने अथवा आधान या आधानों पर हस्ताक्षर करने से उसके इनकार करने के बारे में लिखित जानकारी देगा ।

12. पर्यावरण प्रयोगशालाएं – (1) केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, –

(क) एक या अधिक पर्यावरण प्रयोगशालाएं स्थापित कर सकेगी ;

(ख) इस अधिनियम के अधीन किसी पर्यावरण प्रयोगशाला को सौंपे गए कृत्य करने के लिए एक या अधिक प्रयोगशालाओं या संस्थाओं को पर्यावरण प्रयोगशालाओं के रूप में मान्यता दे सकेगी ।

(2) केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, निम्नलिखित को विनिर्दिष्ट करने के लिए नियम बना सकेगी, अर्थात् :–

(क) पर्यावरण प्रयोगशाला के कृत्य ;

(ख) विश्लेषण या परीक्षण के लिए वायु, जल, मृदा या अन्य पदार्थ के नमूने उक्त प्रयोगशाला को भेजने के लिए प्रक्रिया, उस पर प्रयोगशाला की रिपोर्ट का प्ररूप और ऐसी रिपोर्ट के लिए संदेय फीस ;

(ग) ऐसे अन्य विषय जो उस प्रयोगशाला को अपने कृत्य करने के लिए समर्थ बनाने के लिए आवश्यक या समीचीन हैं ।

13. सरकारी विश्लेषक – केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, ऐसे व्यक्तियों को, जिन्हें वह ठीक समझे और जिनके पास विहित अर्हताएं हैं, धारा 12 की उपधारा (1) के अधीन स्थापित या मान्यताप्राप्त किसी पर्यावरण प्रयोगशाला को विश्लेषण के लिए भेजे गए वायु, जल, मृदा या अन्य पदार्थ के नमूनों के विश्लेषण के प्रयोजन के लिए सरकारी विश्लेषक नियुक्त कर सकेगी या मान्यता दे सकेगी ।

14. सरकारी विश्लेषकों की रिपोर्टें – किसी ऐसी दस्तावेज का, जिसका किसी सरकारी विश्लेषक द्वारा हस्ताक्षरित रिपोर्ट होना तात्पर्यित है, इस अधिनियम के अधीन किसी कार्यवाही में उसमें कथित तथ्यों के साक्ष्य के रूप में उपयोग किया जा सकेगा ।

15. अधिनियमों तथा नियमों, आदेशों और निदेशों के उपबंधों के उल्लंघन के लिए शास्ति – (1) जो कोई इस अधिनियम के उपबन्धों या इसके अधीन बनाए गए नियमों या निकाले गए आदेशों या दिए गए निदेशों में से किसी का पालन करने में असफल रहेगा या उल्लंघन करेगा, वह ऐसी प्रत्येक असफलता या उल्लंघन के संबंध में कारावास से, जिसकी अवधि पांच वर्ष तक की हो सकेगी, या जुर्माने से, जो एक लाख रुपए तक का हो सकेगा, या दोनों से, और यदि ऐसे असफलता या उल्लंघन चालू रहता है तो अतिरिक्त जुर्माने से, जो ऐसी प्रथम असफलता या उल्लंघन के लिए दोषसिद्धि के पश्चात् ऐसे प्रत्येक दिन के

लिए जिसके दौरान असफलता या उल्लंघन चालू रहता है, पांच हजार रुपए तक का हो सकेगा, दण्डनीय होगा ।

(2) यदि उपधारा (1) में निर्दिष्ट असफलता या उल्लंघन दोषसिद्धि की तारीख के पश्चात्, एक वर्ष की अवधि से आगे भी चालू रहता है तो अपराधी, कारावास से, जिसकी अवधि सात वर्ष तक की हो सकेगी, दण्डनीय होगा ।

16. कंपनियों द्वारा अपराध – (1) जहां इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध किसी कंपनी द्वारा किया गया है वहां प्रत्येक व्यक्ति जो उस अपराध के किए जाने के समय उस कंपनी के कारबार के संचालन के लिए उस कंपनी का सीधे भारसाधक और उसके प्रति उत्तरदायी था और साथ ही वह कंपनी भी, ऐसे अपराध के दोषी समझे जाएंगे और तद्नुसार अपने विरुद्ध कार्यवाही किए जाने और दंडित किए जाने के भागी होंगे :

परन्तु इस उपधारा की कोई बात किसी ऐसे व्यक्ति को इस अधिनियम के अधीन उपबंधित किसी दण्ड का भागी नहीं बनाएगी, यदि वह यह साबित कर देता है कि अपराध उसकी जानकारी के बिना किया गया था या उसने ऐसे अपराध के किए जाने का निवारण करने के लिए सब सम्यक् तत्परता बरती थी ।

(2) उपधारा (1) में किसी बात के होते हुए भी, जहां इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध किसी कंपनी द्वारा किया गया है और यह साबित हो जाता है कि वह अपराध कंपनी के किसी निदेशक, प्रबंधक, सचिव या अन्य अधिकारी की सहमति या मौनानुकूलता से किया गया है या उस अपराध का किया जाना उसकी किसी उपेक्षा के कारण माना जा सकता है वहां ऐसा निदेशक, प्रबंधक, सचिव या अन्य अधिकारी भी उस अपराध का दोषी समझा जाएगा और तद्नुसार अपने विरुद्ध कार्यवाही किए जाने और दंडित किए जाने का भागी होगा ।

स्पष्टीकरण – इस धारा के प्रयोजनों के लिए, –

(क) "कंपनी" से कोई निगमित निकाय अभिप्रेत है और इसके अन्तर्गत फर्म या व्यष्टियों का अन्य संगम है ; तथा

(ख) फर्म के संबंध में, "निदेशक" से उस फर्म का भागीदार अभिप्रेत है ।

17. सरकारी विभागों द्वारा अपराध – (1) जहां इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध सरकार के किसी विभाग द्वारा किया गया है वहां विभागाध्यक्ष उस अपराध का दोषी समझा जाएगा और तद्नुसार अपने विरुद्ध कार्यवाही किए जाने और दंडित किए जाने का भागी होगा :

परन्तु इस धारा की कोई बात किसी विभागाध्यक्ष को दंड का भागी नहीं बनाएगी, यदि वह यह साबित कर देता है कि अपराध उसकी जानकारी के बिना किया गया था या उसने ऐसे अपराध के किए जाने का निवारण करने के लिए सब सम्यक् तत्परता बरती थी ।

(2) उपधारा (1) में किसी बात के होते हुए भी, जहां इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध किसी विभागाध्यक्ष द्वारा किया गया है और यह साबित हो जाता है कि वह अपराध विभागाध्यक्ष से भिन्न किसी अधिकारी की सहमति या मौनानुकूलता से किया गया है या उस अपराध का किया जाना उसकी किसी उपेक्षा के कारण माना जा सकता है वहां ऐसा अधिकारी भी उस अपराध का दोषी समझा जाएगा और तद्नुसार अपने विरुद्ध कार्यवाही किए जाने और दंडित किए जाने का भागी होगा ।

अध्याय 4

प्रकीर्ण

18. सद्भावपूर्वक की गई कार्रवाई के लिए संरक्षण – इस अधिनियम या इसके अधीन बनाए गए नियमों या निकाले गए आदेशों या दिए गए निदेशों के अनुसरण में सद्भावपूर्वक की गई या की जाने के लिए आशयित किसी बात के लिए कोई वाद, अभियोजन या अन्य विधिक कार्यवाही, सरकार या सरकार के किसी अधिकारी या अन्य कर्मचारी अथवा इस अधिनियम के अधीन गठित किसी प्राधिकरण या ऐसे प्राधिकरण के किसी सदस्य, अधिकारी या अन्य कर्मचारी के विरुद्ध नहीं होगी ।

19. अपराधों का संज्ञान – कोई न्यायालय इस अधिनियम के अधीन किसी अपराध का संज्ञान निम्नलिखित द्वारा किए गए परिवाद पर ही करेगा, अन्यथा नहीं, अर्थात् :–

(क) केन्द्रीय सरकार या उस सरकार द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत कोई प्राधिकरण या अधिकारी ; या

(ख) कोई ऐसा व्यक्ति, जिसने अभिकथित अपराध की और परिवाद करने के अपने आशय की, विहित रीति से, कम से कम साठ दिन की सूचना, केन्द्रीय सरकार या पूर्वोक्त रूप में प्राधिकृत प्राधिकरण या अधिकारी को दे दी है ।

20. जानकारी, रिपोर्टें या विवरणियां – केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के अधीन अपने कृत्यों के संबंध में समय-समय पर, किसी व्यक्ति, अधिकारी, राज्य सरकार या अन्य प्राधिकरण से अपने को या किसी विहित प्राधिकरण या अधिकारी से रिपोर्टें, विवरणियां, आंकड़े, लेखे और अन्य जानकारी देने की अपेक्षा कर सकेगी और ऐसा व्यक्ति, अधिकारी, राज्य सरकार या अन्य प्राधिकरण ऐसा करने के लिए आबद्ध होगा ।

21. धारा 3 के अधीन गठित प्राधिकरण के सदस्यों, अधिकारियों और कर्मचारियों का लोक सेवक होना – धारा 3 के अधीन गठित प्राधिकरण के, यदि कोई हो, सभी सदस्य और ऐसे प्राधिकरण के सभी अधिकारी और अन्य कर्मचारी जब वे इस अधिनियम के किसी उपबन्ध या इसके अधीन बनाए गए किसी नियम या निकाले गए किसी आदेश या दिए गए निदेश के अनुसरण में कार्य कर रहे हों या जब उसका ऐसा कार्य करना तात्पर्यित हो, भारतीय दण्ड संहिता (1860 का 45) की धारा 21 के अर्थ में लोक सेवक समझे जाएंगे ।

22. अधिकारिता का वर्जन – किसी सिविल न्यायालय को केन्द्रीय सरकार या किसी अन्य प्राधिकरण या अधिकारी द्वारा, इस अधिनियम द्वारा प्रदत्त किसी शक्ति के अनुसरण में या इसके अधीन कृत्यों के संबंध में की गई किसी बात, कार्रवाई या निकाले गए आदेश या दिए गए

निदेश के संबंध में कोई वाद या कार्यवाही ग्रहण करने की अधिकारिता नहीं होगी ।

23. प्रत्यायोजन करने की शक्ति – धारा 3 की उपधारा (3) के उपबन्धों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, ऐसी शर्तों और निर्बन्धनों के अधीन रहते हुए, जो अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किए जाएं, इस अधिनियम के अधीन अपनी ऐसी शक्तियों और कृत्यों को [उस शक्ति को छोड़कर जो धारा 3 की उपधारा (3) के अधीन किसी प्राधिकरण का गठन करने और धारा 25 के अधीन नियम बनाने के लिए है], जो वह आवश्यक या समीचीन समझे, किसी अधिकारी, राज्य सरकार या प्राधिकरण को प्रत्यायोजित कर सकेगी ।

24. अन्य विधियों का प्रभाव – (1) उपधारा (2) के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, इस अधिनियम और इसके अधीन बनाए गए नियमों या निकाले गए आदेशों के उपबन्ध, इस अधिनियम से भिन्न किसी अधिनियमिति में उससे असंगत किसी बात के होते हुए भी, प्रभावी होंगे ।

(2) जहां किसी कार्य या लोप से कोई ऐसा अपराध गठित होता है जो इस अधिनियम के अधीन और किसी अन्य अधिनियम के अधीन भी दण्डनीय है वहां ऐसे अपराध का दोषी पाया गया अपराधी अन्य अधिनियम के अधीन, न कि इस अधिनियम के अधीन, दण्डित किए जाने का भागी होगा ।

25. नियम बनाने की शक्ति – (1) केन्द्रीय सरकार, इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए नियम, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, बना सकेगी ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियमों में निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबन्ध किया जा सकेगा, अर्थात् :–

(क) वे मानक जिनसे अधिक पर्यावरण प्रदूषकों का धारा 7 के अधीन निस्सारण या उत्सर्जन नहीं किया जाएगा ;

(ख) वह प्रक्रिया जिसके अनुसार और वे रक्षोपाय जिनके अनुपालन में परिसंकटमय पदार्थों को धारा 8 के अधीन हथाला जाएगा या हथलवाया जाएगा ;

(ग) वे प्राधिकरण या अभिकरण जिनको विहित मानकों से अधिक पर्यावरण प्रदूषकों के निस्सारण होने की या उसके होने की आशंका के तथ्य की सूचना दी जाएगी और जिनको धारा 9 की उपधारा (1) के अधीन सभी सहायता दिया जाना आबद्धकर होगा ।

(घ) वह रीति जिससे विश्लेषण के प्रयोजनों के लिए वायु, जल, मृदा या अन्य पदार्थों के नमूने धारा 11 की उपधारा (1) के अधीन लिए जाएंगे ;

(ङ) वह प्ररूप जिसमें किसी नमूने का विश्लेषण कराने के आशय की सूचना धारा 11 की उपधारा (3) के खण्ड (क) के अधीन दी जाएगी ;

(च) पर्यावरण प्रयोगशालाओं के कृत्य ; विश्लेषण या परीक्षण के लिए वायु, जल, मृदा और अन्य पदार्थों के नमूने ऐसी प्रयोगशालाओं को भेजने के लिए प्रक्रिया ; प्रयोगशाला रिपोर्ट का प्ररूप ; ऐसी रिपोर्ट के लिए संदेय फीस और धारा 12 की उपधारा (2) के अधीन अपने कृत्य करने के लिए प्रयोगशालाओं को समर्थ बनाने के लिए अन्य विषय ;

(छ) धारा 13 के अधीन वायु, जल, मृदा या अन्य पदार्थों के नमूनों के विश्लेषण के प्रयोजन के लिए नियुक्त या मान्यताप्राप्त सरकारी विश्लेषक की अर्हताएं ;

(ज) वह रीति जिससे अपराध की और केन्द्रीय सरकार को परिवाद करने के आशय की सूचना धारा 19 के खण्ड (ख) के अधीन दी जाएगी ;

(झ) वह प्राधिकरण या अधिकारी जिसको रिपोर्टें, विवरणियां, आंकड़े, लेखे और अन्य जानकारी धारा 20 के अधीन दी जाएगी ;

(ञ) कोई अन्य विषय जो विहित किया जाना अपेक्षित है या किया जाए ।

26. इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों का संसद् के समक्ष रखा जाना – इस अधिनियम के अधीन बनाया गया प्रत्येक नियम, बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो, कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा । यह अवधि एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी । यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस नियम में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाएं तो तत्पश्चात् वह ऐसे परिवर्तित रूप में ही प्रभावी होगा । यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएं कि वह नियम नहीं बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात् वह निष्प्रभाव हो जाएगा । किन्तु नियम के ऐसे परिवर्तित या निष्प्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा ।

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रयार्थ उपलब्ध पाठ्य पुस्तकों की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम एवं प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पृष्ठ सं.	पुस्तक की मूल मुद्रित कीमत (रुपयों में)	विशेष छूट के पश्चात् पुस्तक की कीमत (रुपयों में)
1.	विधि शास्त्र – डा. शिवदत्त शर्मा – 2004	501	580	145
2.	निर्णय लेखन – न्या. भगवती प्रसाद बेरी – 2019	190	175	–
3.	भारत का सांविधानिक इतिहास - (103वां संविधान संशोधन तक) - श्री चन्द्रशेखर मिश्र	340	325	–
4.	भारतीय संविधान के प्रमुख तत्व - डा. प्रद्युम्न कुमार त्रिपाठी	906	750	–

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

1. निर्वाचन विधि निर्देशिका (भाग-1 तथा भाग-2)	नवीनतम संस्करण, 2024	कीमत रु. 2,500
2. भारत का संविधान (पाकेट एडीशन)	2024	कीमत रु. 325

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
Website : www.lawmin.nic.in
Email : am.vsp-molj@gov.in

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 16288/68

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं - **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका** और **उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः सिविल और दांडिक के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ₹ 2,100/-, ₹ 1,300/- और ₹ 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को ऑन लाइन **https://bharatkosh.gov.in/product/product** पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in